उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

बी.ए. कर्मकाण्ड (चतुर्थ सेमेस्टर)

BAKA(N)-221

(MINOR VOCATIONAL COURSE)

नवग्रह विधान

मानविकी विद्याशाखा

भारतीय कर्मकाण्ड विभाग

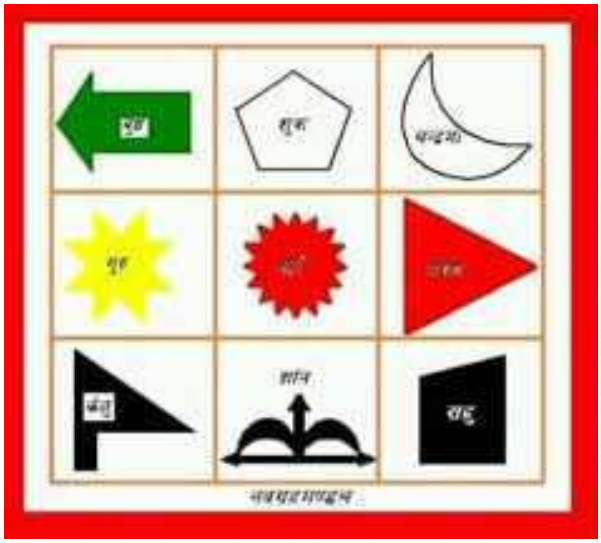

तीनपानी बाईपास रोड , ट्रॉन्सपोर्ट नगर के पीछे
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल - 263139
फोन नं .05946- 261122 , 261123
टॉल फ्री न0 18001804025
Fax No.- 05946-264232, E-mail- info@uou.ac.in
http://uou.ac.in

पाठयक्रम समिति

कुलपति - अध्यक्ष
उ0मु0वि0वि0, हल्द्वानी

प्रोफेसर रेनू प्रकाश – संयोजक
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उ0मु0वि0वि 0, हल्द्वानी

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, वैदिक ज्योतिष एवं भारतीय कर्मकाण्ड विभाग

प्रोफेसर रामराज उपाध्याय
पौरोहित्य विभाग
श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रोफेसर रामानुज उपाध्याय
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रोफेसर उपेन्द्र त्रिपाठी
वेद विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

पाठ्यक्रम संयोजन एव सम्पादन

डॉ. नन्दन कुमार तिवारी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, वैदिक ज्योतिष-भारतीय कर्मकाण्ड विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

इकाई लेखन	खण्ड	इकाई संख्या
डॉ. रंजीत दूबे असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**1/2**	**1,2/4**
डॉ. विजय रतूड़ी असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**1/2**	**4/1,2**
डॉ. प्रमोद जोशी असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**1/3**	**3/3,4**
डॉ. प्रभाकर पूरोहित असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), ज्योतिष विभाग उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**2/3**	**3/1,2**

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष : 2025 ISBN No. -

प्रकाशक: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी - 263139 **मुद्रक:**

नोट - : (इस पुस्तक के समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराइट संबंधी किसी भी मामले के लिये संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण नैनीताल स्थित उच्च न्यायालय अथवा हल्द्वानी सत्रीय न्यायालय में किया जायेगा।)

नवग्रह विधान **MINOR VOCATIONAL COURSE** **BAKA(N)-221**

बी.ए. चतुर्थ सेमेस्टर – (कर्मकाण्ड)

क्रम व इकाइयों के नाम		पृष्ठ संख्या
खण्ड 1	**नवग्रह परिचय एवं पूजन**	**2**
इकाई 1	नवग्रह परिचय	3-27
इकाई 2	नवग्रह पूजन विधि	28-42
इकाई 3	नवग्रह मण्डल निर्माण	43-53
इकाई 4	नवग्रहों का पूजन में महत्व	54-69
खण्ड 2	**नवग्रह**	**70**
इकाई 1	नवग्रहों की आकृति	71-91
इकाई 2	नवग्रहों का स्थान	92-112
इकाई 3	नवग्रहों का स्थान भेद	113-122
इकाई 4	नवग्रह हवन विधान	123-37
खण्ड 3	**अन्य विशेष**	**138**
इकाई 1	नवग्रह हवन हेतु समिधा	139-150
इकाई 2	पूजन में नवग्रहों का वैशिष्ट्य	151-169
इकाई 3	नवग्रहों का वैदिक एवं पौराणिक मन्त्र	170-184
इकाई 4	नवग्रह जप विधि	185-211

बी.ए. (चतुर्थ सेमेस्टर)

MINOR VOCATIONA। COURSE

नवग्रह विधान

BAKA(N)-221

खण्ड - 1
नवग्रह परिचय एवं पूजन

इकाई -1 नवग्रह परिचय

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 नवग्रह परिचय

1.3.1 सूर्य का परिचय

1.3.2 चन्द्र का परिचय

1.3.3 मंगल का परिचय

1.3.4 बुध का परिचय

1.3.5 गुरू का परिचय

1.3.6 शुक्र का परिचय

1.3.7 शनि का परिचय

1.3.8 राहु, ग्रह का परिचय

बोध प्रश्न

1.4 सारांशः

1.5 बोधप्रश्नों के उत्तर

1.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना -

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 221 के प्रथम खण्ड की प्रथम इकाई **नवग्रह परिचय** नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। प्रस्तुत इकाई में आप नवग्रहों को स्वरूप को विस्तृत रूप से अध्ययन करने जा रहे हैं।

ज्योतिष शास्त्र एक प्राचीन भारतीय विद्या है, जो ग्रहों और नक्षत्रों की गति, स्थिति एवं प्रभाव के आधार मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं की व्याख्या करती है। इसमें नवग्रहों- सूर्य, चंद्रमा, मंगल, बुध, गुरु (बृहस्पति), शुक्र, शनि, राहु और केतु - को विशेष महत्व दिया गया है। इन ग्रहों का प्रभाव मानव के स्वभाव, कर्म, स्वास्थ्य, संबंध और भविष्य पर पड़ता है। ज्योतिष के अनुसार, प्रत्येक ग्रह एक विशिष्ट ऊर्जा या गुण का प्रतिनिधित्व करता है। जैसे सूर्य आत्मा और नेतृत्व का प्रतीक है, तो चंद्रमा मन और भावनाओं से जुड़ा होता है। इसी प्रकार, शनि कर्म और न्याय का कारक माना जाता है, जबकि गुरु ज्ञान और आस्था का प्रतीक है। राहु और केतु छाया ग्रह हैं, परंतु इनका प्रभाव भी अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है।

इस इकाई में हम ज्योतिषीय दृष्टिकोण से और पुराण और अन्य ग्रन्थों में अनुसार ग्रहों के महत्व, उनके गुण-दोष, उनका स्वरूप को उलेखित किया है।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप-

- ❖ वैदिक परंपरा के अनुसार नवग्रह को जान सकेंगे।
- ❖ नवग्रह के स्वरूप को जान सकेंगे।
- ❖ नवग्रह के वैदिक मंत्र को जान सकेंगे।
- ❖ फलित ज्योतिष के अनुसार नवग्रहों के स्वरूप को जान सकेंगे।

1.3 नवग्रह परिचय

1.3.1 सूर्य का परिचय

"सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च" इस वेदवाक्य के माध्यम से भारतीय वाङ्मय में सूर्य के महत्व को स्वयंसिद्ध किया गया है। यही वह कारण है जिससे संसार प्रकट होता है, और इसलिए उसे प्रसूति के आधार पर सूर्य कहा जाता है। भारतीय वाङ्मय में सूर्य के अनेक पर्यायवाची नाम हैं, जैसे- दिनकर, दिवाकर, दिवानाथ, भानु, भास्कर, मित्र, अर्क, आदित्य, दिनेश, मार्तण्ड, विहंग, पतंग, रवि, प्रभाकर,

हेलि, तपन आदि। सूर्य सिद्धांत के अनुसार सृष्टि प्रक्रिया में यही परमब्रह्मस्वरूप जगत की उत्पत्ति का कारण है। वेदवाक्य के अनुसार सूर्य ब्रह्मा की नेत्रों से उत्पन्न हुआ है। पुराणों में सूर्य की उत्पत्ति के विषय में बताया गया है कि अचिंत्य नारायण पुरुष ने स्वयं अपने को बारह भागों में विभाजित कर कश्यप और अदिति से बारह आदित्यों को उत्पन्न किया, जिनसे संसार का पुनः निर्माण हुआ। इन्हें ही द्वादश आदित्य कहा जाता है। बृहत्संहिता भटोत्पल आकाश में स्थित ग्रह-नक्षत्रों और अन्य पिंडों तथा पृथ्वी पर मौजूद समस्त चर-अचर जीवों की उत्पत्ति का कारण भी सूर्य ही है। ब्रह्माण्ड पुराण में यह स्पष्ट रूप से बताया गया है, "**चन्द्रऋक्षग्रहाः सर्वे विज्ञेया सूर्यसम्भवा**" ब्रह्माण्डपुराण- 2/24/46। वर्तमान में आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी विविध अनुसंधानों के आधार पर इस तथ्य को प्रमाणित किया है कि जगत की रचना और सृष्टि की प्रक्रिया में सूर्य आधारभूत है।

ज्योतिष फलित ग्रन्थों में सूर्य का स्वरूप

पित्तास्थिसारोऽल्पकचश्च रक्तश्यामाकृतिः स्यान्मधुपिङ्गलाक्षः ।
कौसुम्भवासाश्चतुरस्रदेहः शूरः प्रचण्डः पृथुबाहुरर्कः ॥

सूर्य की प्रकृति पित्त-प्रधान है। वह पुष्ट अस्थियों वाला, अल्पकेशी, रक्ताभ श्यामल वर्ण, मधु (शहद) के समान पिङ्गल नेत्रों से युक्त है। यह रक्ताम्बर प्रिय है अर्थात् लाल वस्त्र धारण करता है । उसका शारीरिक गठन चौकोर है । वह शूरवीर, दीर्घ भुजाओं से युक्त अति प्रचण्ड है।

मधुपिङ्गलदृक् चतुरश्रतनुः पित्तप्रकृतिः सवितात्पकचः।

अर्थात् मधु के सदृश पिङ्गल नेत्र, चतुरस्र अर्थात् लम्बी- चौड़ी बराबर शरीर, पित्त प्रकृति और स्वल्प केश वाला सूर्य का स्वरूप है।

सूर्य का वैदिक मंत्र –

ॐ आकृष्णेन रजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥

गृहराशि	**सिंह**	**शरीर में धातु विशेष**	**अस्थि**
उच्चराशि	मेष	रस	कटु

नीच राशि	तुला	गुण	सत्व
मूलत्रिकोणराशि	सिंह	अधिदेवता	शिव
मित्रग्रह	चन्द्र,भौम,गुरु	प्रत्याधिदेवता	अग्नि
समग्रह	बुध	प्रकृति	पित्त
शत्रुग्रह	शनि,शुक्र	कारकभाव	1,9,10
वर्ण	रक्तमिश्रितश्याम	दशावर्ष	6
उदयप्रकार	पृष्ठोदयी	धातु	ताम्र
जाति	क्षत्रिय	लिङ्ग	पुल्लिंग
रत्न	माणिक्य		

1.3.2 चन्द्र का परिचय

नीलांबर में स्थित, दैदीप्यमान नक्षत्रों और प्रकाश के समूहों का स्वामी चंद्रमा अपनी अमृतमयी किरणों से पृथ्वी के समस्त चर-अचर प्राणियों को सिंचित कर अपने अनुपम, आकर्षक सौंदर्य से सभी को आनंदित करता है। वैदिक काल से ही इस विषय में कई कथाएँ वैदिक, संस्कृत साहित्य और लोक मान्यताओं में प्रचलित रही हैं। यह चंद्रमा "सुधाकर", "सोम", "चंद्रमा", "चंद्र", "कुमुदप्रिय", "रजनीपति", "शुभ्रभानु", "रोहिणीपति", "कलानिधि", "उडुपति", "शीतकर" आदि नामों से विख्यात है। इसके अतिरिक्त भी इसके कई नाम उल्लेखित हैं। इसकी उत्पत्ति के विषय में वेद और पुराणों में मतभेद पाया जाता है। ऋग्वेद संहिता के अनुसार, सूर्य और चंद्रमा दोनों की उत्पत्ति एक ही समय में क्रमशः ब्रह्मा के नेत्रों और मन से हुई। ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया है कि "**आदित्याद्वै चंद्रमा जायते**" ऐ.ब्रा. 40/5 अर्थात चंद्रमा सूर्य से उत्पन्न हुआ। कुछ पुराण भी इस मत का समर्थन करते हैं, जैसे – "**ऋक्षचंद्रग्रहाः सर्वे विज्ञेयाः सूर्यसम्भवाः**" वायुपुराण, 1/53/28, **"शीतरश्मिः समुत्पन्नः कृत्तिकासु निशाकरः"**। सिद्धांत शिरोमणि के शृंगोत्रत्य अधिकार के श्लोक 8-9 में भास्कराचार्य लिखते हैं, "यह चंद्रमा हरि, हर और ब्रह्मा द्वारा वरदान प्राप्त संतान के रूप में उनकी कृपा से उत्पन्न

हुआ। त्रिनेत्र (शिव) के जल के बिंदु के रूप में इसका अस्तित्व हुआ और पितामह (ब्रह्मा) ने इसे ग्रह रूप में आकाश में स्थापित किया।" आधुनिक विज्ञान की धारणा इससे भिन्न है। आधुनिक विचारों के अनुसार, प्राचीन काल में चंद्रमा पृथ्वी का ही एक हिस्सा था। "चंद्रगोल विमर्श" नामक ग्रंथ में प्रोफेसर रामचंद्र पांडे ने लिखा है कि अत्यंत प्राचीन समय में चंद्रमा पृथ्वी के धरातल का निष्क्रिय भाग था। सूर्य के बल और गति से यह पृथ्वी से अलग हो गया। आज चंद्रमा पृथ्वी का एकमात्र उपग्रह है, जिसकी कक्षा और धुरी का घूर्णन समय समान है। चंद्रमा पर वायुमंडल के अभाव के कारण जीवन और वनस्पति की संभावना कम है। आधुनिक समय में चंद्रमा पर जल की संभावना पर शोध किए जा रहे हैं, जबकि वेद और पुराणों में चंद्रमा पर जल की उपस्थिति पहले से ही वर्णित है। यह मान्यता है कि चंद्रमा जल का गोला है, जो सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है। पुराणों में ऋषियों के चंद्रलोक पर जाने का वर्णन प्राचीन समय में चंद्रमा संबंधी विस्तृत ज्ञान का संकेत देता है। चंद्रमा का स्वरूप देवतात्मक और ग्रहात्मक दोनों रूपों में देखा जाता है। पुराणों में चंद्रमा को पितरों का वासस्थल भी बताया गया है। भास्कराचार्य ने कहा है, **"विधूर्ध्वभागे पितरो वसन्तः"** भारतीय ज्योतिषशास्त्र के अनुसार चंद्रमा ब्रह्मांड के ग्रह-तारामंडल में पृथ्वी के सबसे निकटवर्ती ग्रह है, जो अन्य ग्रहों की तरह स्वतंत्र रूप से पृथ्वी के गोलाकार पथ में परिक्रमा करता है। इसका परिक्रमा पथ चंद्रविमंडल कहलाता है। चंद्रविमंडल का क्रांतिवृत्त से अधिकतम अंतर 270 अंश, कलाओं में परमशर नाम से जाना जाता है। अपनी कक्षा में परिक्रमा करते हुए चंद्रमा सवा दो दिनों में एक राशि पार करता है और 27.20 दिनों में अपना एक चक्र (पथ) पूरा करता है।

ज्योतिष फलित ग्रन्थों में चन्द्र का स्वरूप

स्थूलो युवा च स्थविरः कृशः सितः कान्तेक्षणश्चासितसूक्ष्ममूर्धजः।
रक्तैकसारो मृदुवाक् सितांशुको गौरः शशी वातकफात्मको मृदुः ॥

चन्द्रमा स्थूल शरीर, युवा और प्रौढ वय, कृशगात्र, सुन्दर आकर्षक नेत्रों और काले छोटे केशों से युक्त, रक्ताधिक्य, मृदुभाषी, श्वेत वस्त्रधारी, गौर वर्ण और वात-कफ प्रधान प्रकृति और अत्यन्त मृदु स्वभाव का है ॥

तनुवृत्ततनुर्बहुवातकफः प्राज्ञश्च शशी मृदुवाक् शुभदृक् ॥

दुबला-पतला और गोल शरीर अत्यधिक वात और कफ प्रकृति, बुद्धिमान, मनोहर नेत्र, कोमलवचन और आकर्षक चपल नेत्र वाला चन्द्रमा का स्वरूप कहा गया है।

चन्द्र का वैदिक मंत्र –

ॐ इमन्देवाऽअसपत्न सुवद्ध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममुष्य पुत्रममुष्यै व्विशऽएष वोऽमीराजा सोमो स्माकं ब्राह्मणाना राजा।

दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्।
नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुटभूषणम्॥

गृहराशि	कर्क	शरीर में धातु विशेष	रक्त
उच्चराशि	वृष	रस	लवण
नीच राशि	वृश्चिक	गुण	सत्व
मूलत्रिकोणराशि	वृष	अधिदेवता	उमा
मित्रग्रह	सूर्य,बुध	प्रत्याधिदेवता	जल
समग्रह	भौम,गुरु,शुक्र,शनि	प्रकृति	कफ
कारकभाव	चतुर्थ	ऋतु	वर्षा
वर्ण	श्वेत	दशावर्ष	10
उदयप्रकार	शीर्षोदयी	धातु	रौप्य
जाति	वैश्य	लिङ्ग	स्त्री
रत्न	मुक्ता	दृष्टि	सम

1.3.3 मंगल का परिचय

भारतीय वाङ्गमय में पृथ्वी)भौम (का महत्त्व अत्यंत प्राचीन काल से शास्त्रों में वर्णित किया गया है। यहाँ पृथ्वी को कई नामों से संबोधित किया जाता है, जैसे मंगल, धरासुत, आवनेव, महिज, धराज, कुज, कृतिसुत, क्रूरदृक, अङ्गारक, लोहिताङ्ग, आर, वक्र, कुमारे। पुराणों में पृथ्वी की उत्पत्ति के विषय में कई कथाएँ प्रचलित हैं, जिनमें से एक कथा ब्रह्मवैवर्त पुराण में वर्णित है।

उपेन्द्रबीजात् पृथिव्यान्तु मङ्गलः समजायत् ।
वसुन्धरायां बलवान् तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ।।

इस प्रकार यह कहा गया है कि वसुन्धरा और उपेन्द्र के संयोग से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई। मतान्तरेण, बृहत्संहितायां पुराणों के अनुसार, **"अथ भगवान् जगदादिसर्ग एव प्राक्प्रजापतिः सिसृक्षयेश्वरः करेण क्रोधात् स्वतेजसोऽभिनिष्यन्दमग्निं तेजस एव जुहाव । अथ तदग्नितोऽवनिमुपसृतमुर्व्यग्निसर्वतेजोभिः सम्भृतमुदतिष्ठद्यं प्रजापतिं प्राजापत्यं भौममिति मन्यन्ते।"** (बृहत्संहिता भटोत्पल, उपनयन अध्याय) जिसे भौम (पृथ्वी) कहा गया।

सृष्टि की प्रक्रिया में पञ्चभूतों की उत्पत्ति के बाद, तेजस तत्व के साथ भौम की उत्पत्ति हुई। कर्मकाण्डग्रंथों में भौम के जन्मस्थान को पृथ्वी के ऊज्जयिनी क्षेत्र के रूप में वर्णित किया गया है। भारतीय ज्योतिषशास्त्र के अनुसार, **"भूमेः पिण्डः शशाङ्कज्ञकविरविकुजेज्यार्किनक्षत्रकक्षा"** कहते हुए पृथ्वी का स्थान सूर्य और अन्य ग्रहों के संदर्भ में स्पष्ट किया गया है। आधुनिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो पृथ्वी का सबसे नजदीकी बड़ा ग्रह सूर्य है, जो आकाश में विभिन्न ग्रहों और नक्षत्रों से अलग दिखता है। भारतीय प्राचीन सिद्धांतों के अनुसार, पृथ्वी का मंडल एक कक्षावृत्त के रूप में भ्रमण करता है।

ज्योतिष फलित ग्रन्थों में मंगल का स्वरूप

मध्ये कृशः कुञ्चितदीप्तकेशः क्रूरेक्षणः पैत्तिक उग्रबुद्धिः ।
रक्ताम्बरो रक्ततनुर्महीजश्चण्डोऽत्युदारस्तरुणोऽतिमज्जः ॥

भौम के शरीर का मध्य भाग (कटि प्रदेश) अत्यन्त क्षीण है। उसके केश चमकीले और घुंघराले हैं। उसके नेत्रों से क्रूरता झलकती है तथा वह पित्त-प्रधान प्रकृति और उग्र बुद्धि से सम्पन्न है। उसका शरीर रक्त वर्ण है और वह रक्त वर्ण के ही वस्त्र धारण करता है। उसके शरीर में मज्जा की अधिकता है। उग्र स्वभाव का होने पर भी यह अति उदार स्वभाव का तरुण है।।

क्रूरदृक् तरूणमूर्तिरुदारः पैत्तिकः सुचपलः कृशमध्यः ।

अर्थात् वक्रदृष्टि, युवा, उदारचित, पित्तप्रकृति, चंचल प्रकृति एवं पतली कमर मंगल का स्वरूप शास्त्रज्ञों ने बताया है।

मंगल का वैदिक मंत्र -

ॐ अग्निम्मूर्द्धा दिवः ककुत्पत्तिः पृथिव्याऽअयम्। अपारेता सि जिन्त्वति।

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्।
कुमारं शक्तिहस्तं तं मङ्गलं प्रणमाम्यहम्॥

वर्णरश्मिप्रमाणतेजोयुक्त उदङ्मार्गगः

गृहराशि	सिंह	शरीर में धातु विशेष	अस्थि
उच्चराशि	मेष	रस	कटु
नीच राशि	तुला	गुण	सत्व
मूलत्रिकोणराशि	सिंह	अधिदेवता	शिव
मित्रग्रह	चन्द्र,भौम,गुरु	प्रत्याधिदेवता	अग्नि
समग्रह	बुध	प्रकृति	पित्त
शत्रुग्रह	शनि,शुक्र	ऋतु	ग्रीष्म
जाति	क्षत्रिय	रत्न	माणिक्य
लिङ्ग	पुल्लिंग	कारकभाव	1,9,10
वर्ण	रक्तमिश्रितश्याम	दशावर्ष	6
उदयप्रकार	पृष्ठोदयी	वस्त्र	स्थूल
		धातु	ताम्र

1.3.4 बुध का परिचय

भारतीय ज्योतिषशास्त्र के अनुसार, चन्द्रमा का एक पुत्र बुध है, जो पाँच ताराग्रहों में से एक ग्रह है। यह ग्रह पृथ्वी के केंद्रिक गणना के आधार पर, पृथ्वी की ऊपरी तृतीय कक्षा में अपनी स्थिति के कारण वृत्ताकार पथ में भ्रमण करता है। संस्कृत वाङ्गमय में इसे बुध, शशि, तारापुत्र, चन्द्रज, सोमपुत्र, ज्ञ, बोधन, विबुध, कुमार, सौम्य, रौहिणेय और राजपुत्र के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा, इस ग्रह को लोक में अन्य नाम भी प्राप्त होते हैं। जैसा कि दैवज्ञों के आभूषण में भी उल्लिखित है।

बुधश्चन्द्रसुतोऽथ ज्ञो विबुधो बोधनस्तथा।
कुमारो राजपुत्रश्च तारापुत्रस्तथैव च।।

पौराणिक मान्यतानुसार, चन्द्र ग्रह की उत्पत्ति चन्द्र से हुई मानी जाती है। शब्दकल्पद्रुम में विष्णुपुराण का उद्धरण है जिसमें बताया गया है कि नवग्रहों में से चौथा ग्रह बुध है, जो बृहस्पति की पत्नी तारागर्भ से उत्पन्न हुआ है। सूर्यसिद्धान्त के अनुसार, सृष्टि की प्रक्रिया में ब्रह्मा के आदेश से पंचभूतों का उत्पत्ति हुई, उसके बाद पृथ्वी तत्व से बुध ग्रह की उत्पत्ति हुई।

आकाश में यह ग्रह सोने के समान चमकीला, शुकवर्ण)तोते जैसा हरा रंग(, शस्यकमणि)धान के पौधे के समान(, और नीलवर्ण)नीले रंग (होता है, जिसकी आकृति हल्की और स्निग्ध)मुलायम (होती है। जब यह ग्रह दृश्य होता है, तब यह शुभ फल लाता है, लेकिन अन्यथा यह भयकारी हो सकता है। स्वोदय)सूर्योदय (के समय, यह कभी भी बिना उत्पत्ति के नहीं होता है। जैसे कि बृहत्संहिता में बुध ग्रह के चाल के बारे में कहा गया है।

नोत्पातपरित्यक्तः कदाचिदपि चन्द्रजो व्रजत्युदयम्।
जलदहनपवनभयकृद् धान्यार्घक्षयविवृद्धौ वा॥

स्वतंत्र रूप से सौम्य ग्रह बुध, मिथुन और कन्या राशियों के अधिपति होते हैं। शुभ ग्रहों से संबंधित होने पर यह शुभ फल प्रदान करता है, और पाप ग्रहों से संबंधित होने पर यह पाप फल देता है। इसके अतिरिक्त, इस विषय से संबंधित सभी विशेषताएँ निम्नलिखित सारणी के माध्यम से ज्ञात की जा सकती हैं।

ज्योतिष फलित ग्रन्थों में बुध का स्वरूप

दूर्वालताश्यामतनुस्त्रिधातुमिश्रः सिरावान्मधुरोक्तियुक्तः।

रक्तायताक्षो हरितांशुकस्त्वक्सारो बुधो हास्यरुचिः समाङ्गः ॥११॥

बुध दूवा के समान हरित श्याम वर्ण, वात-पित्त-कफ मिश्रित प्रकृति, शरीर पर उभरी हुई नसें, मृदु भाषी, दीर्घ रक्ताभ नयन और हरे रंग का वस्त्र धारण करने वाला, विनोदप्रिय और सम शरीरधारी है। धर्म पर इसका अधिकार होता है।।

श्लिष्टवाक् सततहास्यरुचिज्ञः पित्तमारूतकफप्रकृतिश्च ।।

गद्गद्वाणी, सतत् हास्य में रूचि रखने वाला, कफ, वात और पित्त तीनों प्रकृति बुध का स्वरूप होता है।

बुध का वैदिक मंत्र –

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स सृजेथामयं च अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ।।

प्रियङ्गुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥

गृहराशि	कन्या मिथुन	शरीर में धातु विशेष	त्वक्
उच्चराशि	कन्या	रस	मिश्ररस
नीच राशि	मीन	गुण	रज
मूलत्रिकोणराशि	कन्या	अधिदेवता	विष्णु
मित्रग्रह	सूर्य शुक्र	प्रत्याधिदेवता	विष्णु
समग्रह	भौम गुरु शनि	प्रकृति	कफ,वात-पित्त
शत्रुग्रह	चन्द्र	लिङ्ग	नपुंसक
उपग्रह	अर्धयाम	जाति	शूद्र
रत्न	गारुत्मक	कारकभाव	4,10
वर्ण	हरितवर्ण	दशावर्ष	17

उदयप्रकार	शीर्षोदयी	वस्त्र	आर्द्र
मूलादिसंज्ञा	मिश्र	धातु	मिश्रितद्रव्य
अङ्ग	चरण, हाथ	काल	ऋतु

1.3.5 गुरू का परिचय

ब्रह्माण्ड में ग्रहों, नक्षत्रों आदि खगोलीय पिंडों के बीच गुरु का बहुत बड़ा महत्व देखा जाता है। यह सौरमंडल के ग्रहों में सबसे बड़ा ग्रह है, और इसी कारण इसका नाम "गुरु "रखा गया है। संस्कृत साहित्य में इसे बृहस्पति, गुरु, इज्यः, देवगुरु, सुराचार्य, देवाचार्य, अंगिरस, बृहत्तेजः, जीव, सुरमंत्री, धिषण, सूरि, वागीश, वचसांपति आदि कई नामों से जाना जाता है। जैसा कि दैवज्ञभरण में भी वर्णित है। (दैवज्ञाभरण, प्रथम प्रकाश, श्लो.5)

सुरमन्त्री सुराचार्यो गुरुर्जीवो बृहस्पतिः ।
अङ्गिरा धिषणः सूरिर्वागीशो वचसां पतिः ।।

ज्योतिषशास्त्र के अनुसार, भू-केन्द्रित गणना प्रणाली में यह ग्रह सातवीं कक्षा में स्थित है। इसकी अवलोकन परंपरा वैदिक काल से ही वेदों और वेदांगों में देखी जा सकती है। कुछ विद्वान "बृहस्पतिः प्रथमं जायमानः तिष्यं नक्षत्रमभिसम्बभूव" (तै.ब्रा.) इस वेद वाक्यांश का उद्धरण देकर यह प्रमाणित करते हैं कि बृहस्पति पुष्य नक्षत्र से उत्पन्न हुए हैं, लेकिन इस संदर्भ में यह अर्थ उपयुक्त प्रतीत नहीं होता। इसका कारण यह है कि इस वाक्यांश में पुष्य नक्षत्र में बृहस्पति के प्रथम दर्शन की बात कही गई है। पुराणों में बृहस्पति को अंगिरस का पुत्र, देवताओं का गुरु, धर्मशास्त्र का प्रवर्तक और नवग्रहों में पांचवां ग्रह कहा गया है। इनकी उत्पत्ति के संदर्भ में *ब्रह्मवैवर्तपुराण* में वर्णन है कि अंगिरस की पत्नी, कर्म दोष के कारण मृत हो गई थी। ब्रह्मा के आदेशानुसार, उसने भगवान कृष्ण का व्रत किया और पुत्र के रूप में बृहस्पति को प्राप्त किया। चूंकि कृष्ण भगवान शिव के गुरु हैं, इसलिए बृहस्पति को शिव का गुरुपुत्र भी कहा जाता है।(ब्र.वै.पु.,प्रकृतिखण्ड,अ.16)

श्रीकृष्णो हि गुरुः शम्भोः परमात्मा परात्परः ।
कृष्णस्य वरपुत्रोऽयं स्वयमेव बृहस्पतिः ।

अतो हेतोः सुरगुरुर्गुरुपुत्रः शिवस्य च।।

सूर्यसिद्धांत के अनुसार, सृष्टि की प्रक्रिया में पंचमहाभूतों में से आकाश तत्व से बृहस्पति की उत्पत्ति हुई। बृहत्संहिता के उपनयन अध्याय में भट्टोत्पल ने पुराणों के आधार पर बताया है कि, आदि सृष्टि के समय पितामह ब्रह्मा ने मन से अंगिरा को उत्पन्न किया। अंगिरा के द्वारा ब्रह्मधाम से त्रिभुवन के रक्षक, प्रजापति भगवान बृहस्पति का जन्म हुआ। ज्योतिषशास्त्र के आधार पर, बृहस्पति अपने कक्ष में भ्रमण करते हुए क्रांतिवृत्त से 60 अंश की अधिकतम दूरी तक दक्षिण याम्य और उत्तर सौम्य की ओर विचलित हो सकते हैं।

ज्योतिष फलित ग्रन्थों में गुरू का स्वरूप

पीतद्युतिः पिङ्गकचेक्षणः स्यात् पीनोन्नतोराश्च बृहच्छरीरः।
कफात्मकः श्रेष्ठमतिः सुरेड्यः सिंहाब्जनादश्च वसुप्रधानः॥

पीत आभा से युक्त, पिङ्गल (भूरे) नेत्र और केश, स्थूल और उभरा हुआ वक्ष, बृहदाकार शरीर ऐसा देवगुरु बृहस्पति का स्वरूप है। वह कफ-प्रधान प्रकृति, श्रेष्ठ बुद्धि से युक्त, सिंह और शंख की ध्वनि के समान इसकी आवाज है। यह धनोत्सुक होता है॥

बृहत्तनुः पिङ्गमूर्धजेक्षणो बृहस्पतिः श्रेष्ठमतिः कफात्मकः।

अर्थात् तुङ्ग शरीर, पीत केश, पीत नेत्र, श्रेष्ठ बुद्धि, कफ प्रकृति बृहस्पति का स्वरूप होता है।

गुरू का वैदिक मंत्र –

ॐ बृहस्पते अतियदर्यो अर्हाद्युमद् विभात्ति वक्रतु मज्जनेषु। यद्दीदयच्छवसऽऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणन्धेहि चित्रम्।

देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसंनिभम्।
बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम्॥

गृहराशि	धनु मीन	शरीर में धातु विशेष	वसा
उच्चराशि	कर्क	रस	मधुर
नीच राशि	मकर	गुण	सत्व
मूलत्रिकोणराशि	धनु	अधिदेवता	ब्रह्मा

मित्रग्रह	सूर्य चन्द्र भौम	प्रत्याधिदेवता	इन्द्र
समग्रह	शनि	प्रकृति	कफ,वात-पित्त
शत्रुग्रह	बुध शुक्र	ऋतु	हेमन्त
कारकभाव	2,5,9,10	वर्ण	गौर
दशावर्ष	16	उदयप्रकार	उभयोदयी
जाति	विप्र	काल	मास
लोक	स्वर्ग	लिङ्ग	पुल्लिंग
मूलादिसंज्ञा	जीव	दृष्टि	सम
रत्न	पुष्पक		

1.3.6 शुक्र का परिचय

सौरमंडल के ग्रहों में शुक्र सर्वाधिक तेजयुक्त है। आदिकाल से ही भारतीयों को इसके विषय में सूक्ष्म और गहन ज्ञान प्राप्त था। शतपथ ब्राह्मण में शुक्र का वर्णन करते हुए यह मिलता है कि-**"स एव शुक्रः योहि चमत्कृतः सर्वाधिकः"** (शतपथब्राहमण 4/2/1) इसी प्रकार अन्य कई स्थानों पर भी इसके प्रकाश और प्रभा की विशेषताओं का वर्णन मिलता है। ब्रह्मांड पुराण में यह उल्लेख मिलता है कि यह तेज में सूर्य के समान है और अनेक रंगों वाला है।(ब्रहमाण्ड पुराण ,पूर्वार्द्ध ,23/81-83)

भार्गवस्य रथः श्रीमान् तेजसा सूर्यसन्निभः।
पृथ्वी संभवैर्युक्तो न वा वर्णे हयोत्तमैः॥
श्वेतः पिशङ्गः सारङ्गो नीलः पीतो विलोहितः।
कृष्णश्च हरितश्चैव पृषत् पृश्निरेव च॥

संस्कृत वाङ्गमय में शुक्र को अनेक नामों से पुकारा गया है, जैसे कि सित, भृगु, भृगुपुत्र, दैत्य मंत्री, दैत्याध्यक्ष, दैत्यपुरोहित, उशना, भार्गव, काव्य, दैत्य गुरु, आस्फुजित, शतपर्वेश, षोडशार्चि, मघाभू, श्वेत, श्वेत रथ, कवि आदि। पुराणों के अनुसार, शुक्र भृगुपुत्र है। वामन पुराण के अनुसार, शिव के निकुम्भादि दैत्यों के साथ युद्ध करते समय मरे हुए दैत्यों को पुनः जीवित किया गया, तब शङ्करेण गणपतिमादिश्य, भार्गव को बध कर पुनः जीवन प्रदान किया। इस दौरान शुक्र का नाम लिया गया और वह पुनः जीवित हुआ।

भारतीय ज्योतिषशास्त्र के फलादेश परंपरा में, शुक्र के अधिपत्य क्षेत्र में निम्नलिखित स्थानों का उल्लेख किया गया है: तक्षशिला, मर्तिकावता देश, बहुगिरि, गांधारा, पुष्कलावर्तक देश, प्रस्थल, मालवा, कैकेया, दाशार्ण, उशीनरा, शिब, ये सभी स्थान शुक्र के प्रभाव में आते हैं। जो लोग वितस्ता, तेरावती, चंद्रभागा जैसी नदियों में जल पीते हैं, वे रथों, रुपयों, अर्थोत्पत्ति के स्थानों, हाथियों, घोड़ों, हाथी के मालिकों, धनाढ्य लोगों के साथ जुड़ते हैं। इसके अलावा, सुगंधित पदार्थ, फूल, अनुलेपन, पद्मराग के समान मणि, हीरा, अलंकरण, पद्म जैसे वस्त्र, शय्या, श्रेष्ठ और सुंदर महिलाएं, पुष्प, धूप, माला, अनुलेपन, मदन के उपयोगी वस्त्र, मृष्ट आहार, नरों के लिए प्रिय वस्त्र, उपवन, जल, यशस्वी, सुख-संपन्न, दातार, सुरूप, विद्वान, मंत्री, व्यापारिक जीवन, कुम्भकार, पक्षी, त्रिफला, कौशेय के कपड़े, और्णिक कंबल, धौतकौशेय, सुगंधित पदार्थ, नारिकेल, जटीफल, अगरु जैसी सुगंधित वस्तुएं, वचाद्रव्य, कण, और मलयज चन्दन शामिल हैं। (बृहत्संहिता , अ.16,श्लो.25-29)

उदयकाल में नक्षत्रों की स्थिति पर विचार करते हुए, नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग, अज, दहन के नौ मार्गों का अनुसरण करते हुए, तीन मुख्य मार्गों पर शुभाशुभ फल का विचार किया जाता है। इनमें से, जब शुक्र उदीय होता है, तो सौम्य मार्गों में स्थित होने पर यह समृद्धि लाता है, मध्य मार्गों में मध्यम फल देता है, और दक्षिणी मार्गों में यह कठिनाई उत्पन्न करता है। जैसा कि वराह ने कहा है।

उत्तरवीथीषु शुक्रः सुभिक्षशिवकृद् गतोऽस्तमुदयं वा ।
मध्यासु मध्यफलदः कष्टफलो दक्षिणस्थासु ।।

इसी प्रकार अन्य फल भी बृहत्संहिता में स्पष्ट रूप से विवेचित हैं। वृष और तुला राशियों के अधिपति शुक्र को शुभ ग्रह माना गया है, जो अपने स्वात्मगुणों और जातक के जीवन में स्वस्थान के प्रभाव के अनुसार सुख और दुःख उत्पन्न करता है। इसके फल को निम्नलिखित सारणी द्वारा सरलता से समझा जा सकता है।

ज्योतिष फलित ग्रन्थों में शुक्र का स्वरूप

चित्राम्बराकुञ्चितकृष्णकेशः स्थूलाङ्गदेहश्च कफानिलात्मा।
दूर्वाङ्कुराभः कमनो विशालनेत्रो भृगुः साधितशुक्लवृद्धिः ॥१३॥

रंग-बिरंगे वस्त्र धारण किये, काले घुँघराले केश, स्थूल अङ्ग और शरीर, कफ-वायु प्रधान (कफ और वायु तत्त्व पर अधिकार रखने वाला), दूर्वा के अङ्कुर के समान कान्ति से युक्त, कमनीय, विशाल नेत्रों से युक्त तथा पौरुष शक्तिसम्पन्न होता है अर्थात् पौरुषशक्ति पर शुक्र का अधिकार होता है॥

भृगः सुखी कान्तवपुः सुलोचनः कफलानिलात्मासितवक्रमूर्धजः ॥

इसी प्रकार शुक्र का स्वरूप सुखी, सुन्दर काय, सुन्दर नेत्र, कफ और वात प्रकृति, कृष्ण केश और कुटिल कहा गया है।

शुक्र का वैदिक मंत्र –

ॐ अन्नात् परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्व्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं व्विपान शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोमृतम्मधु।

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्।
सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम्॥

गृहराशि	वृष, तुला	शरीर में धातु विशेष	शुक्र
उच्चराशि	मीन	रस	अम्ल
नीच राशि	कन्या	गुण	रज
मूलत्रिकोणराशि	तुला	अधिदेवता	इन्द्र
मित्रग्रह	शनि, बुध	वर्ण	स्वच्छ
समग्रह	भौम गुरु	प्रकृति	कफ
शत्रुग्रह	सूर्य चन्द्र	ऋतु	वसन्त
उदयप्रकार	शीर्षोदयी	कारकभाव	7

वस्त्र	दृढ	दशावर्ष	20
जाति	विप्र	धातु	मुक्ता
लिङ्ग	स्त्री	काल	पक्ष
मूलादिसंज्ञा	जीव	रत्न	वज्र

1.3.7 शनि का परिचय

सौरमंडल के इन सभी ग्रहों में शनि सबसे प्रसिद्ध ग्रह है, जिसके बारे में लोक कथाओं और पुराणों में कई प्रकार की कथाएँ प्राप्त होती हैं। संस्कृत साहित्य और लोक मान्यताओं में इसे सौरि, शनैश्चर, पंगु, सूर्यसुत, अनिल, मंद, असित, पीतांगी, छायापुत्र, काल, यम, असितांबर आदि नामों से जाना जाता है। जैसा कहा गया है। (दैवज्ञाभरण, प्रथमप्रकाश श्लो.7)

सौरिश्शनैश्चरः पङ्गुः कोणः सूर्यसुतोऽनिलः ।
मन्दोऽसितश्च पीताङ्गी छायापुत्रोऽसिताम्बरः ।।

सूर्य आदि ग्रहों में यह (शनि) सातवाँ तारा ग्रह है और भूकेन्द्रित कक्षाओं के क्रम में सभी ग्रहों के ऊपर स्थित है। इसी कारण इसका परिक्रमण पथ अन्य ग्रहों की तुलना में सबसे बड़ा सिद्ध होता है। अपनी कक्षा में अन्य ग्रहों के समान योजनात्मक गति से घूमने पर भी, कोणीय अनुपात के कारण यह सभी ग्रहों में सबसे धीमी गति से चलता है। इसी धीमी गति के कारण इसे "शनैश्चर" कहा गया, जो इसके नाम को सार्थक बनाता है। पद्मपुराण के अनुसार, इसकी उत्पत्ति सूर्य और उनकी पत्नी छाया जो संज्ञा का सवर्ण मायामयी स्वरूप थी के माध्यम से हुई। वहाँ कहा गया है कि सूर्य की पत्नी संज्ञा उनके तेजोमय स्वरूप को सहन करने में सक्षम नहीं थी। इसलिए उसने मायामयी छाया का निर्माण किया, जो उसकी समान रूप वाली प्रतिरूप थी। परिस्थिति के कारण, सूर्य छाया को ही संज्ञा समझकर उनके साथ रहे और क्रमशः उनसे तीन संतानों का जन्म हुआ—पहले मनुश्रेष्ठ सावर्णि, दूसरे शनैश्चर, और तीसरी भद्रा। (पद्मपुराण,स्वर्ग ख. अ.11)

सार्वभौमिक फल निर्धारण की प्रक्रिया में संहिताग्रंथों के अनुसार, शनिदेव का अधिकार क्षेत्र निम्नलिखित जातियों और स्थानों पर बताया गया है उन स्थानों पर रहने वाले लोग जहाँ सरस्वती नदी अदृश्य हो गई है, जो पश्चिमी देश माने जाते हैं। इन क्षेत्रों में अनार्य जाति के लोग, अर्बुद, पुष्कर, सौराष्ट्र, अभीर, शूद्र, रैवत जैसे समुदाय के लोग आते हैं। उन स्थानों में कुरुजन, स्थानेश्वर के निवासी, प्रभास क्षेत्र, विदिशा, वेदों में स्मृत नदियाँ, महानदी के किनारे रहने वाले लोग भी सम्मिलित हैं। इसके अलावा, दुर्जन, अशुद्ध प्रवृत्ति वाले, अधम कर्म करने वाले, तेल निकालने वाले (तैलिक), निर्बल, नपुंसक प्रवृत्ति वाले, जेलपाल (बंदीगृह के रक्षक) और जेल जैसे स्थान, पक्षी मारने वाले, अपवित्र आचरण वाले, नाविक, विकृत रूप वाले, वृद्ध लोग, सूअर पालने वाले, समूह के नेता, नियमों का उल्लंघन करने वाले, शबर जनजाति के लोग, पुलिंद और गरीब लोग आते हैं। शनि के क्षेत्र में कड़वे पदार्थ, तीखे पदार्थ, रसायन, पति से विहीन स्त्रियाँ, सर्प, चोर, भैंस, गधे, ऊँट, चना, मटर, वात बढ़ाने वाले अनाज और शाल्य (धान) भी आते हैं। (बृहत्संहिता अ. 16, श्लो.30-33)

जब शनि ग्रह का रंग हल्का पीला (पाण्डु वर्ण), चमकदार (स्निग्ध), साफ-सुथरा (निर्मल), गहरा काला (श्यामवर्ण) हो और यह अपने विपुल किरणों (तेजस्वी प्रकाश) से युक्त हो तथा नक्षत्रों के सौम्य दिशा में विचरण करता हो, तब यह जिनकी कुंडली में स्वामी ग्रह होता है, उनके लिए विशेष रूप से शुभ और लाभकारी होता है। इसके विपरीत, जब इसके लक्षण प्रतिकूल होते हैं, तो यह विशेष रूप से अशुभ और हानिकारक प्रभाव उत्पन्न करता है। जैसा कहा गया है। (अद्भुतसागर ,शनैश्चराद्भुतावर्त।)

पाण्डुः स्निग्धोऽमलः श्यामो विशुद्धार्चिः शनैश्चरः ।
मार्गस्थश्चापि सव्यश्च नक्षत्राद्धित इश्यते ।।

इसी प्रकार, जब शनैश्चर (शनि) स्वाती, हस्त, आर्द्रा, भरणी, और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रों में स्थित होकर अपनी विमल (शुद्ध और तेजस्वी) मूर्ति में होता है, तब वह पृथ्वी को प्रचुर जल से प्लावित (भरा हुआ) कर देता है। इसके अतिरिक्त, जब शनि आश्लेषा, शतभिषा, और ज्येष्ठा नक्षत्रों में अपनी विमल मूर्ति में स्थित होता है, तब वह कल्याणकारी और सुखदायक होता है। परंतु जब शनि मूल नक्षत्र में होता है, तब वह दुर्भिक्ष (अकाल और संकट) उत्पन्न करता है। जैसा कहा गया है।

श्रवणानिलहस्तार्द्राभरणीभाग्योपगः सुतोऽर्कस्य ।
प्रचुरसलिलोपगूढां करोति धात्रीं यदि स्निग्धः ।।
अहिवरुणपुरन्दरदैवतेषु सुक्षेमकृन्न चाति जलम्।
क्षुच्छस्त्रावृष्टिकरो मूले प्रत्येकमपि वक्ष्ये ।।

जब शनि वृषभ राशि में, क्रांतिवृत्त से दो अंश आगे और दक्षिण दिशा की ओर सत्रहवें अंश में स्थित होता है, तब यह रोहिणी के शकट को तोड़ देता है। (सूर्यसि.अ.8,श्लो.13) यह समय संसार में अत्यंत भयावह और विनाशकारी माना जाता है। महाभारत काल में, कुरु और पांडवों के विनाश का कारण भी रोहिणी शकट भेदन ही था, जैसा कि भीष्म पर्व में कहा गया है (अद्भुतसागर शनैशचरादबुतावर्त।) **"रोहिणी पीडयन्नेव स्थितो राजन् शनैश्चरः"।** सामान्यतः ग्रह जिस राशि में गोचर करते हैं, उसी से संबंधित फल देते हैं। लेकिन शनि जिस राशि में होता है, उससे आगे और पीछे एक-एक राशि तक भी प्रभाव डालता है। इस कारण शनि का प्रभाव एक राशि पर लगभग साढ़े सात वर्षों (सार्द्धसप्तवर्ष) तक रहता है। यह काल लोक में 'साढ़ेसाती' के नाम से प्रसिद्ध है। जन्म के समय शनि की स्थिति और गोचर में चंद्रमा की बारह राशियों में स्थिति के अनुसार शनि का शुभ-अशुभ प्रभाव 'शनिपाद' के आधार पर विचार किया जाता है। जब चंद्रमा **1, 6, 11** राशियों में होता है, तो शनि का **सुवर्ण (स्वर्ण) पाद** होता है। जब चंद्रमा **2, 5, 9** राशियों में होता है, तो शनि का **रजत (चांदी) पाद** होता है। जब चंद्रमा **3, 7, 10** राशियों में होता है, तो शनि का **ताम्र (तांबा) पाद** होता है। जब चंद्रमा **4, 8, 12** राशियों में होता है, तो शनि का **लौह (लोहे) पाद** होता है। जैसा कि कहा गया है।

जन्मे रसे रुद्रसुवर्णपादं द्विपञ्चनन्दा रजतं शुभञ्च ।
त्रिसप्तदिक् ताम्रपदं वदन्ति वेदाष्टरिः फे खलु लौहपादम् ।।

लौह पाद धन का नाश करता है, स्वर्ण पाद सभी प्रकार का सुख प्रदान करता है, ताम्र पाद सामान्य फल देता है और रजत पाद सौभाग्य प्रदान करता है। इस प्रकार स्वर्ण पाद (सुवर्णपाद) सभी सुखों को प्रदान करने वाला होता है। रजत पाद (चांदी का पाद) सौभाग्य और समृद्धि देता है। ताम्र पाद (तांबे का पाद) मध्यम फल देता है। लौह पाद (लोहे का पाद) अशुभ फलदायक और धन हानि करने वाला होता है।

मकर और कुंभ राशियों का स्वामी शनि ग्रह है, जो स्वभाव से एक पाप ग्रह माना जाता है। शनि की उच्च स्थिति और अन्य स्थानों की जानकारी निम्न सारणी (तालिका) के माध्यम से जानी जा सकती है।

ज्योतिष फलित ग्रन्थों में शुक्र का स्वरूप

पङ्गुर्निम्नविलोचनः कृशतनुर्दीर्घः सिरालोऽलसः
कृष्णाङ्गः पवनात्मकोऽतिपिशुनः स्नाय्वात्मको निर्घृणः ।

मूर्खः स्थूलनखद्विजः परुषरोमाङ्गोऽशुचिस्तामसो

रौद्रः क्रोधपरो जरापरिणतः कृष्णाम्बरो भास्करिः ॥

पैर से विकलाङ्ग, सदैव नीचे झुकी आँखें, दुर्बल किन्तु दीर्घ शरीर, नसें उभरी हुईं, वायु-प्रधान प्रकृति, आलसी, कृष्ण वर्ण, अत्यन्त चुगलखोर, स्नायुतन्त्र का अधिकारी, निर्मम, मूर्ख, लम्बे नख और दाँत से युक्त, कड़े रुखे रोमावली से युक्त शरीर, मलिन, तामस प्रकृति, क्रोधी, वृद्ध और काले वस्त्र धारण किये शनि का स्वरूप है ॥

बृहत्तनुः पिङ्गमूर्धजेक्षणो बृहस्पतिः श्रेष्ठमतिः कफात्मकः ।

अर्थात् तुङ्ग शरीर, पीत केश, पीत नेत्र, श्रेष्ठ बुद्धि, कफ प्रकृति बृहस्पति का स्वरूप होता है।

शनि का वैदिक मंत्र –

ॐ भूर्भूवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः, शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि॥

नीलाञ्जनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।

छायामार्तण्डसम्भूतं तं नमामि शनैश्चरम्॥

गृहराशि	मकर,कुम्भ	शरीर में धातु विशेष	स्नायु
उच्चराशि	तुला	रस	कषाय
नीच राशि	मेष	गुण	तम
मूलत्रिकोणराशि	कुम्भ	अधिदेवता	यम
मित्रग्रह	बुध शुक्र	प्रत्याधिदेवता	प्रजापति
समग्रह	गुरु	प्रकृति	वात
शत्रुग्रह	सूर्य,चन्द्र,भौम	ऋतु	शिशिर
मूलादिसंज्ञा	मूल	वृक्ष	दुर्गन्धयुक्त
अवस्था	100	कारकभाव	6,8,10,12

वर्ण	कृष्ण	दशावर्ष	19
उदयप्रकार	पृष्टोदयी	वस्त्र	जीर्ण
आकृति विशेष	चतुष्पद	धातु	लौह
लिङ्ग	नपुंसक	काल	वर्ष
रत्न	नीलम	वाहन	सैरभ

1.3.8 राहु, ग्रह का परिचय

भारतीय ज्योतिषशास्त्र की परंपरा में नवग्रहों में राहु और केतु का भी वर्णन प्राप्त होता है। परंतु आकाशीय मण्डल में ग्रह-नक्षत्र आदि पिंडों में राहु और केतु नामक कोई स्वतंत्र पिंड नहीं है। फिर भी, परंपरा में इनके प्रभाव और फल को साधनपूर्वक विस्तार से निरूपित किया गया है। संस्कृत वाङ्मय में राहु के लिए अगु, तम, स्वर्भानु, विधुन्तुद, उपप्लव, तम, सुरारि, सिंहिकासुत जैसे पर्यायवाची नाम मिलते हैं। इसी प्रकार केतु के लिए ब्रह्मसुत, धूम्रवर्ण, और शिखि जैसे नाम प्रयुक्त होते हैं। इसके अतिरिक्त, और भी पर्याय लोकानुभव के आधार पर जोड़े जा सकते हैं। जैसा कि दैवज्ञाभरण में भी उल्लेख किया गया है। (दैवज्ञाभरण,प्रथमप्रकाश, श्लो.8)

उपप्लवस्तमो राहुः सुरारिः सिंहिकासुतः।
केतुर्ब्रह्मसुतो ज्ञेयः धूम्रवर्णः शिखिस्तथा।।
लौकिकाः शब्दिकाः संज्ञा योजनीया मनीषिभिः ।।

इस कथन के अनुसार, पुराणों में राहु और केतु की उत्पत्ति से संबंधित एक ही कथा प्राप्त होती है। उसके अनुसार, प्राचीन काल में, इंद्र के पिता कश्यप से उनकी पत्नी सिंहिका ने संतान प्राप्ति के लिए समय के विपरीत याचना की। कश्यप मुनि ने समय का उल्लंघन होने के कारण क्रोधवश सिंहिका को अत्यंत भयंकर, यमराज और काल के समान क्रूर पुत्र प्रदान किया, जिसे विद्वान 'राहु' के नाम से जानते हैं। (बृहत्संहिता भटोत्पल,उपनयनाध्याय) सिंहिका के चौदह पुत्रों में राहु सबसे बड़ा था। राहु के प्रभाव से ही केतु की उत्पत्ति हुई। कथा के अनुसार, जब समुद्र मंथन के समय चौदहवां रत्न अमृत समुद्र से बाहर आया, तब उसे प्राप्त करने के लिए स्वर्भानु ने देवताओं का रूप धारण कर देवताओं की सभा में

प्रवेश कर अमृत पी लिया। लेकिन उसी समय चंद्रमा और सूर्य ने स्वर्भानु को देख लिया और यह बात विष्णु को सूचित कर दी। इसके बाद, विष्णु ने सुदर्शन चक्र से स्वर्भानु का सिर काट दिया। परंतु अमृतपान के प्रभाव से वह अमर हो गया और उसका कटा हुआ सिर होने पर भी वह मृत नहीं हुआ। उसका सिर भाग 'केतु' के रूप में और शेष शरीर भाग 'राहु' के रूप में प्रसिद्ध हो गया।

संहिता में केतु का स्वरूप-

केतु का दर्शन या अदर्शन गणना द्वारा ज्ञात करना संभव नहीं है। क्योंकि केतु तीन प्रकार का होता है: भौम (पृथ्वी पर), दिव्य (आकाश में), और अंतरिक्षीय (अंतरिक्ष में)। इसमें दिव्य केतु आकाश में होता है, अंतरिक्षीय केतु अंतरिक्ष में स्थित होता है, और भौम केतु पृथ्वी पर प्रकट होता है। जैसा कि बृहत्संहिता में कहा गया है- (बृहत्संहिता,केतुचराध्याय,)

दर्शनमस्तमयो वा न गणितविधिनास्य शक्यते ज्ञातुम्।
दिव्यान्तरीक्षभौमास्त्रिविधाः स्युः केतवो यस्मात्।।

पराशर आदि मुनियों के मतानुसार केतुओं की संख्या 101 है। इन 101 केतुओं में से 16 केतु **"मृत्युनिःश्वास"** (मृत्यु के श्वास से उत्पन्न) हैं। 12 केतु "आदित्य" (सूर्य) से उत्पन्न हुए हैं, 10 केतु दक्ष के यज्ञ का विनाश करने के लिए रुद्र के क्रोध से उत्पन्न हुए हैं, 7 केतु पितामह (ब्रह्मा) से उत्पन्न हुए हैं, 15 केतु उद्दालक ऋषि के पुत्र माने गए हैं, 17 केतु मरीचि और कश्यप के ललाट से उत्पन्न हुए हैं, 5 केतु प्रजापति के हास्य से उत्पन्न हुए हैं, 3 केतु विभावसु से उत्पन्न हुए हैं, 1 केतु धूम से उत्पन्न हुआ है, 14 केतु अमृत मंथन के समय सोम के साथ उत्पन्न हुए हैं, 1 केतु ब्रह्मा के क्रोध से उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार, कुल मिलाकर 101 केतु बताए गए हैं। गर्ग आदि ऋषियों ने अपनी संहिताओं में केतुओं की संख्या 1000 बताई है। (बृहत्संहिता,केतुचराध्याय भटोत्पलटीका)। वहीं, नारद मुनि ने अपनी संहिता में केवल एक ही केतु का वर्णन किया है। वराह मिहिर ने सभी 1000 केतुओं की गणना करते हुए अपनी बृहत्संहिता में इनका विस्तार से वर्णन किया है वे इस प्रकार हैं-

रवि से उत्पन्न 25, अग्नि के पुत्र 25, मृत्यु के पुत्र 25, पृथ्वी के पुत्र 22, चंद्रमा के पुत्र 3 और ब्रह्मा के दंड से उत्पन्न 1 केतु हैं, जिनकी संख्या पराशर आदि के मत के अनुसार 101 होती है। इसके अतिरिक्त- शुक्र से उत्पन्न 48,शनि से उत्पन्न 60,गुरु से उत्पन्न 65,बुध से उत्पन्न 51,भौम (मंगल) से उत्पन्न 60,राहु से उत्पन्न 33,अग्नि से उत्पन्न 120,वायु से उत्पन्न 77,प्रजापति से उत्पन्न 8,ब्रह्मा से उत्पन्न 204,वरुण से उत्पन्न 32,काल से उत्पन्न 96,दिशाओं से उत्पन्न 9 केतु हैं। इन सभी को

मिलाकर केतुओं की संख्या सहस्र (1000) से अधिक होती है। इन सभी केतुओं का लक्षण और उनका फल संहिता ग्रंथों में वर्णित है। इनमें से कुछ केतु ही प्रत्यक्ष रूप से देखे जाते हैं। जो प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं, उनके आकार-प्रकार आदि के आधार पर उनके विशेष लक्षण भी वर्णित हैं। इनमें निम्नलिखित केतु उनके स्वरूप के आधार पर वर्णित हैं वसाकेतु,अस्थिकेतु,कपालकेतु,रौद्रकेतु,चलकेतु,श्वेतकेतु,रश्मिकेतु,ध्रुवकेतु,कुमुदकेतु,मणिकेतु,अज केतु,भवकेतु,पद्मकेतु,आवर्तकेतु,संवर्तकेतु। इनके स्वरूप के आधार पर इनके शुभ और अशुभ फलों का भी वर्णन किया गया है। फल विचार की प्रक्रिया में मुख्य रूप से राहु के प्रभाव क्षेत्र में पर्वत की चोटियों, नीच स्थानों, और उन घरों में रहने वाले लोग आते हैं, जो निम्नलिखित लक्षणों से युक्त होते हैं। म्लेच्छ जाति के लोग, शूद्र, गीदड़ खाने वाले, शूलिक ,वोक्काण (नीच प्रवृत्ति के लोग),अश्वमुख ,विकलांग,कुल का अपमान करने वाले,क्रूर,कृतघ्न,चोर,सत्य से रहित,शौच से रहित,कंजूस,गधे जैसे, चरित्रहीन, बाहुयुद्ध के ज्ञाता,अति क्रोधी,गड्ढों में रहने वाले,अधम कर्म करने वाले,अपमानजनक, झूठे धर्माचरण वाले,राक्षस जाति के,अधिक नींद लेने वाले, हूण,जानवर,धर्म से रहित,तिल। केतु के प्रभाव क्षेत्र में निम्नलिखित लोग और स्थान आते हैं- पर्वत दुर्ग,पह्लव जाति के लोग, श्वेत वर्ण के, चौल जाति के,आवगाण (एक विशेष जाति),मरुभूमि में रहने वाले, चीनी,गह्वर में रहने वाले, धनवान, अत्यधिक इच्छाशक्ति वाले, गुणहीन, बलवान, परस्त्रियों में आसक्त, विवादप्रिय, दूसरों के रहस्यों में रुचि रखने वाले, मद्यप, मूर्ख, अधार्मिक, विजय की इच्छा रखने वाले। (बृहत्संहिता,ग्रहभक्तियोग अ.) इनके उपयोग और प्रभाव का वर्णन करते हुए वराह मिहिर ने लिखा है कि जब किसी ग्रह का उदयकाल हो और वह निर्मल किरणों वाला हो, बड़े बिंब वाला हो, अपने स्वाभाविक स्थान पर हो, तो वह जिनका स्वामी है, उनके लिए शुभ फलदायी होता है। लेकिन यदि ग्रह विपरीत समय के लक्षणों से युक्त हो, तो वह नाशकारी होता है। जैसा कि कहा गया है-

उदयसमये यः स्निग्धांशुर्महान् प्रकृतिस्थितो
यदि च न हतो निर्घातोल्कारजोग्रहमर्दनैः ।
स्वभवनगतः स्वोच्चप्राप्तः शुभग्रहविक्षितः
स भवति शिवस्तेषां येषां प्रभुः परिकीर्तितः ।।

अभिहितविपरीतलक्षणे क्षयमुपगच्छति तत्परिग्रहः । बृहत्संहिता,ग्रहभक्तियोग अ. श्लो.39

जातक स्कंध में फल विचार की प्रक्रिया में वराह मिहिर ने राहु और केतु के ग्रहण का कोई उल्लेख नहीं किया है। परंतु अन्य ग्रंथों में इन दोनों के प्रभाव को विस्तार से समझाया गया है। राहु और केतु को नव ग्रहों में से सैनिक रूप में माना जाता है।

राहु का वैदिक मंत्र –

ॐ कया नश्चित्र आभुवदूती सदावृध: सखा। कया शचिष्ठया व्वृता।।

अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्।
सिंहिकागर्भसम्भूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥

केतु का वैदिक मंत्र –

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथा:।।

पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।
रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥

राहु		केतु	
गृहराशि	कन्या	गृहराशि	मीन
उच्चराशि	मिथुन	उच्चराशि	धनु
नीच राशि	धनु	नीच राशि	मिथुन
मूलत्रिकोणराशि	कुम्भ	मूलत्रिकोणराशि	सिंह
अधिपति	काल	अधिपति	चित्रगुप्त
प्रत्यधिपति	सर्प	प्रत्यधिपति	ब्रह्मा
अवतार	वाराह	अवतार	मत्स्य
दृष्टिप्रकार	अध	दृष्टिप्रकार	अध
उदयप्रकार	पृष्ठोदयी	उदयप्रकार	पृष्ठोदयी
अवस्था	100	अवस्था	100
वर्ण	नील	वर्ण	विचित्र

रत्न	गोमेद	रत्न	वैदूर्य
दशावर्ष	18	दशावर्ष	7

बोध प्रश्न

1. सूर्य की उच्च राशि है

(क) मेष (ख) कर्क (ग) सिंह (घ) कन्या

2. मंगल की उच्च राशि है।

   मेष (ख) कर्क (ग) मकर (घ) कन्या

3. शनि किस – किस स्वामी है।

   मेष – कन्या (ख) कर्क – वृष (ग) मकर- कुम्भ (घ) कन्या – मीन

4. चन्द्रमा किस राशि का स्वामी है ।

   मेष (ख) कर्क (ग) मकर (घ) कन्या

1.4 सारांश:

नवग्रह का परिचय भारतीय ज्योतिष और धार्मिक परंपराओं का एक मूलभूत विषय है, जो जीवन के विविध पक्षों को समझने में सहायक होता है। 'नवग्रह' का अर्थ है नौ ग्रह—सूर्य, चंद्रमा, मंगल, बुध, गुरु (बृहस्पति), शुक्र, शनि, राहु और केतु। इन ग्रहों का मानव जीवन पर गहरा प्रभाव माना गया है, क्योंकि ये जन्म कुंडली के अनुसार व्यक्ति के स्वभाव, स्वास्थ्य, शिक्षा, विवाह, व्यवसाय, संबंध और आध्यात्मिक विकास को प्रभावित करते हैं। सूर्य आत्मा, नेतृत्व और तेज का प्रतीक है; चंद्रमा मन, भावना और शांति से संबंधित है; मंगल ऊर्जा, साहस और संघर्ष का कारक है; बुध बुद्धि, वाणी और तर्क का प्रतिनिधि है; गुरु ज्ञान, धर्म और न्याय का स्रोत है; शुक्र प्रेम, कला और सुख-सुविधाओं से जुड़ा है; शनि कर्म, अनुशासन और समय का द्योतक है। राहु और केतु छाया ग्रह हैं, जिनका भौतिक अस्तित्व नहीं होता, लेकिन इनका आध्यात्मिक और मानसिक प्रभाव अत्यंत गहरा होता है—राहु मोह और भ्रम से जुड़ा है, जबकि केतु मोक्ष और वैराग्य से। इस इकाई में प्रत्येक ग्रह के गुण, स्वभाव, प्रभाव, प्रतीकात्मकता और ज्योतिषीय महत्व को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है। इसके माध्यम से विद्यार्थी यह समझ सकते हैं कि कैसे ये ग्रह जीवन की दिशा को निर्धारित करते हैं और किस प्रकार ग्रहों के अनुकूल या प्रतिकूल प्रभावों को पूजा-पाठ, मंत्र जाप, रत्न धारण और हवन आदि के माध्यम से संतुलित किया जा सकता है। यह इकाई न केवल ज्योतिषीय ज्ञान को सुदृढ़ करती

है, बल्कि व्यक्ति को अपने जीवन के भीतर छिपी शक्तियों और संभावनाओं को समझने की दिशा में प्रेरित भी करती है।

1.5 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (ग)
3. (ग)
4. (ख)

1.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृहत्संहिता
2. ब्रह्माण्डपुराण
3. ऐ.ब्रा.
4. वायुपुराण,
5. दैवज्ञाभरण
6. शतपथब्राह्मण
7. दैवज्ञाभरण
8. अद्भुतसागर
9. सूर्यसिद्धान्त
10. ज्योतिष सिद्धान्त मन्जूषा
11. फलदीपका
12. ग्रहशान्ति पद्धति

1.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सूर्य एवं चन्द्रमा के स्वरूप को विस्तृत रूप से वर्णन करें।
2. नवग्रहों में राहु और केतु की भूमिका को स्पष्ट करें।
3 मंगल और शनि ग्रह के स्वरूप का वर्णन करते हुए सभी ग्रहों का वैदिक मंत्र लिखें।
4 बुध और शुक्र ग्रह के स्वरूप का प्रतिपादन करें।

इकाई - 2 नवग्रह पूजन विधि

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 नवग्रह पूजन विधि
2.3.1 अधिदेवता स्थापन पूजन
2.3.2 प्रत्यधिदेवता स्थापन पूजन
2.3.3 पंचलोकपाल स्थापन पूजन
2.3.4 दश दिक्पाल स्थापन पूजन
बोध प्रश्न
2.4 सारांश
2.5 बोधप्रश्नों के उत्तर
2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना -

प्रिय अध्येताओं प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 221 के प्रथम खण्ड की द्वितीय इकाई **नवग्रह पूजन विधि** नामक प्रस्तुत इकाई में आप नवग्रहों का वैदिक विधान पूर्वक उनके पूजन, स्थापना आदि के विषय में विस्तार से जानेंगे। इससे पूर्व की इकाईयों में आप पूर्वांग पूजन को विस्तार पूर्वक अध्ययन कर चुके है। प्रस्तुत इकाई में हम नवग्रह पूजन विधि का अध्ययन करने जा रहे हैं।

भारतीय वैदिक परंपरा में नवग्रह पूजन विशेष स्थान रखता है। यह पूजन ज्योतिषीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि नवग्रह- सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु—मनुष्य के जीवन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। जन्मकुंडली में यदि कोई ग्रह अशुभ स्थिति में हो या नीच स्थिति में स्थित हो, तो व्यक्ति के जीवन में विभिन्न बाधाएँ, मानसिक अशांति, आर्थिक संकट, स्वास्थ्य समस्याएँ एवं अन्य कष्ट उत्पन्न हो सकते हैं। इन कष्टों से मुक्ति और ग्रहों की कृपा प्राप्त करने के लिए नवग्रह पूजन किया जाता है।

वेदों, पुराणों और ज्योतिष शास्त्रों में नवग्रह पूजन की महिमा का उल्लेख मिलता है।**ऋग्वेद**में नवग्रहों की स्तुति की गई है, वहीं **गरुड़ पुराण** और **स्कंद पुराण** में नवग्रहों की अनुकूलता प्राप्त करने के लिए विशेष पूजन विधियों का वर्णन किया गया है। नवग्रह पूजन न केवल व्यक्ति की समस्याओं को दूर करता है, बल्कि मानसिक शांति, आध्यात्मिक उन्नति और जीवन में समृद्धि भी प्रदान करता है। इस पूजन में वैदिक विधि से मंत्रों का उच्चारण, हवन, विशेष अर्घ्य, दान और ग्रह विशेष के मंत्र जाप किए जाते हैं। उसके लाभ एवं धार्मिक महत्त्व को समझाना है, ताकि व्यक्ति अपने जीवन में ग्रहों के सकारात्मक प्रभाव को बढ़ाकर उन्नति प्राप्त कर सके। नवग्रहों की कृपा से जीवन में सफलता, शांति और संतुलन बना रहता है, जिससे व्यक्ति अपने सांसारिक और आध्यात्मिक लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप—

- ❖ वैदिक परंपरा के अनुसार नवग्रह पूजन विधान को जान सकेंगे।
- ❖ अधिदेवता के स्वरूप एवं पूजन विधि से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ प्रत्यधिदेवता के स्वरूप को जानने एवं उनके पूजन विधान को जान सकेंगे।
- ❖ पंचलोकपाल एवं दश दिक्पालों के पूजन एवं स्थापना के विषय में जान सकेंगे।
- ❖ वैदिक विधि से मंत्रों का उच्चारण, हवनादि को जानने में समर्थ हो सकेंगे।

2.3 नवग्रह पूजन विधि

किसी भी ग्रह के पूजन से पहले गणेश का पूजन विघ्ननाश हेतु अवश्य करें। कलश पूजन से समस्त प्रकृति का पूजन और यूं कहें कि मिट्टी, पल्लव, धान्य , रत्न आदि उसमें समाहित रहते हैं जो प्रत्येक तत्व किसी ना किसी ग्रह से संबंधित होते ही हैं । ग्रहों के साथ अधि देवता और प्रत्यधि देवता

की भी पूजा आवश्यक होती है ।अगर ग्रहवेदी बनाते हैं तो उसमें अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता के साथ ही गणेशादि पंचलोकपाल, वास्तु, क्षेत्रपाल और दश दिक्पाल का भी आवाहन करते हैं। अगर किसी भी एक ग्रह का पूजन करना है तो अधि प्रत्यधि देवता आवश्यक होते हैं।

ग्रहों की स्थापना के लिये ईशानकोणमें चार खडी पादयों और चार पडी पादयों का चौकोर मण्डल बनाये1 इस प्रकार नौ कोष्ठक बन जायंगें। बीच वाले कोष्ठक में सूर्य अग्निकोणमें चन्द्र, दक्षिण में मंगल, ईशानकोणमें बुध, उत्तर में बृहस्पति, पूर्व में शुक्र, पश्चिम में शनि, नैऋत्य कोण में राहु और वायव्य कोण में केतु की स्थापना करें ।

सूर्यका आवाहन (लाल अक्षत- पुष्प लेकर)

जपाकुसुम संकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
तमो ऽरिं सर्वपापघ्नंसूर्यमावाहयाम्यहम्।

ॐ आकृष्णेन रजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।

ॐ भूर्भूव: स्व: कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नम: सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।।

चन्द्रका आवाहन (श्वेत अक्षत- पुष्प से)

दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम्।
ज्योत्स्नापतिं निशानाथं सोममावहयाम्यहम्।।

ॐइमन्देवाऽअसपत्नसुवद्ध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इममुष्य पुत्रममुष्यै व्विशऽएष वोऽमीराजा सोमोस्माकं ब्राह्मणाना राजा ।

ॐ भूर्भूव: स्व: यमुनातीरोद्भव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नम:, सोममावाहयामि स्थापयामि ।

मंगल का आवाहन (लाल फूल और अक्षत)

धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्।
कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम् ।।

ॐ अग्निर्म्मूर्द्धा दिव: ककुत्पत्ति: पृथिव्याऽअयम् । अपारेता सि जिन्त्वति ।

ॐ भूर्भूव: स्व: अवन्तिकापुरोद्भव भरद्वाजसगोत्र रक्तावर्ण भो भौम इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नम: , भौममावहयामि स्थापयामि।

बुध का आवहन (अक्षत- पुष्प लेकर)

प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स सृजेथामयं च अस्मिन्त्सधस्थेअध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ।।

ॐ भूर्भूवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयसगोत्र हरतिवर्ण भो बुध इहागच्छ इह तिष्ठ बुधाय नमः, बुधमावाहयामि स्थापयामि ।

बृहस्पति (पीले अक्षत पुष्पसे)

देवानां चमुनीनां च गुरुं कांचनसन्निभम् ।
वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरूमावाहयाम्यहम्।।

ॐ बृहस्पतेअतियदर्यो अर्हाद्युमद् विभात्ति वक्क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवसऽऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणन्धेहि चित्रम् ।

ॐ भूर्भूवः स्वः सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः, बृहस्पतिमावाहयामि स्थापयामि।

शुक्र (श्वेत अक्षत, पुष्प से)

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् ।
सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ अन्नात् परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्व्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं व्विपान शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोमृतम्मधु ।

ॐ भूर्भूवः स्वः भोजकटदेशोद्भव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः, शुक्रमावाहयामि स्थापयामि।।

शनि का आवाहन (काले अक्षत पुष्प से)

नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।
छायामार्तण्डसंभूतं शनिमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ शं नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये शंय्योरभिस्रवन्तु नः।

ॐ भूर्भूवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः, शनैश्चरमावाहयामि स्थापयामि।

राहु का आवाहन (अक्षत- पुष्प से)

अर्धकायं महावीर्य चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।

सिंहकागर्भसंभूतं राहुमावाहयाम्यहम् ।।

ॐ कया नश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया व्वृता।।

ॐ भूर्भूवः स्वः राठिनापुरोद्भव पैठिनसगोत्र कृष्णावर्ण भो राहो इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः, राहुमावाहयामि स्थापयामि ।

केतु का आवाहन (अक्षत पुष्प लेकर)

पलाशधूम्रससंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।

रौद्र रौद्रात्मकं घोरं केतुं प्रणमाम्यहम् ।।

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथाः।।

ॐ भूर्भव: स्व: अन्तर्वोदिसमुद्भव जैमिनिसगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नम: केतुमावाहयामि स्थापयामि ।

2.3.1 अधिदेवता स्थापन पूजन

उद्यापन, शतचण्डी, यज्ञानुष्ठान आदि विशेष अवसरों पर नवग्रहोंकेमण्डलमें नवग्रहों के साथअधिदेवता, प्रत्यधिदेवता आदिकी भी पूजाजाती हैं। इनकी स्थापनाका विशेष नियम हैं, जिसकानिर्देश यहाँ कियाजाता है—

अधिदेवताओंको ग्रहोंके दाहिने भागमें और प्रत्यधि-देवताओंको बायें भागमें स्थापित करना चाहिये।

हाथमें अक्षत-पुष्प लेकर निम्न मन्त्रोंको पढ़ते हुए चित्रानुसारनियत स्थानोंपर अधिदेवताओंके आवाहन - स्थापनपूर्वक अक्षत पुष्पोंकोछोड़ता जाय ।

ईश्वर (सूर्यके दायें भागमें) आवाहन स्थापन-

पञ्चवक्त्रं वृषारूढमुमेशं च त्रिलोचनम् ।

आवाहयामीश्वरं तं खट्वाङ्गवरधारिणम् ।।

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वःईश्वर इहागच्छ इह तिष्ठ ईश्वराय नमः, ईश्वरमावाहयामि, स्थापयामि ।

उमा (चन्द्रमाके दायें भागमें) आवाहन – स्थापन

हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शङ्करप्रियाम् ।

लम्बोदरस्य जननीमुमामावाहयाम्यहम् ॥

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणिरूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं मइषाण ।

ॐ भूर्भुवः स्वः उमेहागक्ष्छ इह तिष्ठ उमायै नमः, उमामावाहयामि, स्थापयामि।

स्कन्द (मङ्गलके दायें भागमें) आवाहन -स्थापन-

रुद्रतेजः समुत्पन्नं देवसेनाग्रगं विभुम्।
षण्मुखं कृत्तिकासूनुं स्कन्दमावाहयाम्यहम्॥

ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात्।श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्दाय नमः, स्कन्दमावाहयामि, स्थापयामि।

विष्णु (बुधके दायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

देवदेवं जगन्नाथंभक्तानुग्रहकारकम्।
चतुर्भुजं रमानाथं विष्णुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसिव्विष्णोर्ध्रुवोऽसि। व्वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा॥

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि, स्थापयामि।

ब्रह्मा (बृहस्पतिके दायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

कृष्णाजिनाम्बरधरं पद्मसंस्थं चतुर्मुखम्।
वेदाधारं निरालम्बं विधिमावाहयाम्यहम्॥

ॐ आ ब्ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूरइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिःपुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतांनिकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तांयोगक्षेमो नः कल्पताम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् इहागच्छ इह तिष्ठ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि, स्थापयामि।

इन्द्र (शुक्रके दायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

देवराजं गजारूढं शुनासीरं शतक्रतुम्।
वज्रहस्तंमहाबाहुमिन्द्रमावाहयाम्यहम्॥

ॐ सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान्।जहि शत्रूश्रप मृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः।

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्रेहागक्ष्छ इह तिष्ठ इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि, स्थापयामि।

यम (शनिके दायें भागमें) आवाहन स्थापन

धर्मराजं महावीर्यं दक्षिणादिक्पतिं प्रभुम् ।
रक्तेक्षणं महाबाहुं यममावाहयाम्यहम् ॥

ॐ यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा ।स्वाहाघर्मायस्वाहा धर्मः पित्रे॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागक्ष्छ इह तिष्ठ यमाय नमः, यममावाहयामि, स्थापयामि ।

काल (राहुके दायें भागमें) आवाहन स्थापन-

अनाकारमनन्ताख्यं वर्तमानं दिने दिने ।
कलाकाष्ठादिरूपेण कालमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्या ऽउन्नयामि ।समापो अद्भिरम्मत समोषधीभिरोषधीः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः कालाय नमः, कालमावाहयामि, स्थापयामि।

चित्रगुप्त (केतुके दायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

धर्मराजसभासंस्थं कृताकृतविवेकिनम् ।
आवाहये चित्रगुप्तं लेखनीपत्रहस्तकम् ॥

ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय ।

ॐ भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्तेहागच्छ इह तिष्ठ चित्रगुप्ताय नमः, चित्रगुप्तमावाहयामि, स्थापयामि।

2.3.2 प्रत्यधिदेवता स्थापन पूजन

बायें हाथमें अक्षत लेकर दाहिने हाथसे नवग्रहोंके बायें भागमेंमन्त्रको उच्चारण करते हुए चित्रानुसार नियत स्थानोंपर अक्षत छोड़ते हुएएक-एक प्रत्यधिदेवताका आवाहन स्थापन करें।

अग्नि (सूर्यके बायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

रक्तमाल्याम्बरधरंरक्तपद्मासनस्थितम् ।
वरदाभयदंदेवमग्निमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ २ आ सादयादिह ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छ इह तिष्ठ अग्नये नमः, अग्निमावाहयामि, स्थापयामि ।

अप् (जल) (चन्द्रमाके बायें भागमें) आवाहन स्थापन-

आदिदेवसमुद्भूतजगच्छुद्धिकराःशुभाः ।
ओषध्याप्यायनकरा अप आवाहयाम्यहम् ॥

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अप इहागच्छत इह तिष्ठत अद्भ्यो नमः, अप आवाहयामि, स्थापयामि॥

पृथ्वी (मंगलके बायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

शुक्लवर्णां विशालाक्षीं कूर्मपृष्ठोपरिस्थिताम् ।
सर्वशस्याश्रयां देवींधरामावाहयाम्यहम् ॥

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म सप्रथाः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः पृथिपि इहागच्छ इह तिष्ठ पृथिव्यै नमः पृथिवीमावाहयामि,स्थापयामि ।

विष्णु (बुधके बायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

शङ्खचक्रगदापद्महस्तंगरुडवाहनम् ।
किरीटकुण्डलधरं विष्णुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पासुरे स्वाहा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि, स्थापयामि ।

इन्द्र (बृहस्पतिके बायें भागमें) आवाहन - स्थापन

ऐरावतगजारूढं सहस्राक्षं शचीपतिम् ।
वज्रहस्तंसुराधीशमिन्द्रमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ इन्द्र आसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः ।देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्रेहागच्छ इह तिष्ठ इन्द्राय नमः, इन्द्रमावाहयामि स्थापयामि ।

इन्द्राणी (शुक्रके बायें भागमें) आवाहन - स्थापन

प्रसन्नवदनां देवीं देवराजस्य वल्लभाम् ।
नानालङ्कारसंयुक्तां शचीमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ अदित्यै रास्नाऽसीन्द्राण्या उष्णीषः । पूषाऽसि धर्माय दीष्व ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राणि इहागच्छ इह तिष्ठ इन्द्राण्यै नमः, इन्द्राणीमावाहयामि, स्थापयामि ।

प्रजापति (शनिके बायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

आवाहयाम्यहं देवदेवेशं च प्रजापतिम् ।
अनेकव्रतकर्तारं सर्वेषां च पितामहम् ॥

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव ।यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयस्याम पतयो रयीणाम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः प्रजापतये नमः, प्रजापतिमावाहयामि, स्थापयामि।

सर्प (राहुके बायें भागमें) आवाहन स्थापन-

अनन्ताद्यान् महाकायान् नानामणिविराजितान्।
आवाहयाम्यहं सर्पान् फणासप्तकमण्डितान्॥

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु।ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेब्भ्यो नमः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सर्पा इहागच्छत इह तिष्ठत सर्पेभ्यो नमः, सर्पानावाहयामि, स्थापयामि।

ब्रह्मा (केतुके बायें भागमें) आवाहन - स्थापन-

हंसपृष्ठसमारूढंदेवतागणपूजितम्।
आवाहयाम्यहं देवं ब्रह्माणं कमलासनम्॥

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन इहागच्छ इह तिष्ठ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि, स्थापयामि।
नवग्रहोंके समान ही अधिदेवता तथा प्रत्यधिदेवताओंका भीप्रतिष्ठापूर्वक पाद्यादि उपचारोंसे पूजन करना चाहिये।

2.3.3 पंचलोकपाल स्थापन पूजन

नवग्रह - मण्डलमें ही चित्रानुसार निर्दिष्ट स्थानोंपर गणेशादिपञ्चलोकपालोंका बायें हाथमें अक्षत लेकर दाहिने हाथसे छोड़ते हुएआवाहन एवं स्थापन करे।

गणेशजीका आवाहन और स्थापन-

लम्बोदरं महाकायं गजवक्त्रं चतुर्भुजम्।
आवाहयाम्यहं देवं गणेशं सिद्धिदायकम्॥

ॐ गणानां त्वा गणपति - हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति हवामहेनिधीनां त्वा निधिपति हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपते ! इहागच्छ, इह तिष्ठ गणपतये नमः,गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि।

देवी दुर्गाका आवाहनऔर स्थापन

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।
नानाजातिकुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम्॥

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गे ! इहागच्छ इह तिष्ठ दुर्गायै नमः,दुर्गामावाहयामि, स्थापयामि ।

वायुका आवाहन और स्थापन-

आवाहयाम्यहं वायुं भूतानां देहधारिणम् ।
सर्वाधारं महावेगं मृगवाहनमीश्वरम् ॥

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर - सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् ।वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो ! इहागच्छ इह तिष्ठ वायवे नमः,वायुमावाहयामि, स्थापयामि ।

आकाशका आवाहन और स्थापन

अनाकारं शब्दगुणं द्यावाभूम्यन्तरस्थितम् ।
आवाहयाम्यहं देवमाकाशं सर्वगं शुभम् ॥

ॐ घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसिस्वाहा । दिशः प्रदिश आदिशो विदिश उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः आकाश ! इहागच्छ, इह तिष्ठ आकाशायनमः, आकाशमावाहयामि, स्थापयामि ।

अश्विनीकुमारोंका आवाहन और स्थापन-

देवतानां च भैषज्ये सुकुमारौ भिषग्वरौ ।
आवाहयाम्यहं देवावश्विनौ पुष्टिवर्द्धनौ ॥

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षतम्। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विनौ ! इहागच्छतम्, इह तिष्ठतम् अश्विभ्यांनमः, अश्विनावावाहयामि, स्थापयामि।

प्रतिष्ठा - तदनन्तर 'ॐ मनो जूति' इस मन्त्रसे अक्षत छोड़ते हुएपञ्चलोकपालोंकी प्रतिष्ठा करे ।इसके बाद ॐ पञ्चलोकपालेभ्यो नमः' इस नाम- मन्त्रसेगन्धादि उपचारोंद्वारा पूजनकर 'अनया पूजया पञ्चलोक-पालाः प्रीयन्ताम्, न मम' ऐसा कहकर अक्षत छोड़ दे।(यज्ञादि विशेष अनुष्ठानोंमें वास्तोष्पति एवं क्षेत्रपाल देवताकापृथक् पृथक् चक्र बनाकर उनकी विशेष पूजा की जाती है। नवग्रह-मण्डलके देवगणों में भी इनकी पूजा करनेका विधान है, अतः संक्षेपमें उसे भीयहाँ दिया जा रहा है)

वास्तोष्पति

वास्तोष्पतिं विदिक्कायं भूशय्याभिरतं प्रभुम् ।
आवाहयाम्यहं देवंसर्वकर्मफलप्रदम् ॥

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः ।यत् त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ।

ॐ भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पते ! इहागच्छ, इह तिष्ठ वास्तोष्पतयेनमः, वास्तोष्पतिमावाहयामि, स्थापयामि ।

क्षेत्रपालका आवाहन स्थापन-

भूतप्रेतपिशाचाद्यैरावृतं शूलपाणिनम् ।
आवाहये क्षेत्रपालं कर्मण्यस्मिन् सुखाय नः ॥

ॐ नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुर एतारमग्नेः ।एमेनमवृधन्नमृता अमर्त्य वैश्वानरं क्षैत्रजित्याय देवाः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वःक्षेत्राधिपते इहागच्छ इह तिष्ठ क्षेत्राधिपते ! इहागच्छ, इह तिष्ठ क्षेत्राधिपतयेनमः, क्षेत्राधिपतिमावाहयामि, स्थापयामि ।

तदनन्तर 'ॐ मनो जूति' इस मन्त्रसे प्रतिष्ठाकर 'ॐ क्षेत्रपालाय नमः ' इस नाम - मन्त्रद्वारा गन्धादि उपचारोंसे पूजा करे ।

3.3.4 दश दिक्पाल स्थापन पूजन

नवग्रह - मण्डलमें परिधिके बाहर पूर्वादि दसों दिशाओंके अधिपतिदेवताओं (दिक्पाल देवताओं) का अक्षत छोड़ते हुए आवाहन एवं स्थापनकरे ।

(पूर्वमें) इन्द्रका आवाहन और स्थापन-

इन्द्रं सुरपतिश्रेष्ठं वज्रहस्तं महाबलम् ।
आवाहये यज्ञसिद्ध्यै शतयज्ञाधिपं प्रभुम् ॥

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र हवे हवे सुहव शूरमिन्द्रम् ।ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्रेहागच्छ इह तिष्ठ इन्द्राय नमः,इन्द्रमावाहयामि, स्थापयामि ।

(अग्निकोणमें) अग्निका आवाहन और स्थापन-

त्रिपादं सप्तहस्तं च द्विमूर्धानं द्विनासिकम् ।
षण्नेत्रं च चतुः श्रोत्रमग्निमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँर आ सादयादिह ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने ! इहागच्छ, इह तिष्ठ अग्नये नमः,अग्निमावाहयामि, स्थापयामि ।

(दक्षिणमें) यमका आवाहन और स्थापन-

महामहिषमारूढंदण्डहस्तं महाबलम् ।
यज्ञसंरक्षणार्थाययममावाहयाम्यहम् ॥

ॐ यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मः पित्रे ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यम ! इहागच्छ इह तिष्ठ यमाय नमः,यममावाहयामि, स्थापयामि ।

(नैर्ऋत्यकोणमें) निर्ऋतिका आवाहन और स्थापन-

सर्व प्रेताधिपं देवं निर्ऋतिं नीलविग्रहम् ।
आवाहये यज्ञसिद्ध्यै नरारूढं वरप्रदम् ॥

ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य ।अन्यमस्मदिच्छ सा त इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋते इहागच्छ, इह तिष्ठ निर्ऋतये नमः,निर्ऋतिमावाहयामि, स्थापयामि ।

(पश्चिममें) वरुणका आवाहन और स्थापन-

शुद्धस्फटिकसंकाशं जलेशं यादसां पतिम् ।
आवाहये प्रतीचीशं वरुणं सर्वकामदम् ॥

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः ।अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश स मा न आयुः प्रमोषीः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण ! इहागच्छ इह तिष्ठ वरुणाय नमः,वरुणमावाहयामि, स्थापयामि ।

(वायव्यकोणमें) वायुका आवाहन और स्थापन-

मनोजवं महातेजं सर्वतश्चारिणं शुभम् ।
यज्ञसंरक्षणार्थायवायुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम्।वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः वायो ! इहागच्छ इह तिष्ठ वायवे नमः,वायुमावाहयामि, स्थापयामि ।

(उत्तरमें) कुबेरका आवाहन और स्थापन-

आवाहयामि देवेशं धनदं यक्षपूजितम् ।
महाबलं दिव्यदेहं नरयानगतिं विभुम् ॥

ॐ व्वय सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः। प्रजावन्त सचेमहि ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सोमेहागच्छ इह तिष्ठ मोमाय नमः,सेममावाहयामि, स्थापयामि ।

(ईशानकोणमें) ईशानका आवाहन और स्थापन-

सर्वाधिपं महादेवं भूतानां पतिमव्ययम् ।
आवाहये तमीशानं लोकानामभयप्रदम् ॥

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ईशान ! इहागच्छ, इह तिष्ठ ईशानाय नमः,ईशानमावाहयामि, स्थापयामि ।

(ईशान - पूर्वके मध्यमें) ब्रह्माका आवाहन और स्थापन-

पद्मयोनिं चतुर्मूर्तिं वेदगर्भं पितामहम् ।
आवाहयामि ब्रह्माणं यज्ञसंसिद्धिहेतवे ॥

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मन् ! इहागच्छ इह तिष्ठ ब्रह्मणे नमः,ब्रह्माणमावाहयामि, स्थापयामि ।
(नैर्ऋत्य-पश्चिमके मध्यमें) अनन्तका आवाहन और

स्थापन-

अनन्तं सर्वनागानामधिपं विश्वरूपिणम् ।
जगतां शान्तिकर्तारं मण्डले स्थापयाम्यहम् ॥
ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्मसप्रथाः ।

ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्तेहागच्छ इह तिष्ठ अनन्ताय नमः,अनन्तमावाहयामि, स्थापयामि ।
प्रतिष्ठा - इस प्रकार आवाहन कर ॐ मनो' इस मन्त्रसे अक्षत छोड़तेहुए प्रतिष्ठा करे। तदनन्तर निम्नलिखित नाम- मन्त्रसे यथालब्धोपचारपूजन करे- 'ॐ इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्यो नमः ।' इसके बाद 'अनयापूजया इन्द्रादिदशदिक्पालाः प्रीयन्ताम्, न मम' - ऐसा उच्चारण करअक्षत मण्डलपर छोड़ दें।

बोध प्रश्न

1. ग्रह कितने हैं।
   (क) 7 (ख) 8 (ग) 5 (घ) 9
2. ॐ **आकृष्णेन रजसा** मंत्र किस ग्रह का आवाहन मंत्र है।

(क) सूर्य (ख) चन्द्रमा (ग)मंगल (घ) बुध

3. ॐ **कया नश्चित्र आभुवदूती** मंत्र किस ग्रह का आवाहन मंत्र है।

(क) केतु (ख) राहु (ग) मंगल (घ) बुध

4. ॐ **अग्निम्मूर्द्धा दिवः ककुत्पत्तिः** मंत्र किस ग्रह का आवाहन मंत्र है।

(क)मंगल (ख) राहु (ग)गुरू (घ) बुध

5. पीतवर्ण किस ग्रह का है।

(क)केतु (ख) राहु (ग)गुरू (घ) बुध

2.4 सारांश

नवग्रह पूजन भारतीय आध्यात्मिक और ज्योतिषीय परंपरा में अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। यह पूजन सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु के संतुलन को स्थापित करने और उनके अशुभ प्रभावों को शांत करने के लिए किया जाता है। प्रत्येक ग्रह का हमारे जीवन पर एक विशेष प्रभाव होता है, और यदि ये ग्रह जन्मकुंडली में प्रतिकूल स्थिति में हों, तो जीवन में अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं, जैसे आर्थिक संकट, स्वास्थ्य संबंधी परेशानियाँ, मानसिक तनाव, वैवाहिक कलह और करियर में बाधाएँ। नवग्रह पूजन के माध्यम से इन नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है और शुभ फलों की प्राप्ति की जा सकती है।

नवग्रह पूजन की विधि वैदिक परंपराओं पर आधारित होती है, जिसमें सर्वप्रथम गणपति पूजन कर शुभारंभ किया जाता है। इसके बाद नवग्रहों के लिए दीप प्रज्वलित किए जाते हैं और प्रत्येक ग्रह के लिए विशेष मंत्रों का उच्चारण किया जाता है। हवन, जप और तर्पण के द्वारा ग्रहों की कृपा प्राप्त करने के लिए विशेष अनुष्ठान किए जाते हैं। ग्रहों को प्रसन्न करने के लिए उनके अनुकूल वस्त्र, पुष्प, धूप, धातु और रत्न अर्पित किए जाते हैं। साथ ही, नवग्रहों के शांति हेतु विशेष दान किए जाते हैं, जैसे सूर्य के लिए तांबा और गुड़, चंद्र के लिए चावल और सफेद वस्त्र, मंगल के लिए मसूर और लाल वस्त्र, बुध के लिए हरे मूंग और हरा वस्त्र, गुरु के लिए पीले वस्त्र और चने की दाल, शुक्र के लिए सफेद चंदन और सुगंधित वस्तुएँ, शनि के लिए काले तिल और लोहे की वस्तुएँ, राहु के लिए उड़द दाल और केतु के लिए कंबल एवं काले तिल का दान शुभ माना जाता है।

इस पूजन से व्यक्ति के जीवन में सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है और ग्रहों की कृपा से अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। नवग्रह पूजन करने से मानसिक शांति मिलती है, आत्मबल में वृद्धि होती है, स्वास्थ्य में सुधार होता है और आर्थिक समृद्धि प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त, यह पूजन वैवाहिक जीवन में सामंजस्य स्थापित करने, शत्रु बाधाओं को दूर करने और करियर में सफलता प्राप्त करने में सहायक होता है। नवग्रहों की कृपा से जीवन में संतुलन बना रहता है और व्यक्ति अपने आध्यात्मिक एवं सांसारिक लक्ष्यों को सहजता से प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार, नवग्रह पूजन केवल एक धार्मिक

अनुष्ठान नहीं, बल्कि एक प्रभावशाली आध्यात्मिक साधन है, जो व्यक्ति के संपूर्ण जीवन को प्रभावित करता है और उसे शांति, समृद्धि एवं सफलता की ओर अग्रसर करता है।

2.5 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. (घ)
2. (क)
3. (ख)
4. (क)
5. (ग)

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रहशान्ति प्रद्धति: - श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार
नित्यकर्म पूजाप्रकाश – गीताप्रेस गोरखपुर
मन्त्रमहोदधि – चौखम्भा ओरियन्टालिया

1.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सूर्यादि नवग्रहों का वैदिक मंत्र को लिखिए।
2. सभी अधिदेवताओं का स्थापन मंत्रों का वर्णन करें।
3. प्रत्यधिदेवताओं का स्थापन मंत्रों का वर्णन करें।
4. पंचलोकपाल देवताओं का मंत्रों को लिखें।
5. दश दिक्पाल स्थापन तथा पूजन विधि का वर्णन करें।

इकाई – 3 नवग्रह मण्डल निर्माण

इकाई की संरचना –

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 नवग्रह मण्डल निर्माण विधि
3.4 मण्डल में स्थापन-आवाहन के मन्त्र
3.5 सारांश
3.6 सहायक पाठ्य सामग्री
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 221 के प्रथम खण्ड तृतीय इकाई नवग्रह मण्डल निर्माण नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। इस इकाई में आप मण्डल निर्माण से सम्बन्धित बातों को जान पाएंगें। इसमें आप नवग्रहों का मण्डल में किस दिशा में स्थान, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता, पञ्चलोकपाल, दशदिक्पाल के क्रम व उनके मण्डल में स्थान को आसानी से समझ पायेंगें।

3.2 उद्देश्य

- ❖ मण्डल निर्माण विधि को जान पायेंगें।
- ❖ ग्रहों के मण्डल में स्थान को समझ पायेंगें।
- ❖ मण्डल में अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता,पञ्चलोकपाल, दशदिक्पाल के क्रमों को समझ सकेंगें।
- ❖ मण्डल में स्थापन विधि को जान पायेंगें।

3.3 नवग्रह मण्डल निर्माण विधि

किसी भी पूजा-अनुष्ठान-यज्ञ में नवग्रह मंडल अवश्य ही बनाया जाता है। बहुत बार ऐसा देखने में आता जाता है कि (यज्ञादि को छोड़कर) सभी पूजा करने के बाद हवन कुंड कही और जाकर बना दिया जाता है। परन्तु इसका विचार नही किया जाता वहां से नवग्रह मंडल किस दिशा में है, जो अनुचित है। मंडप से बाहर जाकर हवन करने की शास्त्रोक्त विधि केवल १ ही है और वह विवाह में किया जा सकता है और विवाह में नवग्रह मंडल की आवश्यकता ही नहीं होती है। नियमानुसार नवग्रह मंडल हवन कुंड के ईशानकोण में बनाया जाना चाहिये।

ईशाने मण्डलं कृत्वा ग्रहाणां स्थापनं ततः।
वृत्तमण्डलमादित्यमर्धचन्द्रं निशाकरम् ।।
त्रिकोणं मङ्गलं चैव बुधं च धनुषाकृतिम्।
गुरुमष्टदलं प्रोक्तं चतुष्कोणं च भार्गवम् ।।
नराकृति शनि विन्याद्राहुं च मकराकृतिम्।
केतुं खड्गसमं ज्ञेयं ग्रहमण्डलके शुभे।।

नवग्रह मंडल बनाने के लिये महत्वपूर्ण बातें :

- नवग्रह मंडल चौकोर पीढ़े या पट्टे पर बनाना चाहिये।
- नवग्रह मंडल के लिये भी वेदी का आकार न्यूनतम हस्त मात्र अवश्य हो।

- नवग्रह मंडल में ४-४ रेखायें करने पर कुल ९ कोष्ठक बनाये।
- नवग्रह मंडल में भी मेखला आवश्यक होता है।

यदि नवग्रह मंडल न बनाया गया हो तो कलश पर भी पूजा की जा सकती है अथवा अष्टदल पर भी पूजा की जा सकती है।

वृत्तमण्डलमादित्यं चतुरस्रं निशाकरम् ।
त्रिकोण मङ्गलं चैव बुधं वै बाणसत्रिभम् ।।
गुरवे पट्टिशाकारं पञ्चकोणं भृगुं तथा ।
मन्दे थ धनुषाकारं सूर्पाकारं तु राहवे।।
केतवे च ध्वजाकारं मण्डलानि क्रमेण तु ।
शुक्राकौं प्राङ्मुखो ज्ञेयौ गुरु-सौम्यावुदङ्मुखौ।।
प्रत्यङ्मुखौ शनि-सोमौ रोषा दक्षिणतो मुखाः।
मध्ये तु भास्कर विन्याच्छशिनं पूर्वदक्षिणे।।
दक्षिणे लोहितं विन्द्याद् बुर्थ पूर्वोतरेण तु ।
उत्तरेण गुरुं विन्यात् पूर्वेणैव तु भार्गवम्।
पक्षिने शनि विन्द्राद्वाई दक्षिण पश्चिमे।
पश्चिमोतरतः केतुं इत्येषा यहसंस्थितिः।।
आदित्याभिमुखाः सर्वे साऽधिप्रत्यधिदेवताः।
अधिदेवता दक्षिणे वामे प्रत्यधिदेवताः ।।
अरुणी सूर्य-भीमी च खेती शुक्रनिशाकरी ।
हरितवणों बुधचैव पोतवणों गुरुस्तथा।।
कृष्णवर्णाः शनि-राहु-केलवस्तु तथैव च।

नवग्रह मण्डल बनाने के लिये सर्वप्रथम मण्डल की तीन मेखलाओं को अवश्य बनाना चाहिये। बिना मेखला के मण्डल पूर्ण नही माना जाता है, उसके बाद ४-४ रेखायें करने पर ९ कोष्टक बन जायेंगें। फिर मध्य मे मध्य में लाल चावल या लाल दाल से गोलाकार करके सूर्य की आकृति को बनाया जाता है। उसके बाद मण्डल के अग्निकोण में स्वेत चावलों से अर्धचन्द्राकार चन्द्र की आकृति को बनाया जाता है। फिर मण्डल के दक्षिण में लाल चावलों से या लाल दाल से त्रिकोण आकृति मंगल के स्वरूप की बनाई जाती है। उसके बाद मण्डल के ईशानकोण में चावलों को रंग से हरा करके या फिर हरी दाल से धनुष की आकृति से बुध के स्वरूप को बनाया जाता है। फिर बाद में मण्डल के उत्तर में पीले चावलों से या पीली चने की दाल से चतुरस्र बृहस्पति की आकृति को बनाया जाता है। उसके बाद में मण्डल के पूर्व में श्वेत चावलों से पञ्चास्र या षडस्र शुक्र की आकृति का

निर्माण किया जाता है। फिर बाद में मण्डल के पश्चिम में, काले तिल या फिर काले उड़द से मनुष्य की आकृति, या धनुषाकार आकृति को बनाया जाता है। उसके बाद मण्डल के नैऋत्यकोण में काले तिल से या काले उड़द से सर्प की आकृति का निर्माण किया जाता है। और अंत में मण्डल के वायव्यकोण में काले तिलों से या फिर काले उड़द से कृष्ण खड्ग या काली ध्वजा की आकृति का निर्माण किया जाता है।

अधिदेवता-

अब, उसी नवग्रहवेदी पर क्रमशः प्रत्येक ग्रहों के कोष्ठकों में दायीं ओर अधिदेवताओं के स्थान के बारे में बताया जा रहा है।

1. शिव- सूर्य के दायें भाग में शिव को स्थापित किया जाता है।
2. उमा- चन्द्रमा के दायें भाग में उमा को स्थापित किया जाता है।
3. स्कन्ध- मंगल के दायें भाग में स्कन्ध को स्थापित किया जाता है।
4. विष्णु- बुध के दायें भाग में विष्णु को स्थापित किया जाता है।
5. ब्रह्मा- गुरु के दायें भाग में ब्रह्मा को स्थापित किया जाता है।
6. इन्द्र- शुक्र के दायें भाग में इन्द्र को स्थापित किया जाता है।
7. यम- शनि के दायें भाग में यम को स्थापित किया जाता है।
8. काल-राहु के दायें भाग में काल को स्थापित किया जाता है।
9. चित्रगुप्त- केतु के दायें भाग में चित्रगुप्त को स्थापित किया जाता है।

प्रत्यधिदेवता-

नव ग्रह मण्डल में ही प्रत्यधिदेवताओं के स्थान के बारे में चर्चा करते है। अब उसी का क्रम यहाँ बताया जा रहा है।

1. अग्नि- सूर्य के बायें भाग में अग्नि प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।
2. अप् (अर्थात् जल)- चन्द्रमा के बायें भाग में अप् प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।
3.. पृथ्वी- मंगल के बायें भाग में पृथ्वी प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।
4. विष्णु- बुध के बायें भाग में विष्णु प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।
5. इन्द्र- गुरु के बायें भाग में इन्द्र प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।
6. इद्राणी- शुक्र के बायें भाग में इद्राणी प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।
7. प्रजापति- शनि के बायें भाग में प्रजापति प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।
8. सर्प- राहु के बायें भाग में सर्प प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।

9. ब्रह्मा- केतु के बायें भाग में ब्रह्मा प्रत्यधिदेवता को स्थापित किया जाता है।

पञ्चलोकपाल –

ग्रह मण्डल के क्रम में प्रत्यधिदेवताओं के बाद पञ्चलोकपालों के क्रम को यहाँ बताया जा रहा है। इन पञ्चलोकपालों का क्रम उत्तरोत्तर ऊपर की और होता है।

1. गणेश – केतु ग्रह का जो कोष्टक है, उसमे स्थापित किता जाता है।
2. दुर्गा- इसे भी केतु ग्रह का जो कोष्टक है, उसमे स्थापित किता जाता है।
3. वायु- गुरु ग्रह का जो कोष्टक होता है, उसमें स्थापित किया जाता है।
4. आकाश- गुरु ग्रह का जो कोष्टक होता है, उसमें स्थापित किया जाता है।
5. अश्विनीकुमार- गुरु ग्रह का जो कोष्टक होता है, उसमें स्थापित किया जाता है।

दशदिक्पाल-

मण्डल में पञ्चलोकपालों के बाद दशदिक्पालो का भी स्थान है। इसी क्रम में अब दशदिक्पालो के मण्डल में स्थान के बारे में चर्चा करेंगें। किस दिशा से शुरू करते है,इसे यहाँ बताया जा रहा है।

1. इन्द्र- मण्डल के पूर्व में इन्द्र को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण पीला है।
2. अग्नि- मण्डल के अग्निकोण में अग्नि को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण लाल है।
3. यम- मण्डल के दक्षिण में यम को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण काला है।
4. नैर्ऋति- मण्डल के नैर्ऋत्यकोण में नैर्ऋति को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण नीला है।
5. वरुण- मण्डल के पश्चिम में वरुण को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण काला है।
6. वायु- मण्डल के वायव्यकोण में वायु को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण धूम्र है।
7. कुबेर- मण्डल के उत्तर में कुबेर को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण पीला है।
8. ईशान- मण्डल के ईशान कोण में ईशान को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण सफेद है।
9. ब्रह्मा- मण्डल के ईशान-पूर्व के बीच में ब्रह्मा को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण पीला है।
10. अनन्त- मण्डल के नैर्ऋत्य-पश्चिम के मध्य में अनन्त को स्थापित किया जाता है। जिसका वर्ण नीला है।

इसके उपरांत मण्डल में वास्तु को, क्षेत्रपाल को, तथा ईस्ट देवता,ग्राम देवता, स्थान देवता का भी स्थापन किया जाता है।

नव ग्रह मण्डल में केवल नौ ग्रहों को ही स्थापित नही किया जाता बल्कि अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता, पंचलोकपाल, दसदिक्पाल का भी पूजन किया जाता है।

मण्डल के निर्माण हो जाने के उपरान्त इसमें उनका आवाहन व स्थापन किया जाता है।

3.4 मण्डल में स्थापन-आवाहन के मन्त्र

नव ग्रहों का आवाहन-स्थापन मन्त्र-

सर्वप्रथम बात की जाय मण्डल में स्थापन या आवाहन की तो प्रथम नवग्रहों का आवाहन व स्थापन किया जाता है। क्योकि किसी भी मण्डल का महत्व तभी होता है, जब उस मण्डल में जिसके निमित्त उस मण्डल का निर्माण किया गया है, वह देवता उसमे आवाहित व स्थापित किये जाय अन्यथा मण्डल अर्थ विहीन है, तो इसी क्रम से नवग्रह का जो मण्डल है,उसमे मन्त्रों के द्वारा यहाँ आवाहन व स्थापन बताया जा रहा है। जो निम्नलिखित प्रकार से है-

सूर्य- ॐ जपाकुसुम संकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् । तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः कलिंग देशोद्भव काश्यपगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य । इहागच्छ इहतिष्ठ ॐ सूर्याय नमः॥

चन्द्र- ॐ दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्। ज्योत्सनापतिं निशानाथं सोममावाहयाम्यहम्॥ ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोद्भव आत्रेयगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम । इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ सोमाय नमः ।

भौम- ॐ धरणीगर्भ संभूतं विद्युत्कांति समप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अवन्तिदेशोद्भव भारद्वाजगोत्र रक्तवर्ण भो भौम ।इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ भौमाय नमः ।

बुध- ॐ प्रियंगुकलिका भासं रूपेणाप्रतिमं बुधम् । सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयगोत्र पीतवर्ण भो बुध । इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ बुधाय नमः ।

बृहस्पति- ॐ देवानां च मुनीनां च गुरुं काञ्चनसन्निभम्। वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम्॥ ॐ भूर्भुवः स्व सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो गुरो। इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ बृहस्पतये नमः।

शुक्र- ॐ हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्। सर्वशास्त्र प्रवक्तारं भार्गवमावाहयाम्यहम्॥ ॐ भुर्भूवः स्वः भोजकटदेशोद्भव भार्गवगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र। इहागच्छ, इहतिष्ठ ॐ शुक्राय नमः।

शनि- ॐ नीलांबुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् । छाया मार्तण्ड सम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर । इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ शनैश्चराय नमः ।

राहु- ॐ अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् । सिंहिकागर्भ संभूतं राहुमावाहयाम्यहम् । ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनपुरोद्भव पैठीनसगोत्र कृष्णवर्ण भो राहो । इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ राहवे नमः ।

केतु- ॐ पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् । रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुद्भव जैमिनिगोत्र धूम्रवर्ण भो केतो । इहागच्छ, इहतिष्ठ, ॐ केतवे नमः ।

नव ग्रहों के बाद अब अधिदेवताओं के स्थापन व आवाहन के मन्त्र-

शिव-ॐ एह्येहि विश्वेश्वरनस्त्रिशूलकपालखट्वाङ्गधरेण सार्धम् । लोकेश यक्षेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ईश्वराय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

उमा- ॐ हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम् । लम्बोदरस्य जननीमुमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः उमायै नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

स्कंध- ॐ रुद्रतेजः समुत्पन्नं देवसेनाग्रगं विभुम् । षण्मुखं कृत्तिकासूनुं स्कन्दमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः स्कन्दाय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

विष्णु- ॐ देवदेवं जगन्नाथं भक्तानुग्रहकारकम् । चतुर्भुजं रमानाथं विष्णुमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः विष्णवे नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

ब्रह्मा- ॐ कृष्णाजिनाम्बरधरं पद्मसंस्थं चतुर्मुखम् । वेदाधारं निरालम्बं विधिमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ब्रह्मणे नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

इन्द्र- ॐ देवराजं गजारुढं शुनासीरं शतक्रतुम्। वज्रहस्तं महाबाहुमिन्द्रमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः इन्द्राय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

यम- ॐ धर्मराजं महावीर्यं दक्षिणादिक्पतिं प्रभुम् । रक्तेक्षणं महाबाहुं यममावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः यमाय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

काल- ॐ अनाकारमन्ताख्यं वर्तमानं दिने-दिने। कलाकाष्ठादिरुपेण कालमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः कालाय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

चित्रगुप्त- ॐ धर्मराजसभासंस्थं कृताकृत विवेकिनम् । आवाहये चित्रगुप्तं लेखनीपत्रहस्तकम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः चित्रगुप्ताय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

अधिदेवताओं के बाद प्रत्यधि देवतओं का स्थापन व आवाहन मन्त्र-

अग्नि- ॐ रक्तमाल्याम्बर धरं रक्तपद्मासनस्थितम् । वरदाभयदं देवमग्निमावाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवःस्वः अग्नये नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

अप्- ॐ आदिदेवसमुद्भूतजगच्छुद्धिकराः शुभाः। ओषध्याप्यायनकरा अप आवाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवःस्वः अद्भ्यो नमः, इहागच्छत, इह तिष्ठत ।

पृथ्वी- ॐ शुक्लवर्णां विशालाक्षीं कूर्मपृष्ठोपरिस्थिताम् । सर्वशस्याश्रयां देवीं धरामावाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवःस्वः पृथिव्यै नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ।

विष्णु- ॐ शङ्खचक्रगदापद्महस्तं गरुडवाहनम् । किरीटकुण्डलधरं विष्णुमावाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवःस्वः विष्णवे नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ।

इन्द्र- ॐ ऐरावतगजारुढ़ं सहस्राक्षं शचीपतिम् । वज्रहस्तं सुराधीशमिन्द्रमावाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवःस्वः इन्द्राय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

इन्द्रणी- ॐ प्रसन्नवदनां देवीं देवराजस्य वल्लभाम्। नानालङ्कारसंयुक्तां शचीमावाहयाम्यहम्॥
ॐ भूर्भुवःस्वः इन्द्राण्यै नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ।

प्रजापति- ॐ आवाहयाम्यहं देव देवेशं च प्रजापतिम् । अनेकव्रतकर्तारं सर्वेषां च पितामहम् ॥
ॐ भूर्भुवःस्वः प्रजापतये नमः, प्रजापतिमावाहयामि,स्थापयामि ।

सर्प- ॐ अनन्ताद्यान् महाकायान् नानामणिविराजितान्। आवाहयाम्यहमं सर्पान् फणासप्तकमण्डितान्॥ ॐ भूर्भुवःस्वः सर्पेभ्यो नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

ब्रह्मा- ॐ हंसपृष्ठसमारुढ़ं देवतागण पूजितम्। आवाहयाम्यहं देवं ब्रह्माणं कमलासनम् ॥
ॐ भूर्भुवःस्वः ब्रह्मणे नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ।

प्रत्यधिदेवताओं के बाद पञ्चलोकपालों के आवाहन व स्थापन मन्त्र-

गणेश- ॐ लम्बोदरं महाकायं गजवक्त्रं चतुर्भुजं । आवाहयाम्यहमं देवं गणेशं सिद्धिदायकम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः गणपते ! इहागच्छ,इह तिष्ठ, गणपतये नमः ।

दुर्गा- ॐ पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे । नानाजातिकुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गे ! इहागच्छ, इह तिष्ठ, दुर्गायै नमः ।

वायु- ॐ आवाहयाम्यहं वायुं भूतानां देहधारिणाम् । सर्वाधारं महावेगं मृगवाहनमीश्वरम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः वायो ! इहागच्छ, इह तिष्ठ, ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः।

आकाश- ॐ अनाकारं शब्दगुणं द्यावाभूम्यन्तरस्थितम् । आवाहयाम्यहं देवमाकाशं सर्वगं शुभम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः आकाश ! इहागच्छ, इह तिष्ठ, ॐ भूर्भुवः स्वः आकाशाय नमः ।

अश्विनी- ॐ देवतानां च भैषज्ये सुकुमारौ भिषग्वरौ । आवाहयाम्यहं देवावश्विनौ पुष्टिवर्द्धनौ ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विनौ ! इहागच्छतं, इह तिष्ठतं, ॐ भूर्भुवः स्वः अश्विभ्याम् नमः ।

अब दश दिक्पालों के आवाहन व स्थापन मन्त्रो को बताया जा रहा है। जो निम्न प्रकार से है।

इन्द्र- ॐ इन्द्रं सुरपतिश्रेष्ठं वज्रहस्तं महाबलम् । आवाहये यज्ञसिद्ध्यै शतयज्ञाधिपं प्रभुम् ॥
ॐ इन्द्र, इहागच्छ, इह तिष्ठ । ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः।
अग्नि- ॐ त्रिपादं सप्तहस्तं च द्विमूर्धानं द्विनासिकम् । षण्नेत्रं च चतुः श्रोत्रमग्निमावाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छ, इह तिष्ठ ।ॐ भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः

यम- ॐ महामहिषमारुढं दण्डहस्तं महाबलम्। यज्ञसंरक्षनार्थाय यममावाहयाम्यहम्॥
ॐ भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ, इह तिष्ठ। ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय नमः।
नैर्ऋती- ॐ निर्ऋत्यां खड्गहस्तं च नरारुढ़ं वरप्रदम्। आवाहयामि यज्ञस्य रक्षार्थं नीलविग्रहम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः निरृत इहागच्छ, इह तिष्ठ । ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः।

वरुण- ॐ शुद्धस्फटिकसंकाशं जलेशं यादसां पतिम्। आवाहये प्रतीचीशं वरुणं सर्वकामदम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ, इह तिष्ठ । ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः।

वायु- ॐ अनाकारं महौजस्कं व्योमगं वेगवद् गतिम्। प्राणिनां प्राणदातारं वायुमावाहयाम्यहम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः वायु इहागच्छ, इह तिष्ठ । ॐ भूर्भुवः स्वः वायवे नमः।

कुबेर- ॐ आवाहयामि देवेशं धनदं यक्षपूजितम्। महाबलं दिव्यदेहं नरयानगतिं विभुम् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः कुबेर इहागच्छ, इह तिष्ठ । ॐ भूर्भुवः स्वः कुबेराय नमः ।

ईशान- ॐ सर्वाधिपं महादेवं भूतानां पतिमव्ययम्। आवाहये तमीशानं लोकानामभयप्रदम्।। ॐ इन्द्र, इहागच्छ, इह तिष्ठ। ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः।

ब्रह्मा- ॐ पद्मयोनिं चतुर्मूर्तिं वेदगर्भं पितामहम्। आवाहयामि ब्रह्माणं यज्ञसंसिद्धिहेतवे ।। ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मण इहागच्छ इह तिष्ठ। ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः।

अनन्त- ॐ अनन्तं सर्वनागानामधिपं विश्वरुपिणम्। जगतां शान्तिकर्तारं मण्डले स्थापयाम्यहम्।। ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्त इहागच्छ इह तिष्ठ। ॐ भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः।

3.5 सारांश

इस इकाई को पड़ने के बाद आप यह जान पाए होंगे की मण्डल का निर्माण किस तरीके से किया जाता है। तथा मण्डल में कौन सा ग्रह किस दिशा में रहता है, व ग्रहों को मण्डल में किस प्रकार से उनकी आकृति का निर्माण किन-किन वस्तुओं से की जा सकती है। उसी क्रम में आप यह भी जानने में सफल हो पाए होंगे की मण्डल में अधिदेवताओं का स्थान कौन सा होता है। तथा मण्डल में प्रत्यधिदेवताओं का स्थान कौन सा है, उसी प्रकार से आपने यह भी जाना होगा की पञ्चलोकपाल व दश दिक्पालों का स्थान मण्डल में कहाँ-कहाँ होता है। इसना जान लेने के उपरान्त आपने ग्रहों को किस प्रकार से स्थापित व उनका आवाहन किया जाता है यह भी आप इस इकाई के माध्यम से जा पाए होंगे।

बोध प्रश्न –

1. सूर्य का मण्डल में कौन सा स्थान है।

क. मध्य ख. ईशान ग. दक्षिण घ. पश्चिम

2. मंगल का मण्डल में कौन सा स्थान है।

क. वायव्य ख. ईशान ग. दक्षिण घ. पश्चिम

3. शनि का मण्डल में कौन सा स्थान है।

क. पूर्व ख. ईशान ग. दक्षिण घ. पश्चिम

4. पञ्च लोकपालों में गणेश जी का मण्डल में कौन सा स्थान है।

क. गुरु के कोष्टक में ख. केतु के कोष्टक में ग. मंगल के कोष्टक में घ. शनि के कोष्टक में

5. पञ्च लोकपालों में वायु का मण्डल में कौन सा स्थान है।

क. गुरु के कोष्टक में ख. केतु के कोष्टक में ग. मंगल के कोष्टक में घ. शनि के कोष्टक में

6. दश दिक्पालो को मण्डल में स्थापित किया जाता है।

क. केवल मध्य में ख. केवल ईशान कोण में ग. केवल दक्षिण कोण में घ. मण्डल के चारों ओर

3.6 सहायक पाठ्य सामग्री

अनुष्ठान प्रकाश
मन्त्र जप विधि
कर्मठ गुरु
मन्त्र सागर
मन्त्र पूजा विधान

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 कर्मठ गुरु मुकुन्द बल्लभ मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी
2 मन्त्र रहस्य डा० नारायण दत्त हिन्द पुस्तक भण्डार दिल्ली
3 मन्त्र सागर सावित्री शर्मा चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी
4 वैदिक मन्त्र विद्द्या डा० चमन लाल गौतम संस्कृति सस्थान ख्वाजा क़ुतुब वेदनगर बरेली
5 सर्व देव पूजा पद्यती शिव दत्त मिश्र चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. क
2. ग
3. घ
4. ख
5. क
6. घ

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मण्डल निर्माण विधि का सविस्तार वर्णन करें।
2. अधिदेवता ,प्रत्यधिदेवताओं का मण्डल में स्थापन व आवाहन विधि का सविस्तार वर्णन कीजिए।

इकाई -4 नवग्रहों का पूजन में महत्व

4 .1 प्रस्तावना

4 .2 उद्देश्य

4 .3 नवग्रह परिचय

4 .4 कर्मकांड में नवग्रह की भूमिका

4 .5 वैदिक मंत्र के द्वारा नवग्रह पूजन

4 .6 पोराणिक मंत्रो के द्वारा नवग्रह पूजन

4 .7 नवग्रह का महत्व

4.8 सारांश

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

4.10 अभ्यास प्रश्न

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

4 .1 प्रस्तावना

प्रिय अध्येताओ प्रस्तुत इकाई बी.ए.के .एन (221) पाठ्यक्रम से सम्बन्धित **हैं। जिसमे** भारतीय प्राचीन ज्ञान परम्परा मैं कर्मकांड का विशेष उल्लेख मिलता हैं। जिसमें से ज्ञान कांड, उपासना कांड, कर्मकांड, इन तीनों का विस्तार पूर्वक उल्लेख मिलता हैं। जिसके माध्यम से व्यक्ति के इस संसार मैं आनें का उद्देश्य क्या रहा होगा तथा मनुष्य किन किन अवस्थाओं मैं कर्मकांड के माध्यम से अपना कार्य सम्पन्न करता होगा इन सभी का ज्ञान हमें कर्मकांड के माध्यम से होता हैं। इस ईकाई मैं हम कर्मकांड से सम्बंधित विषयों का, नवग्रह पूजन, नवग्रह पूजन का महत्व, वैदिक, लौकिक, मंत्रों के द्वारा पूजन विधान को जानने का प्रयास करेंगे जिससे कर्मकांड से होंने वाली विधियों के द्वारा जनसाधारण का कल्याण हो सकें। वस्तुत: षोडश संस्कार के अन्तर्गत मनुष्यों के सभी कार्य सम्पन्न किया जाता हैं जो कर्मकांड का एक मुख्य भाग जिसे कहा जा सकता हैं। जिसके द्वारा जातक के पाप कर्मों को कर्मकांड के द्वारा दूर किया जा सके । कर्म यानि मे परिश्रम, कांड यानि उसका विस्तार कर्म के द्वारा सही तथा गलत कर्मों को करनें के बाद जिसका प्रायश्चित किया जाय जिसके द्वारा व्यक्ति के कर्मैं की शुद्धता हो सके वह कर्मकांड कहलाता हैं। आइए हम सभी इस ईकाई मैं नवग्रह क्या हैं इनका पूजन कैसे किया जाता हैं। इन सभी का विधि विधान से पूजन के बारे मैं अध्ययन करना प्रस्तुत इकाई का ध्येय हैं ।

4 .2 उद्देश्य

प्रिय अध्येताओ प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पच्शात आप –

- ❖ नवग्रह क्या हैं ? जान सकेंगे।
- ❖ वैदिक मंत्रो के द्वारा नवग्रह के बारे में समझ सकेंगे ।
- ❖ पोराणिक मंत्रो के बारे में जान पायेंगे ।
- ❖ कर्मकांड और नवग्रह का क्या सम्बन्ध है ? अवगत हो सकेंगे।

4.3 नवग्रह परिचय

भारतीय ज्योतिष शास्त्र मैं नवग्रहों के आधार पर ही जातक का भविष्य फल निश्चित किया जाता हैं ये नवग्रह कोन कोन से है जिसका प्रभाव जातक के जीवन मैं बार-बार पडत रहता हैं। ग्रहों की दशा गति के कारण इसका प्रभाव जातक पर पड़ता रहता हैं। इसका अनुमान जातक की जन्मकुंडली से लगाया जाता हैं। सूर्यादि नवग्रह सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु, ये नवग्रह के नाम से जाने जाते हैं, जिसकि विचार गोचर कुंडली के माध्यम से बार बार किया जाता हैं,ज्योतिषशास्त्र के अनुसार 12 राशियां होती हैं, प्रत्येक राशि मैं प्रत्येक ग्रह अपनी गति से प्रवेश करता रहता हैं इसे ग्रह चाल कहा जाता हैं। एक राशि से दूसरे राशि मैं प्रवेश करनें पर भी अन्य राशियों पर उसका सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं। ग्रहों के स्वभाव के अनुसार जातक का स्वभाव मैं भी उसी तरह दिखाई पड़ता हैं। जैसे सूर्य अग्नि तत्व से युक्त होने के कारण उसका प्रभाव व्यक्ति के पित, क्षोभ, जलन, ब्रेन हेमरेज जैसे बीमारियों से सूर्य का सम्बन्ध रहता हैं। चन्द्र ग्रह का जलोदर, विषूचिका जैसे रोगों से सम्बंधित होते हुए जातक को उसी प्रकार रोगी बनाता हैं। भौम ग्रह का जलन, दुर्घटना, रक्तविकार, बवासीर, जैसे सम्बन्ध, बुध ग्रह का पाडु भ्रान्ति,यकृत रोग से सम्बन्ध, गुरु ग्रह का उदय विकार, शुक्र ग्रह का वीर्य विकार,प्रमेह,मधुमेह,,शनि ग्रह का वातज रोग,कैंसर ,तथा राहु ग्रह का कुष्ठ, छूतरोग,विष, केतु का क्षय ग्रह का हृदयगति, इत्यादि घटनाओं से जातक परेशान रहता हैं इन नवग्रहों के माध्यम से जातक का

4.4 कर्मकांड में नवग्रह की भूमिका

प्रायः शास्त्रीय ग्रंथो मैं वर्णन मिलता हैं कि ज्योतिष शास्त्र का सम्बन्ध कर्मकांड से और कर्मकांड का सम्बन्ध ज्योतिष से रहा हैं। एक दूसरे के पूरक कहे गये हैं। इन दोनों के बिना कर्मकांड, या ज्योतिष का विचार किया जाय तो यह अधूरा दिखाई पड़ता हैं। ज्योतिषशास्त्र वेद पुरुष के नेत्र के रूप मैं भविष्य को निर्धारित करता हैं कि आने वाली समस्याओं से मनुष्य किसके माध्यम से अपनी समस्या का समाधान कर सके तब वहां स्मरण कर्मकांड का आता हैं जिसे पौरोहित्य कर्म भी कहा जाता हैं। इसी प्रकार से ज्योतिष जातक की कुंडली को देखकर समस्याओं को बताता है तो कर्मकांड वैदिक तथा लौकिक मंत्रों के द्वारा उसका समाधान विधिवत करता रहता हैं। यहां पर ज्ञानकांड, उपासना कांड, कर्मकांड इन तीनों के माध्यम से ही मनुष्य का शास्त्रों के माध्यम से समाधान किया जाता हैं। वस्तुत हमनें अनेक प्रकार के ग्रंथों मैं अवलोकन किया हैं कि जातक का जीवन ज्योतिष शास्त्र मैं

नवग्रहों पर ही आधारित हैं कब वह जातक क्या कर रहा हैं या भविष्य मैं क्या करेगा उन सभी का विचार ज्योतिष शास्त्र मैं नवग्रहों के माध्यम से किया जाता हैं। सूर्य, चन्द्र मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु, ये नवग्रह के नाम से जाने जाते हैं। जिसका सम्बन्ध मनुष्य के जीवन से जुड़ा हुआ हैं। मनुष्य का जो भी स्वभाव होता हैं या उसके द्वारा समय समय पर किये जानें वाले कार्य मैं शुभता, अशुभता का होना यह सभी नवग्रहों के माध्यम से होता रहता हैं। हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों नें स्वयं से अनुसंधान करते हुए आकाशमंडल को अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देखा तो उनको नवग्रह तथा द्वादश राशियों दिखाई देने लगी उन्होंने अपनी बुद्धि के अनुसार जिसका जैसा आकार था उसको उस आकार की संज्ञा दे दी, जिससे उस ग्रह या राशि को हम पूर्ण रुप से समझ सकें। इन सभी विषयों का चिंतन करतें हुए नवग्रहों के प्रभाव को तथा नवग्रहों को कैसे जाना जाय उसके लिए हमारे ऋषियों ने ज्योतिष सिद्धांत के आधार पर इन सभी का निर्धारण किया। जब जातक का जन्म होता है तो उसकी कुंडली के आधार पर नवग्रहों के शुभाशुभ, का विचार कर उस समस्या को दूर करने के लिए ऋषियों नें कर्मकांड को आधार मानकर, वैदिक, लौकिक मंत्रों के द्वारा मनुष्य के जीवन मैं चलनें वाले शुभाशुभ समस्या को दूर करने के लिए कर्मकांड के द्वारा विधिवत पूजन, अर्चना, तथा यज्ञ किया जाता हैं। जैसे किसी मनुष्य के शरीर मैं दर्द रहता हैं तो दर्द करनें वाला ग्रह हैं शनि तो यहां शनि ग्रह का कर्मकांड के माध्यम से जब ,तप, और यज्ञ किया जाता हैं जिससे उसकी समस्या का पूर्ण रुप से समाधान हो सकें। प्रायः बार बार देखा जाता हैं कि मनुष्य किसी न किसी समस्या से दुखी रहता हैं वह दुख कहा से आया तब देखा जाता हैं नवग्रहों को उसके पश्चात् कर्मकांड का सहारा लेकर समस्या का समाधान किया जाता हैं। हम कह सकते हैं कि कर्मकांड का सम्बन्ध ज्योतिष शास्त्र से प्राचीन काल से रहा हैं जो एक दूसरे के पूरक हैं।

4.5 वैदिक मंत्रो द्वारा नवग्रह पूजन

ईशानकोण की ओर पीढ़े पर सफेद वस्त्र बिछाकर नवग्रहमण्डल का निर्माण कर सूर्यादिनवग्रहदेवताओं के निम्न श्लोकों, मन्त्रों एवं वाक्यों के द्वारा उनका आवाहन व स्थापन करना चाहिये ।

जपा-कुसुम-सङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।
तमोऽरि सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्॥

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मत्यं च । हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन्

ॐ भूर्भुवः स्वः कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य! इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः, सूर्यमावाहयामि स्थापयामि ॥

दधि-शङ्ख-तुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम् ।

ज्योत्स्नापतिं निशानाथं सोममावहयाम्यहम् ॥

ॐ इमं देवा असपत्नर्ठ० सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ य महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममुष्य पुत्रममुष्ध्यै पुत्रमुस्यै विश एष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाठ० राजा ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोद्भव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम! इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः, सोममावाहयामि स्थापयामि ॥

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजःसम-प्रभम् ।

कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम् ॥

ॐ अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् अपा० रेताठ० सि जिन्वति ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अवन्तिकापुरोद्भव भरद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम ! इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः, भौममावाहयामि स्थापयामि॥

प्रियङ्गुकलिकाभासं रूपेणाऽप्रतिमं बुधम् ।

सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्तेसर्ट० सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध ! इहागच्छेह तिष्ठ बुधाय नमः, बुधमावाहयामि स्थापयामि ॥

देवानां च मुनीनां च गुरुं काञ्चनसन्निभम् ।

वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद्युमद्विभातिकुतुमज्जनेषुयहीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥

बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः, बृहस्पतिमावाहयामि ॐ भूर्भुवः स्वः सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो गुरु इहागच्छेह तिष्ठ गुरुमावाहयामि स्थापयामि ॥

हिम-कुन्द-मृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्

सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम् ।

ॐ अन्नात्परिस्नुतो रसं ब्रह्मणा ब्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानठं० शुक्रमन्धसइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयो मृतं मधु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकटदेशोद्भव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र ! इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः, शुक्रमावाहयामि स्थापयामि॥

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्।

छायामार्तण्डसम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि-स्त्रवन्तुः नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः, शनिश्चरमावाहयामि स्थापयामि॥

अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्

सिंहिकागर्भसम्भूतं राहुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखाकयाशचिष्ठया वृता ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोद्भव पैठिनसगोत्र कृष्णावर्ण भो राहो! इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः, राहुमावाहयामि स्थापयामि॥

पालाशधूम्रसङ्काशं तारकाग्रहमस्तकम् ।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे समुषद्भिर जायथाः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुद्भव जैमिनिसगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो! इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः, केतुमावाहयामि स्थापयामि।

गन्धं -

त्वां गन्धर्वा अखनस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ।

पुष्पं -

ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।

अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥

धूपम्

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयन्धूर्वामः।

देवानामसि वह्नितम सस्नितमं पप्रितम जुष्टतमं देवहूतमम् ॥

दीपं

ॐ अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योंतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा।। ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ।।

नैवेद्यम्-

नैवेद्य को प्रोक्षित कर गन्ध पुष्प से आच्छादित करें। तदन्तर जल चतुष्कोण का घेरा लगाकर भगवान के सम्मुख भोग लगाये।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गुं शीष्णोद्यौः समवर्तत।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्।।

पाद्यं

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि .॥

आचमन लेकर नवग्रहों के पेरो में जल अर्पण करे

अर्घ्यं

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि॥

हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि अर्घ्य का जल छोड़े।

आचमनं

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी आचम नके लिये जल समर्पित करे।

स्नानीय जलं

ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।
पशूंस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये॥

स्नानीयं जलं समर्पयामि

वस्त्र

ॐ युवा सुवासा परिवीत आगात् स उश्रेयान् भवति जायमानः।
तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो 3 मनसा देवयन्तः॥

आभूषण

वज्रमाणिक्यवैदूर्यमुक्ताविद्रुममण्डितम् ।

पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम् ॥

अलङ्करणार्थ आभूषणानि समर्पयामि

चन्दन-

त्वां गन्धर्वा अखनस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ॥

पुष्प-

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते ।

ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।

अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥

पुष्पं पुष्पमालां च समर्पयामि

धूपम्

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयन्धूर्वामः ।

देवानामसि वह्नितम : सस्नितमं पप्रितम जुष्टतमं देवहूतमम् ॥

दीपम्

ॐ अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वच ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ ज्योतिःसूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥

नैवेद्यम्-

नैवेद्य को प्रोक्षित कर गन्ध पुष्प से आच्छादित करें। तदन्तर जल चतुष्कोण घेरा लगाकर भगवान को नेवेद्य का भोग लगाये

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गुं शीष्णोद्यौः समवर्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्॥

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा।

आचमनं –

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी।

ताम्बूल

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।

वसन्तो ऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शब्द्धविः ॥ .

एलालवङ्गपूगीफलयुतं ताम्बूलं समर्पयामि। इलायची, लवंग तथा पूगीफलयुक्त ताम्बूल अर्पित करे।

स्तवपाठ-

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

तर्पणं – भगवान की स्तुति के बाद जल के द्वारा तर्पण करना चाहिये ।

नमस्कार: –

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे ।

साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ॥

नमस्कारान् समर्पयामि ।

4 .6 पोराणिक मंत्रो के द्वारा नवग्रह पूजन

पाद्यं

गङ्गोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम् ।

पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं मे प्रतिगृह्यताम् ॥

पादयोः पाद्यं समर्पयामि।

आचमन जल छोड़े

भगवान का पूजन अनेकानेक वैदिक तथा पोराणिक मंत्रो के द्वारा किया जाता है। इन सभी वैदिक मंत्रो में भगवान की प्रार्थना की गयी है। पंचोपचार पूजन में पाच वस्तुओ के द्वारा परमात्मा का विधि विधान से पूजन अर्चन किया जाता है। जिससे की मनुष्य सुख प्राप्त कर सके। पंचोपचार में यह वैदिक मंत्र शुक्लयजुर्वेद से लिया गया है। जिसमे कहा गया है कि -

सृष्टिसाधन-योग्य या देवताओं और सनक आदि ऋषियों ने मानस याग की सम्पन्नता के लिये सृष्टि के पूर्व उत्पन्न उस यज्ञ साधन भूत विराट् पुरुष का प्रोक्षण किया और उसी विराट् पुरुषसे ही इस यज्ञ को सम्पादित कि।

अर्ध्यं

गङ्गोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम्।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं प्रसन्नो वरदो भव॥
हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि अर्घ्य का जल छोड़े।

आचमनं

कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम्।
तोयमाचमनीयार्थं गृहाण परमेश्वर॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी आचमनके लिये जल समर्पित करे।)

स्नानीय जलं

मन्दाकिन्यास्तु यद् वारि सर्वपापहरं शुभम्।
तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

स्नानीयं जलं समर्पयामि

वस्त्र-

शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।
देहालङ्करणं वस्त्रमतः शान्तिं प्रयच्छ मे।

आभूषणं -

वज्रमाणिक्यवैदूर्यमुक्ताविद्रुममण्डितम्।
पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम्॥
अलङ्करणार्थ आभूषणानि समर्पयामि

गन्धं

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

पुष्पं

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयाहतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

धूपं

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।

आत्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।

दीपं

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।

दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम्।।

नैवेद्यं

शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च।

आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ।।

आचमनं

कर्पूरेण सुगन्धेन वासितं स्वादु शीतलम् ।

तोयमाचमनीयार्थं गृहाण परमेश्वर ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी आचमनके लिये जल समर्पित करे ।

ताम्बूलं

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्।

एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् ।।

स्तवपाठ-

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय

लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय

गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या

विश्वस्य बीजं परमासि माया ।

सम्मोहितं देवि समस्तमेतत्

त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ।।

तर्पण

स्तुति पाठ के बाद जल के द्वारा तर्पण देने का विधान है ।

नमस्कारं

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे ।

साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ॥

नमस्कारान् समर्पयामि ।

4.7 नवग्रह का महत्व

नवग्रहों मैं सूर्य,से लेकर केतु पर्यन्त ये नवग्रह कहलाते हैं। पूजन के क्रम में भी वेदों तथा पुराणों मैं अनेकानेक उल्लेख प्राप्त होता रहता हैं। प्रायः देखा जाय तों दश दिशाएं होती हैं, उन दश दिशाओं के भी स्वामी होते हैं वे सभी नवग्रह ही होते हैं। इसलिए सर्वप्रथम पूजन करनें से पूर्व दिशाओं के माध्यम से भूमि का निर्धारण तथा दिशा का सही चयन किया जाता हैं। जिससे उस भूमि पर अनुष्ठान विधि पूर्वक हो सके। पूजन के क्रम मैं पंचागादि पूजन से लेकर, कलश, पुण्यावाचन,नान्दी श्राद्ध, षोडशोपचार से षोडशमातृका , सप्तघृत मातृका, वास्तु पूजन, देवी पूजन से लेकर सूर्यादि नवग्रहों का पूजन किया जाता हैं। जब नवग्रहों का पूजन हो जाय तो पूजन की सफलता मानी गयी हैं। क्योंकि नवग्रहों का मनुष्य जीवन मैं बहुत ही गूढ़ संबंध दिखाई देता हैं जिसके प्रभाव से मनुष्य का जीवन बार बार प्रभावित होता रहता हैं। इन सभी समस्याओं से मुक्ति पानें के लिए नवग्रह का पाठ एवं पूजन किया जाता हैं। जो नव ग्रह का महत्व तब और भी बढ़ जाता हैं जब मनुष्य ग्रहों से ही प्रभावित हौता हैं उस समय वह पीड़ित मनुष्य उचित उपाय कैसे हो उसके लिए नवग्रहों की शरण मैं जाकर विधिवत ध्यान पूजन करता हुआ अपनी समस्या को दूर करता हैं। दूसरा पक्ष देखें तो सम्पूर्ण खगोलीय मंडल मैं नवग्रहों का ही प्रभाव हैं पूजन के पश्चात् जो संकल्प जातक के कल्याणार्थ किया जाता हैं उस संकल्प मैं सही दिन, वार, तिथियों, नक्षत्रों, शुभाशुभ योगों, संवत्सरों का विचार करके जातक का संकल्प किया जाता हैं। यहां भी नवग्रहों को साक्षी माना जाता हैं। वैदिक एवं लौकिक विधि के द्वारा ग्रहों की शान्ति हो तथा मनुष्य के ऊपर आनेवाली समस्या का समाधान हो सके उसके लिए पूजन मैं नवग्रहों का महत्व विशेष रुप से रहा हैं। जिस भूखंड मैं हम बैठे हैं यहां भी ग्रहों का ही प्रभाव दिखाई पड़ता हैं, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, पाताल तीनों लोकों मैं नवग्रहों यानि काल का प्रभाव रहता हैं जिससे वह तीनों लोक सही प्रकार से चल सकें। आप सभी ने अध्ययन किया होगा की कर्मकांड मैं नवग्रहों के भी अपनें घर , तथा उनका भी परिवार होता हैं। इन सभी दुखों से मुक्ति प्राप्त करनें के लिए नवग्रहों का पूजन अवश्य करना चाहिए तथा इनके महत्व को भी समझना चाहिए।

4.8 सारांश

प्रस्तुत पाठ्यक्रम नवग्रहों का पूजन मैं महत्व नामक ईकाई का अध्ययन करनें के पश्चात् आप अवगत हो गये होंगे की नवग्रह पूजन का मनुष्य जीवन मैं कितना महत्व रहता हैं। ज्योतिषशास्त्र पर आधारित नवग्रहों का सम्बन्ध कर्मकांड से भी रहा हैं कर्मकांड तथा ज्योतिष एक दूसरे के पूरक कहे गये हैं। इन दोनों के माध्यम से ही जातक के ऊपर आनेवाली समस्या का समाधान किया जाता हैं। ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से सूर्यादि नवग्रहों की दशा अंतर्दशा मैं जो भी सकारात्मक,या नकारात्मक फल की प्राप्ति होती हैं वह उस जातक के प्रारब्ध से ही प्राप्त होता रहता हैं। जिसका उसको भोग करना पड़ता हैं। प्रायः देखा गया की ग्रह दशा क्या हैं उसी के अनुसार जातक का कर्मकाण्ड के माध्यम से उपाय भी किया जाता हैं जिससे उस मनुष्य के सदस्यों को दूर किया जा सकें। वह समस्या केवल कर्मकांड मैं पौरोहित्य कर्म के माध्यम से किया जाता हैं। इस ईकाई मैं आपने नवग्रहों का पूजन क्रम जप, तपादि, का अवलोकन किया होगा कि जिस ग्रह से जातक पीड़ित हैं उस ग्रहों का विधि-विधान से कर्मकांड के द्वारा यज्ञ पूजन तथा जप करनें से जातक की समस्याओं से मुक्ति प्राप्त होती हैं। संसार मैं जितने दृजीव हैं उन सभी को दुख सुखका सामना करना पड़ता हैं। किन्तु वह सुख दुख कैसे दूर हो सके उसके लिए शास्त्रों का अवलोकन कर कर्मकांड के द्वारा मंत्रों के पाठ से पौराणिक मंत्रों के पाठ करनें से, विधिवत षोडशोपचार, पंचोपचार, पूजन विधि से उपाय करने से नवग्रहों की समस्याओं से मुक्ति प्राप्त होती हैं। आप सभी ने इस ईकाई को पढ़ने के बाद नवग्रहों के महत्व को समझने का प्रयत्न किया होगा।

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

1. प्राचीन	सबसे पुराना
2. षोडशोपचार पचार	सोलह प्रकार से ईश्वर को पूजन सामग्री अर्पित करना
3. ज्ञान कांड	ज्ञान के द्वारा जन कल्याण
4. उपासना	व्रत तप के द्वारा उपासना
5. चाल	ग्रह की गति यानी चलना
6. जीव	गुरु ग्रह
7. वास्तु	जहां व्यक्ति निवास करता हो
8. लौकिक	पौराणिक श्लोकों के द्वारा पूजन
9. वैदिक।	वेद के मंत्रों से पूजन
10. ईशान कोण	उत्तर एवं पूर्व के बीच का स्थान

11. पश्यन्	देखना
12. शुक्ल वर्ण	सांवला रंग
13. इहागच्छ	आइए और आसन ग्रहण कीजिए
14. ज्योति	प्रकाश
15. अर्पण	परमात्मा को भाव अर्पण करना
16. अवलोकन	देखना

4.10 अभ्यास प्रश्न

1. उपासना कांड किसे कहते हैं
2. मुख्यतः कर्मकांड के प्रकार हैं
3. विधि क्या हैं।
4. विधान किसे कहते हैं।
5. संस्कारों की संख्या हैं।
6. पौरोहित्य कर्म किसे कहते हैं।
7. पौराणिक मंत्र किसे कहते हैं।
8. मंजरी कहते हैं।
9. शर्करा क्या हैं।
10. अपवित्रः क्या हैं।
11. सद्बुद्धि देने वाला ग्रह हैं।
12. ऊं अन्नात् परिस्रुतो यह किस ग्रह का मंत्र हैं।
13. रवि पुत्र हैं।
14. भगवान सूर्य का गोत्र हैं।
15. चन्द्र का स्थान होता हैं।
16. गुरु ग्रह का वर्ण क्या हैं।
17. मंगल ग्रह की दिशा हैं।
18. धरती किसे कहते हैं।
19. पलाश किस ग्रह को कहा गया हैं।

4.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. जिसमें तन ,मन से परमात्मा की तपस्या की जाती हैं।
2. तीन प्रकार हैं।
3. किसी भी पूजन की सही विधि
4. पूजन का विस्तार क्रम
5. 16 हैं।
6. कर्मकांड को ही पौरोहित्य कर्म कहते हैं।
7. जिसमें श्लोकों के माध्यम से पूजन किया जाता हैं।
8. तुलसी पत्र के अन्दर बीज को कहते हैं।
9. पूजन मैं चढ़ने वाली वस्तु जो मीठा हो वह शर्करा हैं।
10. जो वस्तु अशुभ हैं
11. बुध ग्रह हैं।
12. शुक्र का
13. शनि हैं
14. कश्यप गोत्र हैं
15. नवग्रह मंडल मैं मध्य का स्थान
16. पीत वर्ण
17. दक्षिण दिशा
18. पृथ्वी को
19. केतु ग्रह को

4.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. पंचदेव पूजन पद्धति
2. नित्यकर्म पूजा प्रकाश
3. कर्मठ गुरु
4. पूजा भास्कर
5. कर्मकांड प्रदीप,

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. नवग्रह का परिचय तथा नवग्रह की विशेषता पर प्रकाश डालिए।
2. पौराणिक मंत्रों द्वारा नवग्रह का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
3. नवग्रह के महत्व पर प्रकाश डालिए।
4. वैदिक मंत्रों के द्वारा नवग्रह पूजन का प्रतिपादन कीजिए।
5. कर्मकांड के द्वारा नवग्रह पर प्रकाश डालिए।

खण्ड -2

नवग्रह

इकाई -1 नवग्रहों की आकृति

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 नवग्रह आकृति विचार

1.4 चन्द्र, भोम, बुध ,गुरु ,शुक्र ,शनि,राहु,केतु शांति विधान

1.5 नवग्रह स्त्रोत परिचय

1.6 नवग्रह लोकिक मन्त्र परिचय

1.7 सारांश

1.8 पारिभाषिक शब्दावली

1.9 अभ्यास प्रश्न

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत पाठ्यक्रम बी.ए.के.के.एन (221) **नवग्रहों की आकृति**, नामक ईकाई के विषय मैं वर्णन किया जा रहा हैं। जिसमे आप सभी नवग्रहों की आकृति नामक ईकाई से परिचित होकर इस विषय को जान सकेंगे। आइए आगे इस ईकाई के बारे मैं जानते हैं। वस्तुत शास्त्रों के अवलोकन करनें से यह देखनें मैं आता हैं कि संसार मैं जितनी भी वस्तु हैं। वे सब किसी न किसी आकृति से परिपूर्ण हैं। अब हम यह समझते हैं कि आकृति क्या हैं। किसी भी वस्तु के स्वरूप को जानना उसकी बनावट का ज्ञान होना आकृति कहलाती हैं। जो इस प्रकार से हैं। जैसे मनुष्य को किस प्रकार से जाना जाता हैं उसके स्वरूप से जाना जाता हैं, मनुष्य के शारीरिक अंगों से उसे पहचाना जाता हैं। ठीक उसी प्रकार से ग्रहों की आकृति को भी समझना चाहिए। जिसके द्वारा उस स्वरूप से यह स्पष्ट हो सके की आने वाले कार्य को ठीक प्रकार से जाना जा सके। इस ईकाई मैं ज्योतिष का ग्रहों से क्या संबंध हैं, ज्योतिष शास्त्र मैं नवग्रहों के विषय मैं गूढता से जानने का लाभ भी प्राप्त होता हैं। प्राचीन काल से ऋषियों, मुनियों के द्वारा ज्योतिष शास्त्र को जानने के लिए खगोलीय ग्रहों का अनुसंधान कर उनके स्वरूप को प्रस्तुत किया गया। ठीक उसी तरह वैज्ञानिक दृष्टिकोण से नवग्रहों को अलग प्रकार से विज्ञान मानता हैं।आज हम नवग्रह नामक ईकाई तथा इसकी आकृति को कैसे पहचाना जा सके इस ईकाई का अध्ययन करते हैं।

1.2 उद्देश्य

प्रिय अध्येताओं इस ईकाई मैं आप

- ग्रहों की आकृति क्या हैं? इस विषय से अवगत होंगे।
- कर्मकांड,तथा ज्योतिष के स्वरुप से परिचित होंगे।
- नवग्रह स्तोत्र के बारे मैं जान सकेंगे।
- नवग्रहों के पौराणिक मंत्रों को समझ सकेंगे।
- नवग्रहों के उपाय का ज्ञान कर सकेंगें।

1.3 नवग्रह आकृति विचार

ज्योतिषशास्त्र में सूर्यादि नवग्रह की आकृति के बारे मैं विस्तार से उल्लेख प्राप्त होता हैं। हमारे

प्राचीन ऋषियों नें ग्रहों की पहचान कैसे किया जाए इसके लिए सम्पूर्ण खगोलीय पिंड का अध्ययन कर आकाश मंडल मैं नव प्रकार के ग्रहों को अपनी दृष्टि से देखा। यहां पर ऋषियों से ज्ञात होता हैं कि सूर्यादि नवग्रहों के नाम तथा इनकी आकृतियों को देखकर के सूर्य इत्यादि ग्रहों का नाम ऋषि मुनियों ने निश्चय किया। उन्होंने देखा सूर्य ग्रह का स्वरुप अद्भुत हैं, जिनके चार हाथ, मुकुट धारण किये हुए जिनके दो नेत्र लाल वर्ण के दिखाई दे रहें हैं। जिनका स्वरूप सात प्रकार के अश्वों मैं बैठकर दिखाई देता हैं। जो कश्यप गोत्र एवं कलिंग देश के अधिपति हैं। जिनका रक्तवर्ण हैं। तथा दोनों हाथों मैं कमल धारण किये हुए हैं। सिंदूर के समान जिनका वस्त्र हो , आभूषण धारण किये हुए हो ,सुमेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते हुए, तथा अधिदेव जिनका भगवान शिव, तथा प्रत्यधिदेवता अग्नि हो । इस प्रकार की आकृति मैं सूर्य देव दिखाई देते हैं। इसी क्रम मैं चन्द्र ग्रह की आकृति को देखते हैं कि चन्द्र देव कैसे दिखाई देते हैं। ज्योतिषशास्त्र के अनुसार चन्द्रमा का संबंध मन से होता हैं, जो साक्षात् श्वेत रुप मैं कमल पुष्प के ऊपर बैठे हुए दृश्यमान हो रहें हैं। जिनके गले मैं मोती का हार चमक रहा हो जो अपनी किरणों से तीनों लोकों को अलंकृत कर रहे हैं।चंद्रमा अत्रि गोत्रीय, यामुन देश के स्वामी,तथा इनका शरीर अमृतमय,तथा एक में वरमुद्रा, दूसरे में गधा धारण किये हुये। दूध के समान श्वेत शरीर पर श्वेत वस्त्र, माल और अनुलेपन धारण किए हुए हैं। मोती का हार गले में पहने तथा अपनी सुधामयी किरणों से तीनों लोकों को सींच रहे हैं। दस घोड़ों के त्रिचक्र रथ पर आरूढ़ होकर सुमेरु की प्रदक्षिणा करते हुये इनके स्वरूप का दर्शन किया जाय। इनके अधिदेवता उमादेवी हैं और प्रत्यधिदेवता जल हैं। मंगल की आकृति जानते हैं। मंगल ग्रह लाल अंगारक के समान दिखाई देते हैं। जिनकी आकृति मनुष्य के जैसे ही दिखती हैं। परन्तु यहां पर अन्तर दिखाई देता हैं कि मंगल ग्रह के चार हाथ, जो मेष रथ पर आरूढ़ हुए दिखाई दे रहें हैं। जिनका गोत्र भारद्वाज तथा क्षत्रिय वर्ण के हैं। जो अवंति के स्वामी हैं। इनका रंग अग्नि के समान रक्तवर्ण,वाहन मेष , रक्त वस्त्र, और माला धारण किए हुए, हाथों में शक्ति, वर, अभय और गदा हैं। इनके अंग-अंग से कांति की धारा छलक रही है। मेष के रथ पर सुमेरु की प्रदक्षिणा करते हुए अपने अधिदेवता स्कंद और प्रत्यधिदेवता पृथ्वी के साथ सूर्य के अभिमुख जा रहे हैं। मंगल ग्रह का यह स्वरुप या आकृति का वर्णन शास्त्रों में प्राप्त होता हैं। बुध ग्रह की आकृति बुध देव के समान होने के साथ साथ जो सिंह पर बैठे हुए अलंकृत हो रहे हैं जों अत्रि गोत्र एवं मगध देश के स्वामी हैं। इनके शरीर का वर्ण हरा है। इनके चार हाथों में ढाल, गदा, वर और खड्ग है। हरा वस्त्र धारण किए हुए हैं। सौम्य मूर्ति सिंह पर सवार हैं। इनके अधिदेवता नारायण और प्रत्यधिदेवता विष्णु माने जाते हैं। गुरु ग्रह का स्वरुप अलग ही दिखाई देता हैं। जो हाथी के ऊपर आसन मैं बैठे हुए हैं। जिनकी प्रकृति सात्विक दिखाई दे रही हैं जो पीत वस्त्रों को धारण किये हुए हैं। बृहस्पति अंगिरा गोत्र

के ब्राह्मण, सिंधु देश के स्वामी, वर्ण पीत, पीतांबर धारण किए हुए, कमल पर बैठे, चार हाथों में रुद्राक्ष, वरमुद्रा, शिला और दण्ड धारण किए हुए हैं। इनके अधिदेवता ब्रह्मा जी और प्रत्यधिदेवता इंद्र माने जाते हैं। शुक्र ग्रह का स्वरुप श्वेत वर्ण का दिखाई देता हैं, जिसकी चमक भी श्वेत वर्ण की दिखाई देती हैं। शुक्र भृगु गोत्र के ब्राह्मण, भोजकट देश के अधिपति, कमल पुष्प पर बैठे हुए, चार हाथों में रुद्राक्ष, वरमुद्रा, शिला और दण्ड धारण किये हुये,जो श्वेत वस्त्र धारण करते हैं,जिनका अधिदेवता इंद्र और प्रत्यधिदेवता चंद्र हैं।शनि ग्रह की आकृति रथ मैं बैठे हुए किसी देव के समान धनुष लिए हुए दिखाई देती हैं। जिनका वाहन गृध्र,जिनका कश्यप गोत्र, वर्ण शूद्र हैं। सौराष्ट्र प्रदेश के अधिपति हैं। इनका वर्ण कृष्ण है और कृष्ण वस्त्र ही धारण किए हुए हैं। चार हाथों में बाण, वर, शूल और धनुष है। इनके अधिदेवता यमराज और प्रत्यधिदेवता प्रजापति हैं।राहु ग्रह सिंह पर बैठे हुए भ्रमण कर रहे हैं। जो पैठीनस गोत्र के शूद्र हैं। मय देश के अधिपति , इनका वर्ण कृष्ण और वस्त्र भी कृष्ण ही है। इनका वाहन सिंह है। चार हाथों में खड्ग, वर, शूल और ढाल हैं। इनके अधिदेवता काल और प्रत्यधिदेवता सर्प है।केतु ग्रह की आकृति मनुष्य के आकार के समान दिखाई पड़ रही हैं। जिनका जैमिनी गोत्र, वर्ण शूद्र हैं। कुशद्वीप के अधिपति , इनका वर्ण धुएं सा है। और वैसे ही वस्त्र धारण किए हुए दिखाई देते हैं। जिनका मुख विकृत,गीध वाहन है। इनके दोनों हाथों में वरमुद्रा तथा गदा है। इनके अधिदेवता चित्रगुप्त तथा प्रत्यधिदेवता ब्रह्मा जी हैं।

1.4 सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध ,गुरु, शुक्र, शनि,राहु,केतु शांति विधान

सूर्य शान्ति के लिए उपाय

सूर्य क्रूर ग्रह से दृष्ट, युक्त अथवा नीच राशिस्थ (तुला) हो या १, २,४,५,७,८,९ या १२वें भावस्थ सूर्य अशुभ माना जाता है। जन्म कुण्डली अथवा वर्ष कुण्डली में सूर्व अशुभकारी हो, तो निम्नलिखित किसी एक मन्त्र का ७ हजार से लेकर सवा लाख की संख्या में जाप करना चाहिए। जप का आरम्भ शुक्ल पक्षीय रविवार या सूर्य षष्ठी अथवा रवि योग या रविपुष्य योग में करना चाहिए। पाठारम्भ करने से पूर्व लाल पुष्प, अक्षत, नैवेद्य व गंगाजल लेकर पाठ का संकल्प, ध्यान व आवाहनादि करें। जप-पाठ के लिए रूद्राक्ष की माला सर्वोत्तम है। उसके अभाव में चन्दन या तुलसी की माला का प्रयोग भी कर सकते हैं। विधिपूर्वक सूर्य उपासना व पदोन्नति, आत्मशक्ति, तेज बल, राजप्रतिष्ठा एवं आरोग्य की प्राप्ति होती है। प्रतिदिन पाठ करने के बाद सूर्य देव को ताम्र बर्तन में शुद्ध जल, लाल चन्दन (या पुष्प) डालकर अर्घ्य देना चाहि तदुपरान्त गायत्री मन्त्र करने का विधान भी है। सुनिश्चित संख्या में पाठ (जप) की पूर्ति हो जाने पर दशांश यज्ञ करना चाहिए।

पुराणोक्त सूर्य नमस्कार मन्त्र-

जपाकुसुम संकाश काश्यपेयं महाद्युतिम्।
तमोऽरिम सर्व पापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्।

वेदोक्त सूर्यमन्त्र -

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ।
हिरण्येन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

जप संख्या ७०००

तन्त्रोक्त बीजमन्त्र- **ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः**

सूर्यार्घ्य मन्त्र-

एहि सूर्य सहस्रांशो तेजो राशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहारर्घ्य दिवाकर।।

सूर्यार्घ्य का लघु मन्त्र- "ॐ घृणिः सूर्याय नमः"

सूर्यगायत्री मन्त्र- **ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो भानुः प्रचोदयात्॥**

सूर्य गायत्री मन्त्र जप, विधिपूर्वक रविवार का व्रत, सूर्यमणि (माणिक्य) धारण करना औषधि स्नान मनः शिला, इलायची छोटी, देवदारू, केशर, खस, कनेरादि लाल पुष्प गंगाजल तथा विधिवत् निर्मित सूर्ययन्त्र धारण करना चाहिए। माणक, ताम्र बर्तन, मिष्ठान्न, नारियल सहित लाल फल, ब्राह्मण भोजन एवं सुनिश्चित पाठोपरान्त दशमांश हवन करना शुभ माना जाता है।

उपाय

(1) तांबे की अँगूठी में माणिक्य अथवा विधिवत् तैयार किया हुआ सूर्य-यन्त्र ताम्र पत्र पर धारण करें।

(2) खाना खाते समय सोने अथवा तांबे के चम्मच का प्रयोग करना तथा 11 रविवार तक सूर्य स्नान करना। जब जन्म या वर्ष कुण्डली में सूर्य अशुभ हो तो 108 रविवार तक अथवा प्रतिदिन नियमित रूप से ताम्र बर्तन में शुद्ध जल, लाल चन्दन मिलाकर सूर्य को अर्घ्य देकर सूर्य स्तोत्र का पाठ करना शुभ माना जाता हैं।

(3) रविवार को नमक खाने से परहेज़ करना चाहिए। लवणरहित सादा भोजन करें। ग्यारह रविवार पर्यन्त केवल दही और चावल का सेवन करना चाहिए।

(4) जिन जातकों का सूर्य नीच का हो, उन्हें 'कार्तिक माहात्म्य' का कार्तिकमास में नित्यप्रति पाठ करके तुलसी के पौधे पर दीपक प्रज्वलित करना चाहिए।

चन्द्र शान्ति

चन्द्रमा शत्रु एवं क्रूर ग्रह से दृष्ट, युत एवं नीच राशि वृश्चिक, अथवा ४, ६, ८, १२वें भावों में स्थित चन्द्रमा अशुभ माना जाता है। अशुभ चन्द्र की शान्ति के लिए निम्नलिखित किसी एक मन्त्र की ११ हजार की संख्या में जप करना, तदुपरान्त दशमांश संख्या में हवन करना लाभप्रद माना जाता हैं। जप का आरम्भ पूर्णिमा या शुक्ल पक्ष के सोमवार को किसी शुभ मुहूर्त में करना चाहिए।

तन्त्रोक्त चन्द्र मन्त्र- ॐ श्रां श्रीं श्रौं सः चन्द्रमसे नमः ।

जप संख्या ११०००

पुराणोक्त चन्द्र मन्त्र

दधि शंख तुषाराभं क्षीरोदार्णव सम्भवम् ।
नमामि शशिनं सोमं शंभोर्मुकुट भूषणम् ॥

चन्द्रमा गायत्री मन्त्र ॐ अमृतांगाय विद्महे कलारूपाय धीमहि तन्नो सोमः प्रचोदयात्।

चन्द्र अर्घ्य मन्त्र- ॐ सों सोमाय नमः

यदि कुण्डली में चन्द्र अशुभ हो, तो चन्द्रमा के अशुभत्व के निवारण के लिय लिए चंद्रमा का उपाय करना चाहिए। चन्द्रमा अशुभ हो, तो मानसिक विकार, नेत्र कष्ट, धन हानि, रक्त दोष, स्त्री कष्ट आदि अशुभ फल घटित होते हैं। चन्द्रमा की शुभता के लिए उपरोक्त मन्त्र-जाप के अतिरिक्त चांदी की अँगूठी में चन्द्रकान्त मणि या श्वेत मोती धारण करना, विधिवत, सोमवार एवं पूर्णमासी का व्रत करना, चन्द्र मन्त्र मुद्रित करवा कर चाँदी का गोल सिक्का गले में धारण करना, घर में श्वेत शंख रखना, औषधि एवं जड़ी-बूटी श्वेत चन्दन आदि से विधिपूर्वक चन्द्र यन्त्र का पूजन कर जातक को शुभ दिन मुहुर्त में धारण कर भगवान शंकर का ध्यान शिवोपासना करना कल्याणकारी रहता हैं।

उपाय

(1) चांदी के बर्तनों का प्रयोग करना एवं चारपाई के पायों में चांदी के कील को लगाना चाहिए।

(2) सफेद मोतियों की माला अथवा चांदी की अँगूठी में मोती एवं चांदी का कड़ा धारण करना लाभदायक होता हैं।

(3) शीशे के गिलास में दूध, पानी आदि पीने से परहेज रखना शुभ होगा। किसी पात्र में कच्चा दूध मिलाकर चन्द्रमा का बीज मन्त्र पढ़ते हुए पीपल के वृक्ष में डालना चाहिए। 16 सोमवार व्रत रखकर

सायंकाल सफेद वस्तुओं का दान करना चाहिए तथा पाँच छोटी कन्याओं को क्षीर सहित भोजन कराना चाहिए।

भोम शांति

किसी भी जातक की कुंडली में मंगल ग्रह का अशुभ होना, यानि सप्तम भाव, द्वादश भाव, द्वितीय भाव में मंगल का होना या अशुभ ग्रहों की दृष्टी हो, या मंगल ग्रह १, २, ४, ५, ७, ८, ९, एवं १२वें भावों में स्थित मंगल, बुध अथवा शनि आदि शत्रु ग्रहों से दृष्ट या युक्त, या अपनी नीचराशि (कर्क) में अशुभ कारक होता है। जन्म कुण्डली या वर्ष कुण्डली में मंगल अशुभ एवं बाधाकारक हो, तो निम्न मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र का कम से कम १० हजार की संख्या में, शुभ मुहूर्त, मंगलवार को लाल पुष्प, लाल चन्दन, अक्षत (चावल), गंगाजल लेकर संकल्प पूर्वक पाठारम्भ करना चाहिए। उसके अनंतर पाठोपरान्त पाठ का दशमांश संख्या में मंगल ग्रह के मंत्रो से यज्ञ करना चाहिए।

तन्त्रोक्त भौम मन्त्र- **ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः ।**

जप संख्या १०००००

पुराणोक्त भौम मन्त्र-

धरणी गर्भसम्भूतं विद्युत् कान्ति समप्रभम्।

कुमारं-शक्तिं हस्तं तं मंगल प्रणमाम्यहम् ॥

भौम गायत्री मन्त्र- **ॐअंगारकाय विद्महे शक्ति हस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात्।**

उपरोक्त मन्त्र द्वारा जाप के अतिरिक्त अनिष्टकर मंगल की शान्ति के लिए मंगलवार का व्रत करना चाहिए। श्री हनुमान उपासना, मंगल स्तोत्र पढ़ना, रक्त वर्ण की गाय को भोजन कराना, मूँगा पहनना, औषधि स्नान करना परन्तु विधिपूर्वक मंत्रो से बना भौम यन्त्र को गले में धारण करना, उद्यापन के दिन ब्राह्मण भोजन कराना शुभकारक होता है।भौमशान्ति हेतु दान योग्य वस्तुएँ-गेहूँ, मसर की दाल, घी, गुड़, सुवर्ण, कनेर के पुष्प, लाल वस्त्र, लाल चन्दन, केशर, नारियल, सेब आदि लाल फल, मूंगा, सोना, ताम्र बर्तन, गुड़ से बने मीठे चावल या ब्राह्मण भोजन आदि करना शुभ एवं कल्याणकारी रहता है। मंगल ग्रह पराक्रम, साहस, भूमि, भाई, पुत्र, रक्त-बलादि का भी कारक माना जाता हैं।

उपाय-

जब कुण्डली में मंगल शुभ एवं योगकारक होता हुआ भी फल न करता हो तो निम्नलिखित उपाय

करना चाहिए।

(1) तांबे की अंगूठी में मूँगा धारण करना अथवा तांबे का कड़ा पहनना।

(2) मंगलवार को घर में गुलाब का पौधा लगाना उचित होता हैं।

(3) चन्द्र की शुभता बढ़ाने के लिए दान योग्य पदार्थ चावल, सफेद चन्दन, शंख कर्पूर, नारियल को लाल कपड़े में लपेट कर पानी में बहाना चाहिए।

(4) लाल रंग की गाय या लाल वर्ण के कुते को भोजन खिलाना शुभ माना जाता हैं।

(5) प्रत्येक मंगलवार का उपवास करना चाहिए। विशेषकर उन कन्याओं को जिनकी कुण्डली में मंगलीक योग बनकर विवाह में देरी होती हैं। लगातार 7 मंगलवार का व्रत करने से अनेक प्रकार की बाधा, समस्या एवं उन्हें मंगलागौरी का पूजन करना चाहिए।

बुध शान्ति उपाय

किसी भी व्यक्ति की कुंडली के आधार पर ही उस व्यक्ति के ग्रह दशा का विचार कर उस ग्रह की शांति करना आवश्यक होता हैं। जेसे बुध ग्रह कुण्डली में ४, ६, ८, १२वें भावों में स्थित अथवा शुभ ग्रह द्वारा दृष्ट या युक्त बुध शुभ फलदायक तथा कार्यो को सिद्ध कराने वाला होता हैं। यदि बुध ग्रह शुभ हो, तो वाणी, बुद्धि, विद्या, संतान, व्यापार आदि में लाभ करने वाला होता है। अशुभ बुध की दशा में बुद्धि भ्रम, त्वचा रोग, वाणी विकार, सन्तान को कष्ट होता हैं। बुध की शुभता बढ़ाने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिएँ।

तन्त्रोक्त बुध मन्त्र - **ॐ ब्रां ब्रीं ब्रौं सः बुधाय नमः।**

जप संख्या - ९०००

पुराणोक्त बुध मन्त्र-

प्रियंगु कलिका श्याम रूपेणाप्रतिमं बुधम्।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥

बुध गायत्री मन्त्र – ॐ सौम्यरूपाय विद्महे रोहिणी प्रियाय धीमहि तन्नो बुधः प्रचोदयात्।

उपरोक्त मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र का कम से कम ९००० की संख्या में जप करना, विधिपूर्वक व्रत रखना, औषधि स्नान, हरे रंग का नग-पन्ना सोने की अगूठी में धारण करना, विधिवत् तैयार किया गया बुध यन्त्र रखना, हरी वस्तुओं का प्रयोग करना, श्री दुर्गा सप्तशती का पाठ तथा श्री

विष्णु उपासना करना, चौपायों को हरा चारा डालना, बुध को कन्या पूजन के उपरान्त हरी वस्तुओं (वस्त्रादि) का दान करना बुध ग्रह जनित अशुभ दोष को दूर करता है।

बुध के दान की वस्तुएँ - मूंगी साबुत, चीनी, छोटी इलायचियाँ, षडरसों से युक्त भोजन, हरी सब्जियां, पन्ना नग, कांस्य पात्र, हरे पुष्प, हरे फल, हाथी दाँत, हरा गर्म अथवा रेशमी वस्त्र, ब्राह्मण भोजन दक्षिणा सहित दान करना कल्याणप्रद रहता है।

उपाय- यदि जातक की कुंडली में बुध शुभ होता हुआ भी फलकारक न हो तो निम्न उपाय करना चाहिए।

(1) हरे रंग का पन्ना बुधवार को सोने की अँगूठी में धारण करना। हरे रंग के वस्त्रों को पहनना तथा हरे रंग के पर्दे लगाना भी शुभ माना जाता हैं।

(2) बुधवार को चाँदी या कांस्य के गोल टुकड़े को हरे रंग के कपड़े में लपेट कर जेब में रखें या भुजाओं के साथ बांधे।

(3) बुध ग्रह अशुभ होने पर हरे रंग के वस्त्र एवं हरे रंग की गाड़ी आदि का प्रयोग न करें।

(4) बुधबार के दिन 6 इलायची हरे रूमाल में लपेटकर अपने पास रखें तथा इसके पश्चात् एक इलायची तुलसीपत्र का सेवन करने से बुध ग्रह शांत हो जाता हैं।

जातक की कुंडली में गुरूग्रह ४, ६, ८, १२ वे भावों में बेठा हो, अथवा नीच राशिगत (मकर) हो, या शत्रु या अशुभ ग्रहों से दृष्ट या युक्त हो तो जातक को अशुभ फल देने वाला होता हैं। अशुभ गुरू होने से जातक को विद्या में असफलता अथवा विवाह सुख में अड़चनें, पुत्र-सन्तान, भ्रातृ विरोध, शरीर कष्ट, बुद्धि में विकार आदि अशुभ फल की प्राप्ति होती हैं।

गुरु ग्रह को बलवान करने के लिए गुरु ग्रह मन्त्र का १६००० की संख्या में पाठ करना अथवा किसी योग्य ब्राह्मण से करवाना तथा पाठोपरान्त दशांश संख्या में हवन करना कल्याणकारी माना जाता हैं।

तन्त्रोक्त गुरू मन्त्र- ॐ ग्रां ग्रीं ग्रौ सः गुरवे नमः

जप संख्या १९ ०००

पुराणोक्त गुरू मन्त्र-

ॐ देवानां च ऋषीणां च गुरू काचन संन्निभम्।
बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम्।।

गुरु गायत्री मन्त्र ॐ अंगिरो जाताय विद्महे वाचस्पतये धीमहि तन्नो गुरूः प्रचोदयात् ।

संकल्पपूर्वक मन्त्र जाप के अतिरिक्त गुरू सम्बन्धी वस्तुओं का दान, सुवर्ण या चांदी की अँगूठी में पुखराज पहनना, विधिवत् निर्मित गुरू यन्त्र धारण, औषधि स्नान करना, गुरूवार क व्रत

रखना, पीली वस्तुओं का प्रयोग, पीले वर्ण की गौओं की सेवा करना व गाय दान, पीपल वृध की प्रतिष्ठा, ब्राह्मणों को क्षीर सहित भोजन खिलाना, दक्षिणा एवं धार्मिक ग्रन्थों का दान, जप इत्यादि करना शुभ है।

गुरू की दान योग्य वस्तुएँ- पीले चावल, चने की दाल, हल्दी, शहद, पीला वस्त्र, पपीत आम, केले आदि पीले फल, सवत्सा गाय, पीला कम्बल, बेसन के लड्डू, ताम्र एवं कांस्य पा शक्कर, रामायण आदि धार्मिक ग्रंथ केशर इत्यादि वस्तुओं का दान करना चाहिए।

उपाय- जन्म कुंडली में बृहस्पति शुभ व योगकारक होता हुआ भी शुभ फल प्रकट न कर रहा हो तो निम्नलिखित उपाय करना चाहिए।

(1) सोने या चांदी की अँगूठी में तर्जनी अंगुली में तथा शुभ मुहूर्त में पुखराज धारण करना 27 गुरुवार केसर का तिलक लगाना तथा केसर की पुड़िया पीले रंग के कपड़े कागज में अपने पास रखना शुभ होगा।

(3) चलते पानी में बादाम एवं नारियल पीले कपड़े में लपेटकर बहाना शुभ माना जाता हैं।

(4) पीपल के वृक्ष को गुरुवार एवं शनिवार को गुरु का बीज मन्त्र एवं गुरु गायत्री पढ़ते हुए जल दें।

(5) वृद्ध ब्राह्मण को यथाशक्ति पीली वस्तुएँ, जैसे-चने की दाल, लड्डू, पीले वस्त्र तथा शहदादि का दान करना चाहिए।

शुक्र शान्ति

जातक की कुंडली में शुक्र ग्रह को सत्यवीर्यभोग एवं वाहनादि सुख-साधनों का कारक माना जाता हैं। इस ग्रह की शुभता बढ़ाने के लिए निम्नलिखित मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र का कम से कम १६००० की संख्या में जप करना तथा फिर दशांश हवन करना चाहिए।

तन्त्रोक्त शुक्र मन्त्र - ॐ द्रां द्रीं द्रौं सः शुक्राय नमः

शुक्र बीज मंत्र ॐ शुं शुक्राय नमः

जप संख्या - १६०००

शुक्र गायत्री मन्त्र – ॐ भृगुजाताय विद्महे दिव्य देहाय धीमहि तन्नो शुक्रः प्रचोदयात्॥

शुक्र ग्रह की दशा में शुक्र ग्रह के बीज मंत्रो से जप कर विधि पूर्वक पूजन के अतिरिक्त शुक्र सम्बन्धी वस्तुओं का दान करना चाहिए। शुक्र की शांति के लिए हीरा रत्न पहनना, शुक्र यन्त्र धारण करना, शुक्र औषधि स्नान, गोदान, श्वेत एवं क्रीमवर्ण की वस्तुओं का प्रयोग, श्वेत चन्दन का तिलक,

श्री दुर्गा पूजा, श्री दुर्गा सप्तशती का पाठ करना तथा पाँच शुक्रवार व्रत करके पाँच कन्याओं का पूजन करना एवं उन्हें श्वेत वस्तुओं का दान करने से शुक्र ग्रह की शान्ति होती है।

शुक्र दान की वस्तुएँ- चाँदी, चावल, मिश्री, दूध एवं दूध से निर्मित क्षीर, बर्फी आदि, श्वेत चन्दन, श्वेत गाय, श्वेत पुष्प, श्वेत वस्त्र, श्वेत फल एवं सुगन्धित पदार्थों आदि का दान करने से शुक्र की शुभता में वृद्धि होती है।

उपाय- कुंडली में यदि शुक्र शुभ एवं योगकारक होता हुआ भी फलीभूत न हो रहा हो तो निम्न उपाय कल्याणकारी रहेंगे-

(1) चाँदी की कटोरी में सफेद चन्दन, सफेद पत्थर का टुकड़ा, रखकर शयन वाले कमरे में रखे चन्दन की अगरबत्ती रखना शुभ होगा।

(2) घर में तुलसी का पौधा लगाना, सफेद गाय रखना, सफेद पुष्प लगवाना शुभ होगा तथा क्रीम रंग के रेशमी कपड़े में चाँदी के चौरस टुकड़े पर शुक्र यन्त्र खुदवाकर विधिपूर्वक अपने पास रखें।

शुक्र अशुभ प्रभावी होने की स्थिति में नीचे लिखे उपाय कल्याणकारी होंगे-

(3) शुक्रवार को श्री दुर्गा पूजन, 5 कन्या पूजन करना उन्हें श्वेत वस्तुएँ देना तथा गौशाला में शुक्रवार से शुरु करके सात दिन तक गाय को हरा भोजन शक्कर एवं चरी डालने से भी शुक्र ग्रह की शांति होती हैं।

(4) सफेद रंग के पत्थर पर चन्दन का तिलक लगाकर चलते पानी में बहा देना या चांदी के टुकड़े पर शुक्र यन्त्र खुदवा कर रेशमी क्रीम रंग के वस्त्र में लपेट कर शुक्रवार को नीम के वृक्ष के नीचे दबाना चाहिए।

शनि शान्ति

किसी जातक की जन्म कुण्डली में जब शनि १, २, ४, ५, ७, ८, ९, १० अथवा १२वें स्थानों में हो, अथवा शत्रु या नीच (मेष) राशिगत हो अथवा सूर्य, मंगल आदि क्रूर ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो शनि अशुभ फलदायक होता है। अशुभ एवं अरिष्टकर शनि धन एवं आय का नाश करने वाला होता हैं। शनि ग्रह का अशुभ प्रभाव होने से जातक को शनि से सम्बन्धित वस्तुओं का दान, शांति शनिवार के दिन या बुधवार को शुभ मुहूर्त में करना चाहिए।

तन्त्रोक्त शनि -	ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः शनैश्चराय नमः
जप संख्या	२३०००
तन्त्रोक्त शनि का लघु मन्त्र	ॐ शं शनैश्चराय नमः
वेदोक्त शनि मन्त्र	ॐ शंन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोंरभिस्त्रवन्तु नः॥
शनि गायत्री मन्त्र-	ॐ सूर्यसुताय विद्महे, यमरूपाय धीमहि तन्नः सौरिः प्रचोदयात्।

नीलांजन समा भासं रवि पुत्रं यमाग्रजम् ।

छायामार्तण्ड सम्भूतं तं नमामि शनैश्चरम् ॥

विधिपूर्वक मन्त्र जाप के अतिरिक्त शनि सम्बन्धी वस्तुओं का दान, सिक्के अथवा पंचधातु की अंगूठी में नीलम धारण करना, शनिवार का व्रत रखना, विधिवत् निर्मित शनि यन्त्र रखना, लोहे की कटोरी में तेल डालकर छाया पात्र का दान करना, औषधि स्नान, अन्ध विद्यालय या कुष्ठाश्रम में अनाज (उड़द सहित) भोजन का दान देना, मछलियों को गेहूँ एवं उड़द के आटे की गोलियां डालना, शिव स्तोत्र एवं शनि स्तोत्र का पाठ एवं शनि से सम्बन्धित वस्तुओं का दान करना शुभ एवं लाभदायक माना जाता हैं।

शनि के दान योग्य वस्तुएँ उड़द, काले तिल, काले चने, सरसों का तेल, काली गाय, काला वस्त्र, लोहे का बर्तन, कुलथी, कस्तूरी, नीलम, नारियल, काले एवं नीले पुष्प, शनि का दान सायंकाल को करना प्रशस्त माना जाता है।

उपाय-शनि शुभ होता हुआ भी शुभफल प्रकट न कर रहा हो तो निम्न उपाय करना चाहिए।

(1) घर में नीले रंग के पर्दे तथा नीले रंग की चादरों का प्रयोग करना और स्वयं भी बहुधा नीले रंग के वस्त्रों का प्रयोग करना शुभ होगा।

(2) लोहे के पात्र में तेल का छाया-पात्र करके तेल को पाँच शनिवार तक आक के पौधे पर अथवा 'शनि मन्दिर' में डालना शुभ होगा। 5वें शनिवार को तेल चढ़ाने के बाद तेल वाली कटोरी को वही दबा देना या वही चढ़ा देना शुभ होगा। तेल चढ़ाते समय शनि के बीज मन्त्र का जप करने से शनि ग्रह का प्रभाव कम हो जाता हैं।

(3) यदि किसी भी जातक की कुंडली के अष्टम भाव में शनि बेठा हो तो अशुभ एवं रोगकारक होता हैं। इस समस्या को दूर करने के लिए संकटनाशन श्री गणेशस्तोत्र का पाठ एवं श्री गणेश चतुर्थी का व्रत रखना विधि पूर्वक करना चाहिए।

राहु शान्ति के लिए उपाय

राहु जिस कुण्डली में १, २,४,५,७,८, ९, १० या १२वें भाव में स्थित हो अथवा शत्रु या नीच राशि में या शत्रु ग्रह युक्त, दृष्ट हो तो ऐसे जातक को शरीर कष्ट, तनाव, धन सम्बन्धी उलझनें, बुद्धि विभ्रम, कलह क्लेश, वृथा भ्रमण आदि परेशानियों का सामना करना पड़ता है। राहु जनित अरिष्ट फल निवारण हेतु निम्नलिखित किसी एक मन्त्र का १८ हजार की संख्या में जप करना चाहिए।

तन्त्रोक्त राहु मन्त्र - ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः राहवे नमः

जप संख्या १८०००

राहुगायत्री मन्त्र- ॐ शिरो रूपाय विद्महे अमृतेशाय धीमहि तन्नो राहु प्रचोदयात्॥

एवं राहु स्तोत्र का पाठ करना, चलते पानी में नारियल बहाना, श्री दुर्गा पूजा करना, अपाहज एवं कुष्टाश्रम में अनाज, फल, आदि का दान करना चाहिए।

राहु दान योग्य वस्तुएँ-सप्तधान्य (सतनाजा), गोमेद, सीसा, काला घोड़ा, तिल, तैल, काले पुष्प, नीला वस्त्र, उड़द, खडग (चाकू इत्यादि), कम्बल, बिल पत्र, मौसमी फल, कस्तूरी आदि। राहु का दान रात्रि कालीन करना प्रशस्त माना जाता है।

उपाय- अशुभ राहु या राहु की महादशा या अन्तर्दशा में निम्नलिखित उपाय करें-

(1) काले व नीले वस्त्र पहनने से परहेज करें तथा चाँदी की चेनी व लॉकेट पहनना शुभ होगा।

(3) काले तिल, कच्चा कोयला, नीले रंग के ऊनी कपड़े में बाँधकर शनिवार अथवा राहु के नक्षत्रों में घर के आंगन में दबाना शुभ होगा। अथवा नीले वस्त्र के बांधे रूमाल को राहु मन्त्रपढ़ते हुए जल में प्रवाह कर देवें।

केतु शान्ति के लिए उपाय

केतु कुण्डली में १, २, ४, ५, ७, ८, एवं १२वें भाव में हो, अथवा अशुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो या नीच राशिगत हो तो जातक / जातिका को शरीर कष्ट, आपसी कलह, व्यवसाय में हानि, घरेलू उलझनों आदि का सामना रहता है। केतु कृत अरिष्ट फल निवारण हेतु निम्नलिखित किसी एक मन्त्र का १७ हजार की संख्या में जप करना लाभदायक रहता है-

तन्त्रोक्त केतु मन्त्र ॐ स्रां स्रीं स्रौं सः केतवे नमः

केतु गायत्री मन्त्र- ॐ पद्म पुत्राय विद्महे अमृतेशाय धीमहि तन्नो केतु प्रचोदयात्॥

सुनिश्चित मन्त्र जप के अतिरिक्त केतु से सम्बन्धित वस्तुओं का दान, दुर्गा व गणेश जी की उपासना, गर्म वस्त्र (कम्बलादि) का दान, केतु औषधि स्नान, अन्ध विद्यालय या कुष्ट आश्रम में अनाज, दवाईयों, वस्त्रादि का दान, पक्षियों को सतनाजा डालना तथा केतु यन्त्र धारण करना कल्याणकारी रहता है

केतु-दान योग्य, वस्तुएं- लहसुनिया, लोहा, बकरा, नारियल, तिल, सप्तधान्य, धूम (धुएँ जैसे) वर्ण का वस्त्र, कस्तूरी, लौह, चाकू, कपिला गाय, दक्षिणा सहित। केतु का दान रात्रिकालीन प्रशस्त माना जाता है।

उपाय

(1) केतु की शान्ति के लिए श्री गणेश चतुर्थी का व्रत रखें तथा श्री गणेश पूजन तथा लड्डुओं का भोग लगाना शुभ होगा।
(2) काले वस्त्र में बाँधकर काले व सफेद तिल चलते पानी में बहाना शुभ माना जाता हैं।

1.5 नवग्रह स्त्रोत परिचय

भारतीय परम्परा में नवग्रहों की आकृति के बारे में ग्रहों के स्वरुप से जाना जा सकता हैं कि ग्रहों का प्रभाव मानव जीवन पर अनेक प्रकार से पड़ता रहता हैं। यहाँ पर ग्रहों के द्वारा होने वाले समस्याओं का समाधान नवग्रह स्त्रोत के माध्यम से भी किया जाता हैं जो आगे दिया जा रहा हैं।

जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्

के फूल के तरह जिनकी कान्ति है, कश्यप से जो उत्पन्न हुए हैं, अंधकार जिनका शत्रु है, जो सब पापों को नष्ट कर देने वाले हैं, उन सूर्य भगवान को मैं प्रणाम करता हूँ।

दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम् ।
नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुट भूषणम्

दही, शंख अथवा हिम के समान जिनकी दीप्ति है, जिनकी उत्पत्ति क्षीर-समुद्र से है, जो शिवजी के मुकुट पर अलंकार की तरह विराजमान रहते हैं, मैं उन चन्द्र देव को प्रणाम करता हूँ.

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्.
कुमारं शक्ति हस्तं तं मंगलं प्रणमाम्यहम् ।

पृथ्वी के उदर से जिनकी उत्पत्ति हुई है, विद्युत पुंज के समान जिनकी प्रभा है, जो हाथों में शक्तिधारण किये रहते हैं, उन मंगल देव को मैं प्रणाम करता हु।

प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।

सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम्

प्रियंगु की कली की तरह जिनका श्याम वर्ण है, जिनके रूप की कोई उपमा नहीं है, उन सौम्य और गुणों से युक्त बुध को मैं प्रणाम करता हूँ।

देवानां च ऋषीणां च गुरुं कांचनसन्निभम् ।

बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम्

अर्थ - जो देवताओं और ऋषियों के गुरु हैं, कंचन के समान जिनकी प्रभा है, जो बुद्धि के अखण्ड भण्डार और तीनों लोकों के प्रभु हैं, उन बृहस्पति को मैं प्रणाम करता हूँ.

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्

सर्वशास्त्र प्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम्।

अर्थ - तुषार, कुन्द अथवा मृणाल के समान जिनकी आभा है, जो दैत्यों के परम गुरु हैं, उन सब शास्त्रों के अद्वितीय वक्ता शुक्राचार्यजी को मैं प्रणाम करता हूँ.

नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।

छायामार्तण्डसम्भूतं तं नमामि शनैश्चरम्।

अर्थ - नील अंजन के समान जिनकी दीप्ति है, जो सूर्य भगवान के पुत्र तथा यमराज के बड़े भ्राता हैं,

अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्

सिंहिकागर्भसम्भूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम्।

अर्थ - जिनका केवल आधा शरीर है, जिनमें महान पराक्रम है, जो चन्द्र और सूर्य को भी परास्त कर देते हैं, सिंहिका के गर्भ से जिनकी उत्पत्ति हुई है, उन राहु देवता को मैं प्रणाम करता हूँ.

पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम्।

अर्थ - पलाश के फूल की तरह जिनकी लाल दीप्ति है, जो समस्त तारकाओं में श्रेष्ठ हैं, जो स्वयं रौद्र रूप और रौद्रात्मक हैं, ऐसे घोर रूपधारी केतु को मैं प्रणाम करता हूँ.

इति व्यासमुखोद्गीतं यः पठेत्सुसमाहितः ।

दिवा वा यदि वा रात्रौ विघ्नशान्तिर्भविष्यति।

व्यास के मुख से निकले हुए इस स्तोत्र का जो सावधानीपूर्वक दिन या रात्रि के समय पाठ करता है, उसकी सारी विघ्न बाधायें शान्त हो जाती हैं.

नवग्रह स्तोत्र ज्योतिष शास्त्र में नौ खगोलीय पिंडों (नवग्रहों) को समर्पित एक विधा है। जिसमें सूर्य, चंद्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु शामिल हैं। माना जाता है कि इस स्तोत्र का जप करने से कई लाभ मिलते हैं। तथा ग्रहों का सामंजस्य भी बना रहता हैं। नवग्रह स्तोत्र नौ ग्रह देवताओं को प्रसन्न करने के साथ साथ ऊर्जा को भी संतुलित करने का कार्य करता है। ग्रह किसी व्यक्ति की कुंडली में अशुभ ग्रहों की स्थिति के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने में मदद करता है। और समग्र ग्रह सद्भाव को बढ़ावा देता है। नकारात्मक प्रभावों से सुरक्षा नवग्रह स्तोत्र का जप पूजा पाठ करके प्रतिकूल ग्रह के कारण होने वाले नकारात्मक प्रभावों, बाधाओं और चुनौतियों से सुरक्षा चाहते हैं। शास्त्रों में वर्णित हैं की अशुभ ग्रहों की दशा होने से व्यक्ति को समस्या, नुकसान और दुर्भाग्य से उस व्यक्ति की सुरक्षा करता हैं। ज्योतिष में कुछ ग्रहों की स्थिति स्वास्थ्य संबंधी विषयों से भी जुड़ी होती है। माना जाता है कि नवग्रह स्तोत्र का पाठ करने से स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का निदान भी किया जाता हैं। स्वास्थ्य पर हानिकारक ग्रहों के प्रभाव को शांत करने से जातक को अपने कैरियर और सफलता में वृद्धि, शिक्षा और वित्त सहित जीवन के विभिन्न पहलुओं में सफलता और समृद्धि की प्राप्ति होती हैं। माना जाता है कि नवग्रह स्तोत्र का जप सफलता और प्रचुरता के लिए अनुकूल सकारात्मक ग्रह ऊर्जा को आकर्षित करता है। भावनात्मक और मानसिक स्थिरता ग्रहों का प्रभाव किसी के भावनात्मक और मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव डाल सकता है। यह भी माना जाता है कि नवग्रह स्तोत्र नौ दिव्य पिंडों की ऊर्जा में सामंजस्य स्थापित करके और तनाव, चिंता और मानसिक अशांति को कम करके भावनात्मक और मानसिक स्थिरता प्रदान करता रहता है।नवग्रहों के प्रभाव को कम करने के लिए आध्यात्मिकता का भी सहारा लिया जाता हैं। विकास और ज्ञान प्राप्त करने के लिए नवग्रह स्तोत्र का प्रातः तथा सायंकाल पाठ किया जाता हैं। यह नवग्रहों द्वारा प्रतिनिधित्व की गई दिव्य शक्तियों के साथ उनके संबंध को गहरा करने में मदद करता है। और आंतरिक शांति, भक्ति और आध्यात्मिक विकास को बढ़ावा देता है। दोषों का निवारणः वैदिक ज्योतिष में, कुछ ग्रह संयोजन या दोष किसी के जीवन में प्रतिकूल प्रभाव पैदा कर सकते हैं। दोषों और उनके नकारात्मक परिणामों को कम करने के लिए नवग्रह स्तोत्र का जप एक प्रभावी उपाय माना जाता है

1.6 नवग्रह लोकिक मन्त्र परिचय

सूर्य

पद्मासनः पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिः सप्ततुरङ्गवाहः।
दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देव ।।

हे सूर्यदेव! आप रक्तकमल के आसन पर विराजमान रहते हैं, आपके दो हाथ हैं तथा आप दोनों हाथों में रक्तकमल लिए रहते हैं। रक्तकमल के समान आपकी आभा है। आपके वाहन-रथ में सात घोड़े हैं, आप दिन में प्रकाश फैलाने वाले हैं। लोकों के गुरु हैं तथा मुकुट धारण किए हुए हैं, आप प्रसन्न होकर मुझ पर अनुग्रह करें।

चन्द्रमा-

श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डधरो द्विबाहुः ।
चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी श्रेयांसि मह्यं विदधातु देव ।।

हे चन्द्रदेव! आप श्वेत वस्त्र तथा श्वेत आभूषण धारण करने वाले हैं। आपके शरीर की कांति श्वेत है। आप दंड धारण करते हैं, आपके दो हाथ हैं, आप अमृतात्मा हैं, वरदान देने वाले हैं तथा मुकुट धारण करते हैं, आप मुझे कल्याण प्रदान करें।

मंगल-

रक्ताम्बरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगमो गदाभृत्।
धरासुतः शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्वरदः प्रशान्तः ।।

जो रक्त वस्त्र धारण करने वाले, रक्त विग्रह वाले, मुकुट धारण करने वाले, चार भुजा वाले, मेष वाहन, गदा धारण करने वाले, पृथ्वी के पुत्र, शक्ति तथा शूल हैं

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्च हारी।
चर्मासिधृक् सोमसुतः सदा मे सिंहाधिरूढो वरदो बुधश्च ।।

जो पीत वस्त्र धारण करने वाले, पीत विग्रह वाले, मुकुट धारण करने वाले, चार भुजा वाले, दंड धारण करने वाले, माला धारण करने वाले, ढाल तथा तलवार धारण करने वाले और सिंहासन पर विराजमान रहने वाले हैं, वे चंद्रमा के पुत्र बुध मेरे लिए सदा वरदायी हों।

बृहस्पति-

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः ।
दधाति दण्डञ्च कमण्डलुञ्च तथाक्षसूत्रं वरदोऽस्तु मह्यम् ।।

जो पीला वस्त्र धारण करने वाले, पीत विग्रह वाले, मुकुट धारण करने वाले, चार भुजा वाले, अत्यंत शांत स्वभाव वाले हैं तथा जो दंड, कमण्डलु एवं अक्षमाला धारण करते हैं, वे देवगुरु बृहस्पति मेरे लिए वर प्रदान करने वाले हों।

श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तः।
तथाक्षसूत्रञ्च कमण्डलुञ्च जयञ्च बिभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम् ।।

जो श्वेत वस्त्र धारण करने वाले, श्वेत विग्रह वाले, मुकुट धारण करने वाले, चार भुजा वाले, शांत स्वरूप, अक्षसूत्र तथा जयमुद्रा धारण करने वाले हैं, वे देत्यगुरु शुक्राचार्य मेरे लिए वरदायी हों।

नीलद्युतिः शूलधरः किरीटी गृध्रस्थितस्त्राणकरो धनुष्मान्।
चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रशान्तो वरप्रदो मेऽस्तु स मन्दगामी ।।

जो नीली आभा वाले, शूल धारण करने वाले, मुकुट धारण करने वाले, गृध्र पर विराजमान, रक्षा करने वाले शनि देव हमारा कल्याण करे।

1.7 सारांश

प्रस्तुत नवग्रह की आकृति नामक इकाई मैं आप सभी ने नवग्रहों का परिचय तथा नवग्रहों शांति, नवग्रह दान, नवग्रहों का परिहार, नवग्रहों के तन्त्रोक्त मंत्र द्वारा एकाक्षरी मंत्र द्वारा वैदिक मंत्रों का उल्लेख इस ईकाई मैं जातक के कल्याणार्थ किया गया हैं। इस ईकाई मैं नवग्रहों का स्वरूप क्या हैं इस विषय का उपस्थापन भी किया गया हैं जिसके माध्यम से व्यक्ति के जीवन मैं चलनें वाली प्रक्रियाओं, लाभ, हानि का ज्ञान प्राप्त हो सके विषय का प्रतिपादन किया गया हैं। नवग्रहों के वर्ण, गुण, स्वरूप तथा कब कब इन नवग्रहों का प्रभाव जीवन मैं पड़ता रहता हैं इनका भी उल्लेख किया गया हैं। नवग्रहों की आकृति का विचार किया जाय तों भारतीय प्राचीन ऋषियों नें खगोल मैं सूक्ष्म दृष्टि से देखा तो कुछ विशेष आकृतियां दिखाई देनें लगी जैसे मेष राशि की आकृति भेड जैसे पशु के समान दिखाई दिया तो उस आकतिके स्वरूप को देखकर के ऋषियों ने उस आकृति का निश्चय किया कि यह भेड़ा आकृति की राशि हैं। इन सभी अनुसंधान के माध्यम से वह राशि निश्चित की गयी जो मेष राशि के नाम से प्रचलित हुई। जिस भी व्यक्ति के जीवन मैं मेष राशि हो तो उसके स्वरूप, स्वभाव,तथा प्रकृति के अनुरूप जातक का स्वभाव दिखाई देता हैं। इसी तरह वृषभ राशि का विचार किया जाय तो वृषभ राशि बैल की आकृति लिए हुये हैं। आकाशीय मंडल मैं ऋषियों ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से बैल की आकृति को देखा तो उसका नाम वृषभ रख दिया जो वृषभ राशि के नाम से प्रचलित होने लगा व्यक्ति का जीवन इसी तरह के व्यवहार से राशि के अनुसार उनका स्वभाव भी दिखाई पड़ता हैं। इसी क्रम मैं मिथुन राशि

जो दो जोडे मैं दिखाई देता हैं कर्क जो केकड़ा केसमान ,सिंह राशि वाले जातक सिंह के समान साहसी होते हैं। कन्या राशि वाले जातक दुविधा मैं रहते हैं। तुला तराजू के समान तोल, मोल करनें वाला होता हैं। वृश्चिक राशि वाले जातक का स्वभाव वृश्चिक के समान दिखाई देता है। धनु राशि के 15अंश तक का भाग पुरुष कहलाता हैं ये तदनुसार फल प्राप्त करता हैं।मकर राशिका स्वामी शनि होंने के कारण इस दशा मैं हानि ज्यादा रहती हैं। कुंभ राशि का स्वरूप घड़ा धारण किये हुए दिखाई देता हैं। मीन राशि के जल मैं रहनें वाली मछली के समान दिखाई पड़ती, इन सभी ग्रहों की आकृति तथा स्वरूप के माध्यम से व्यक्ति का स्वभाव भी वैसे ही बन जाता हैं।

1.8 पारिभाषिक शब्दावली

1. श्वेत	सफेद वस्तु
2. धनुष्मान्	धनुष धारण करनें वाला
3. सूर्य सुत	सूर्य का पुत्र
4. मन्द	शनि ग्रह
5. द्विबाहु	दोनों हाथ
6. श्वेताम्बर	श्वेत वस्त्र वाला
7. धरा	पृथ्वी
8. आरुढ	विराजमान
9. वरद।	वरदान देने वाला
10. अर्धकायं	आधा शरीर
11. रोद्र	क्रोध
12. काश्यपेयं	जो कश्यप से उत्पन्न हैं
13. क्षीर	दूध
14. शक्ति हस्तं	जो हाथों मैं शक्ति धारण करते हैं
15. जीव	वृहस्पति
16. सोम	चन्द्र

1.9 अभ्यास प्रश्न

1. नवग्रह आकृति के बारे मैं सर्वप्रथम किसने आकृति को पहचाना
2. सूर्य की आकृति कैसे दिखती हैं

3. बुध देव किस पर आरूढ़ होते हैं
4. मोती की माला कोन देव धारण करते हैं
5. वृहस्पति का गोत्र क्या हैं।
6. हाथी के ऊपर आसन वाले देव हैं।
7. भोजकट देश के अधिपति हैं।
8. सूर्य ग्रह की शांति मैं क्या दान करना चाहिए।
9. तत्काल फल प्राप्ति के लिए किस मंत्र का जप करना चाहिए तन्त्रोक्त मंत्र का
10. बुध की कितनी जप संख्या हैं
11. गुरु ग्रह की दशा मैं क्या दान करना चाहिए।
12. मेष पर आरुढ होते हैं।

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ऋषियों नें
2. अश्वों मैं बैठे किसी दिव्य पुरुष के सदृश
3. सिंह पर
4. चन्द्र देव
5. अंगिरा
6. गुरु
7. शुक्र
8. लाल वस्तुओं का
9. तन्त्रोक्त मंत्र का
10. 9000 जप किया जाता हैं।
11. पीले वस्तुओं का दान
12. मंगल देव

1.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. कर्मकांड भास्कर

2. पंचदेव पूजन पद्धति
3. नित्यकर्म पूजा प्रकाश
4. कर्मठ गुरु

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. ग्रहों की आकृति के स्वरूप का विस्तृत विवेचन कीजिए।
2. सूर्य, चंद्र, गुरु, के स्वरूप का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
3. नवग्रह स्तोत्र पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डालिए।
4. शनि, केतु, राहु ग्रह शांति का प्रतिपादन कीजिए।
5. नवग्रह लोकिक मंत्रों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

इकाई -2 नवग्रहों का स्थान

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मानव जीवन में नवग्रह की भूमिका

2.4 नवग्रह पूजन में गुरु, शुक्र,शनि, विचारणीय वस्तु

2.5 लोकिक मंत्रो के द्वारा नवग्रह पूजन

2.6 कर्मकांड तथा ज्योतिष शास्त्र मैं नवग्रहों के स्थान

2.7 सूर्य ग्रह शांति विधि

2.8 सारांश

2.9 पारिभाषिक शब्दावली

2.10 अभ्यास प्रश्न

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2 .12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

2.13 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 221 "**नवग्रह का स्थान**" नामक ईकाई मैं आप सभी अध्ययन करनें जा रहे हैं। इससे पूर्व की ईकाइयों मैं आपने नवग्रहों के बारे में पढ़ा होगा अब हम इस ईकाई का विशेष रूप से अध्ययन करते हैं। भारतीय प्राचीन संस्कृति मैं ज्योतिष शास्त्र के अंतर्गत नव ग्रहों के बारे मैं सूर्यादि नवग्रह सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु, इन सभी ग्रहों का विस्तृत विवेचन किया गया हैं। सूक्ष्म रूप से देखा जाय तो इन नवग्रहों के द्वारा ही समय समय पर होंने वाले घटित घटनाओं का भी ज्ञान किया जाता हैं। जो इस संसार मैं आया हैं उसका किसी न किसी ग्रह से सम्बन्ध रहता हैं। जब किसी जातक का जन्म होता हैं तो उस समय उस जातक के ऊपर किसी न किसी ग्रह का प्रभाव रहता हैं जिससे उस के स्वभावानुसार उस जातक का स्वभाव भी दिखनें लगता हैं, जैसे किसी व्यक्ति का जन्म प्रातः काल द्वि स्वभाव लग्न मिथुन मैं होता हैं तो उस जातक का मिथुन लग्न होगा। उसी मिथुन लग्न के अनुसार जातक का स्वभाव भी बनेगा जिससे उस मनुष्य पर उसका प्रभाव पड़ता हुआ वह मनुष्य उसी तरह का कार्य करते हुए आगे बढ़ता हैं। इन नवग्रहों में से क्रूर ग्रह सूर्य,भोम, शनि, राहु, केतु पाप ग्रह एवं छाया ग्रह के नाम से भी जानते हैं। उस जन्मकालीन समय मैं इन सभी क्रूर एवं पाप ग्रहों का कर्मकांड के माध्यम से पूजन एवं शान्ति करनी चाहिए। इस ईकाई मैं यह भी आप जानेंगे की नवग्रहों का स्थान कहां कहां तथा किस मनुष्य से इनका सम्बन्ध हैं इसका फल क्या होगा इन सभी का उपाय कैसे किया जाता हैं ,इन सभी विषयों का आप विधिपूर्वक अध्ययन भी करेंगे तथा नवग्रहों के स्वरूप, नवग्रहों का जन्म स्थान , इनका स्वभाव, नवग्रहों का वर्ण, इत्यादि विषयों का अध्ययन कर वर्तमान समय मैं कर्मकांड की क्या विशेषता है तथा समाज इस विषय को कितना गहनम से अपना रहा हैं इन सभी विषयों का आप इस ईकाई मैं अध्ययन करेंगे तथा यही इस ईकाई का मुख्य ध्येय हैं।

2.2 उद्देश्य

- ❖ नवग्रहों का मनुष्य पर क्या प्रभाव हैं? इस विषय से अवगत होंगे।
- ❖ नवग्रहों का स्थान कहां कहां होता हैं? जान सकेंगे।
- ❖ पोराणिक नवग्रह मंत्रों को समझ पायेंगे।
- ❖ सूर्यादि नवग्रह शांति विधान का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ❖ कर्मकांड और ज्योतिष के सम्बन्ध को समझ सकेंगे।

2.3 मानव जीवन में नवग्रह की भूमिका

प्रायः विचार किया जाता है कि ज्योतिष शास्त्र में नवग्रहों तथा द्वादश भावों में स्थित राशि के अनुसार ही जातक की कुंडली का निर्माण किया जाता हैं। तथा ग्रहों के स्वभाव के अनुसार ही जातक के जीवन में उसी प्रकार का स्वभाव बन जाता है। जो राज्य को देने वाला होता है। इसके अतिरिक्त भी यह अन्य अन्य वस्तुओं को देने मैं समर्थ होने के साथ साथ आगे का मार्ग भी प्रशस्त करता रहता हैं। किसी मनुष्य कि जन्म होने से पूर्व ही उसके पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार उस जातक की कुंडली का निर्माण किया जाता हैं, जिससे उसके सही कर्म का निश्चय किया जाए तथा उसी आधार पर जन्म होने के पश्चात जातक की कुंडली का निर्माण ज्योतिष शास्त्र के अनुसार सही गणित के माध्यम से किया जाता हैं। कि जातक का कोन सा लग्न होगा या जातक के जन्म के समय कोन सा लग्न चल रहा था इन सभी विषयों का उल्लेख उस समय किया जाता हैं। ग्रहों के अनुसार ही जातक को फल की प्राप्ति होती हैं। जो बारह राशियां हैं वो बारह राशियां जातक की कुंडली में स्थित रहती हैं जैसे मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, मीन ये द्वादश राशियाँ बारह भावों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन बारह भावों में नौ ग्रह भी स्थित होते हैं जिससे जातक को शुभ, तथा अशुभ फल की प्राप्ति होती रहती हैं। इन सभी बारह भावों में स्थित यहाँ का अशुभ होना जैसे शनि ग्रह का अष्टम भाव में होना, या द्वादश भाव मैं होना अशुभ भावों मैं होकर शनि की महादशा चल रही हो तो जातक को विपरीत दिशा मैं ले जाता हुआ कष्ट देता हैं। उस समय जातक की समस्या को दूर करने लिए कर्मकांड के माध्यम से नवग्रहों की शांति विधिवत करने का विधान शास्त्रों मैं दिया गया हैं। जिससे जातक की समस्या का निदान हो सके। जैसे मेष राशि का स्वामी मंगल, वृष का शुक्र, मिथुन का बुध, कर्क चन्द्र, सिंह का सूर्य, कन्या का बुध, तुला का शुक्र, वृश्चिक का मंगल, धनु का, वृहस्पति, मकर का शनि, कुंभ का शनि, मीन का बृहस्पति ये राशियों के अधिपति कहे जाते हैं। इन्हीं के माध्यम से भी फलादेश करना चाहिए। किसी भी मनुष्य का संबंध किसी न किसी ग्रहों के साथ होता हैं। ग्रहों का संबंध जातक की कुंडली के द्वादश भावों से होता हैं। जिसे भाव के नाम से जाना जाता हैं। जिस भाव में जो ग्रह हो उससे सम्बन्धित ग्रहों का फल जातक को प्राप्त होता रहता हैं। जैसे सूर्य कुंडली के प्रथम भाव मैं स्थित हो तो सूर्य से सम्बन्धित वस्तुएं तांबा, स्वर्ण, पिता का विचार, जातक स्वयं के लाभ के लिए, धैर्य, शौर्य, युद्ध में विजय, राज्य की सेवा, ज्ञान, भक्ति का मार्ग, यात्रा, धर्मादिकार्यों में प्रवृत, देवालयों का निर्माण, सामाजिक कार्य, उत्साह, इत्यादि का विचार सूर्य ग्रह के माध्यम से किया जाता हैं। फल दीपिका ग्रंथ के अनुसार

ताम्र स्वर्ण पितृशुभफलं चात्मसौख्यप्रतापं
धैर्य शौर्य समितिविजयं राजसेवां प्रकाशम् ।
शैवं कार्य वनिगिरिगतिं होमकार्यप्रवृत्तिं
देवस्थानं कथयतु बुधस्तैक्ष्ण्यमुत्साहमर्कात् ॥

इसी तरह चन्द्रमा के द्वारा जातक को मां का सुख, मानसिक समस्या, गंगा मैं स्नान तथा पूजन का मन, पंखा, छत्र, चंद्रर, फल, पुष्प, अन्न कृषि कार्य को करना, यश की प्राप्ति, शारीरिक सुख तथा सौन्दर्यता का भी विचार जातक की कुंडली में किया जाता है। जिससे जातक को सही दिशा में आने पर इन सभी का लाभ मिल सके।

मातुः स्वस्ति मनःप्रसादमुदधिस्नानं सितं चामरं
छत्रं सुव्यजनं फलानि मृदुलं पुष्पाणि सस्यं कृषिम् ।
कीर्तिं मौक्तिककांस्यरौप्यमधुर क्षीरादिवस्त्वाम्बुगो-
योषाप्तिं सुखभोजनं तनुसुखं रूपं वदेच्चन्द्रतः ॥

भौम से व्यक्ति के सत्त्व, भूमि से उत्पन्न पदार्थ खनिज धातु, रत्नादि, सहोदर भाई के गुण, क्रूरता, युद्ध, साहस, विद्वेष, भोजनालय, अग्नि, स्वर्ण, सगोत्रिय, अस्त्र, चोर, शाह, परची में अनुरतिपुरुष हास, पापकर्म, सेनाधिपत्य का विचार करना चाहिए। विद्वता , वाकशक्ति, कला कौशल में निपुणता, विद्वानों द्वारा प्रशस्ति, मामा, वाक् , उपासना आदि में पटुता, विद्या में पटुता, यज्ञ, वैष्णव सम्प्रदाय की क्रिया, सत्य भाषण, शुक्ति सीप, विहार मनोरंजन ,स्थान, शिल्प, बन्धु-बान्धव, युवराज पद, मित्र और भागिनेय बहन का पुत्र-भांजा आदि का विचार बुध से करना चाहिए।

सत्त्वं भूफलितं सहोदरगुणं क्रौर्यं रणं साहसं
विद्वेषं च महानसाग्निकनकज्ञात्यस्त्रचोरात्रिपून् ।
उत्साहं परकामिनीरतिमसत्योक्तिं महीजाद्वदे-
द्वीर्यं चित्तसमुन्नतिं च कलुषं सेनाधिपत्यं क्षतम् ॥

2.4 नवग्रह पूजन में गुरु, शुक्र,शनि, विचारणीय वस्तु

नवग्रहों के पूजन मैं वृहस्पति,शुक्र,शनि से किये जानें वाले विचारणीय वस्तुओं को ज्ञात करना आवश्यक होता हैं। इन्हीं वस्तुओं के माध्यम से जातक के जीवन मैं कोन सी समस्या किस ग्रह के द्वारा होती हैं उनका ज्ञान कर समस्या का समाधान किया जाता हैं। वृहस्पति के स्वरूप को देखा जाए तो गुरु ग्रह पीत वर्ण के आभा से युक्त,भूरे केश तथा नेत्र, जिनका शरीर वृहत्तम हो तथा वह कफ प्रधान

प्रकृति के साथ साथ श्रेष्ठ बुद्धि को देनेवाले, शंख की ध्वनि के समान जिनकी वाणी हों, ज्ञान,पुत्र, सद्गुण, मन्त्री, अध्ययन या अध्यापन व्यवहार, आचार, विचार, आध्यात्मिक में लगाव, स्मृति, शास्त्र वेद,पुराण,यज्ञ करना कराना, तप करनें मैं मन लगना, देवताओं के पूजन मैं श्रद्धा भक्ति करना, धार्मिक अनुष्ठानों को करना कोशागार, पति का सुख दया का भाव, सम्मानित होना और सही विचारों से समाज को आगे ले जानें मैं अपना सहयोग करना ही वृहस्पति ग्रह का मनुष्य पर प्रभाव पड़ता हैं। यदि गुरु ग्रह विपरीत हो तो विपरीत फल की प्राप्ति जातक को कराता हैं। ऐसे जातकों को नवग्रह शांति पूजन के माध्यम से गुरु ग्रह का शांति पूर्वक पौरोहित्य कर्म के द्वारा शांति की जाती हैं। इसी प्रकार से शुक्र ग्रह से इन सभी वस्तुओं से विचार तथा शुक्र के स्वरूप का ज्ञान होना या महादशा का चलना इन सभी प्रकार के विषयों का प्रभाव मनुष्य पर पड़ता हैं। रंग-बिरंगे वस्त्र धारण किये, काले घुँघराले केश, स्थूल अङ्ग और शरीर, कफ-वायु प्रधान कफ और वायु तत्त्व पर अधिकार रखने वाला, दूर्वा के अङ्कुर के समान कान्ति से युक्त, कमनीय, विशाल नेत्रों से युक्त तथा पौरुष शक्तिसम्पन्न होता है। अर्थात् पौरुषशक्ति पर शुक्र का अधिकार होता है। सम्पत्ति, वाहन, वस्त्र, आभूषण आदि का सुख, धनकोश, नृत्य, गायन, वादन आदि ललित कला, स्त्रीसुख, सुगन्धि, पुष्प, कामवासना, शय्या, भवन, धनसम्पन्नता, कवित्व-शक्ति, अनेक स्त्रियों से विलास, कामुकता, मन्त्रित्व, मिष्टवाक् और विवाहोत्सव आदि का विचार शुक्र से करना चाहिए।

सम्पद्वाहनवस्त्र भूषणनिधिद्रव्याणि तौर्यत्रिकं
भार्यासौख्यसुगन्धपुष्पमदनव्यापारशय्यालयान
श्रीमत्त्वं कवितासुखं बहुवधूसङ्ग विलासं मदं
साचिव्यं सरसोक्तिमाह भृगुजादुद्वाहकर्मोत्सवम्।

शनि ग्रह अपनी दशा मैं जातक को अधिक पीड़ित करता रहता हैं। शनि ग्रह से सम्बंधित वस्तु जेसे आयुष्य, मृत्यु, भय, पतन ऊँचे स्थान अभवा ऊँचे पद में गिरना, दुःख, अवमानमा, दरिद्रता, नौकरी, अपवाद लांछन, कलुष, पाय, अशुचि, निन्दा, विपति, स्थिरता, निम्नस्तरीय व्यक्तियों का आश्रय, जैस, तन्द्रायता, सण, लौह पदार्थ, दासता, कृषि उपकरण, कारागार आदि का विचार शनि ग्रह से करना चाहिए। पैर से विकलाङ्ग, सदैव नीचे झुकी आँखें, दुर्बल किन्तु दीर्घ शरीर, नसें उभरी हुई, वायु-प्रधान प्रकृति, आलसी, कृष्ण वर्ण, अत्यन्त चुगलखोर, स्नायुतन्त्र का अधिकारी, निर्मम, मूर्ख, लम्बे नख और दाँत से युक्त, कड़े रुखे रोमावली से युक्त शरीर, मलिन, तामस प्रकृति, क्रोधी, वृद्ध और काले वस्त्र धारण किये शनि का स्वरूप है। सप्त महीं के द्वारा विचारणीय विषयों के उल्लेख के बाद अब आगे के सभी वस्तुओं का विचार कर कर्मकांड के माध्यम से नवग्रहों की शांति की जाती

हैं। यहां विचार करनें से यह प्राप्त होता हैं कि जातक की कुंडली के बारह भावों का सम्बन्ध व्यक्ति से जुड़ा हुआ हैं, जिससे इनका प्रभाव जातक पर पड़ता रहता हैं इन सभी ग्रहों की शान्ति वैदिक लौकिक मंत्रों के द्वारा पौरोहित्य कर्म के माध्यम से नवग्रहों की शांति की जाती हैं। जातक से जुड़े सभी ग्रहों की वस्तुओं से जातक का सम्बन्ध रहता हैं।

2.5 लोकिक मंत्रो के द्वारा नवग्रह पूजन

पौरोहित्य कर्म मैं नवग्रहों का विशेष स्थान माना गया हैं। जिसके द्वारा मनुष्य की समस्याओं का समाधान हो सकें। यहां पर नवग्रहों का पूजन लौकिक मंत्रों के माध्यम से दिया जा रहा हैं। जिस प्रकार कर्मकांड करनें के लिए वैदिक मंत्रों का ज्ञान आवश्यक हैं, उसी प्रकार से पौरोहित्य कर्म करनें के लिए लौकिक या पौराणिक मंत्रों का ज्ञान होना आवश्यक होता हैं। लौकिक और वैदिक मंत्रों के द्वारा नवग्रह पूजन किया जाता हैं। यहां यह भी विचार करना आवश्यक है कि प्राचीनकाल मैं वैदिक तथा लौकिक विधि से मंत्रों का उच्चारण किया जाता था। कालांतर मैं वैदिक ऋचाओं को पढ़ाने वाले विद्वानों की कमी होंने के साथ साथ वेद मंत्रों की भी कठिनता के कारण शास्त्रों मैं ऋषियों ने लौकिक विधि का प्रतिपादन भी किया। जिससे आम जन संस्कृत तथा कर्मकांड को जान सकें। जिससे हमारे संस्कार बने रहें तथा जन सामान्य का कष्ट या नवग्रहों की शांति करनें के पश्चात् उनकी समस्या का समाधान हो सकें। इसी आशय के साथ लौकिक या पौराणिक मंत्रों का प्रचार प्रसार होते चला गया और कर्मकांड आगे बढ़ता रहा इन सभी सनातन ज्ञान परम्परा को जाननें के लिए तथा नवग्रहों तथा लौकिक मंत्रों के द्वारा कैसे पूजन किया जाता हैं उन पौराणिक मंत्रों द्वारा नवग्रह पूजन का उल्लेख यहां पर किया गया हैं।

ध्यानं

बृहस्पतिं दैत्यगुरुं महीसुतं शनैश्चरं चन्द्रसुतं च राहुम्।
दिवाकरं चन्द्रमसं सुकेतुं स्वकीयचित्ते बहुचिन्तयामि ॥

ध्यानार्थं पुष्पं समर्पयामि

आवाहनम्

समस्तप्रत्यूहसमुच्चयस्य विनाशने प्राप्तगुणाः शुभव्याः।
आवाहनं वो वितनोमि देवाः भवन्तु कल्याणकरा भवन्तः ॥

स्नानीयं जलं समर्पयामि

आसनम्

रोचिष्णुकाञ्चनचयांशुपिशङ्गिताशं वैदूर्यरत्ननिकरैरभिभासितं तम् ।
पीठं सदा सदमरैः प्रियमाद्दतं च साङ्गा नवग्रहवराः सततं भजन्तु ॥

आसनं समर्पयामि

पाद्यम्

कस्तुरिका सुरभिचन्दनमोदयुक्तमेलालवङ्गघनसारसुवासितं च ।
पाध्यम ददामि जगदेकनिवासदेवाः साङ्गा नवग्रहवराः प्रतिमानयन्तु ॥

पाद्यम् समर्पयामि

अर्घ्यम्

सौजन्यसौख्यजननीजननीजनानां येषां कृपैव वसुधा वसुधारिणी वै।
ते सर्वदेवगुरुगौरवधारिदेहा अर्घ्य सदैव हि ग्रहा मम धारयन्तु ॥

अर्घ्यम् समर्पयामि

आचमनीयम्

कं कोलपत्रहरिचन्दनपुष्ययुक्तं एलालवङ्गलवलीघनसारसारम् ।
दत्तंसदैव हृदये करुणाशयेऽत्मन् देवाः भजन्तु शुभमाचमनीयमम्भः ॥

आचमनीयम् जलं समर्पयामि

मधुपर्कम्

अधिकमानयुतः प्रियकारकः स मधुपर्क इतः समुपस्थितः ।
सुविहितस्य तथास्यसुरप्रियाः कुरुतः स्वीकरणं नवसंख्यकाः॥

मधुपर्कम् समर्पयामि

स्नानम्

जले समादाय विचित्रपुष्पाण्यगण्याणि चानीय निपातितानि ।

स्नानं विधेयं बिबुधाः समन्तादागत्य युष्माभिरिहाङ्गणे मे ॥

स्नानम् समर्पयामि

रक्तचूर्णम्

धूपादिके नातिसुवासितं तथा शोणश्रियानन्दविवर्धितेन च।

श्रीरक्तचूर्णं मलतापहारकं नवग्रहा वो मनसार्पयामि ॥

रक्तचूर्णम् समर्पयामि

धूपम्

लवङ्गपाटीरजचूर्णवर्धितं नरासुराणामपि सौख्यदायकम् ।

लोकत्रये गन्धचयप्रसारकं गृह्णन्तु धूपं गुरुकं नवग्रहाः॥

धूपम् समर्पयामि

दीपम्

सद्वर्तिकां ज्ञानविवर्धिकामिमां निपात्य दीपे विनिवेदितां तथा।

प्रज्वालितं ध्वान्तविनाशकारकं गृह्णन्तु ज्ञानस्य विशालरूपकम् ॥

दीपम् समर्पयामि

नेवेद्यम

सिद्धान्नकर्पूरविराजितं पुरः सौरभ्यसान्द्रेण विवर्धितं तथा।

नेवेद्यमेंतद्रू सुगन्धितं स्वीकृत्य मामत्र कृतार्थयन्तु वै ॥

नेवेद्यम समर्पयामि

ताम्बूलम्

दिव्या गृहा नव समेत्य गृहे मदीये भक्त्यार्पितं परमगन्धयुतं सुरम्यम्।

एलालवङ्गबहुलं क्रमुकादियुक्तं ताम्बूलमद्य मम गृह्णत हे सुरेन्द्राः।।

ताम्बूलं समर्पयामि

हिरण्य दक्षिणाः

दैवासुरैर्नित्यमशेषकाले प्रगीयमानाः प्रभवः ! पुराणाः।
गृह्णन्तु सद्यः खलु दक्षिणां च ध्यानेन भक्ते मयि वर्तितव्यम् ।।

हिरण्य दक्षिणा समर्पयामि

नीराजनम्

नीराजना सौख्यप्रदा सदैव गाढान्धकारादपि दूरकीं।
अशेषपापैः परिपूरितस्य शुद्धिं करोति प्रियमानवस्य ॥

नीराजनं समर्पयामि

प्रदक्षिणाम्

प्रदक्षिणाः सन्ति प्रदक्षिणास्तथा पदे पदे दुःखविनाशिका अपि ।
जन्मान्तरस्यापि विनाशकारिकाः पापस्य याश्चित्तविवर्धितस्य च ॥

प्रदक्षिणा समर्पयामि

पुष्पांजलि

पुष्पाञ्जलि सकलदिव्यग्रहाःमदीयं भक्त्यार्पितं मधुरगन्धयुतं ससारम्।
दीने विधाय करुणां मयि हे सुरेन्द्राः स्वीकृत्य दीनजनवत्सलतां किरन्तु ॥

पुष्पांजलि समर्पयामि

स्तवनम्

भानुः शशी धरणिजः सबुधो गुरुश्च शुक्रस्तथा दिवसनायकसूनुरेषः ।
राहुः सदैव जगतां सुहितः सकेतुरेते गृहाः शिवकराः सततं भवन्तु ॥

स्तवनं समर्पयामि

2.6 कर्मकांड तथा ज्योतिष शास्त्र मैं नवग्रहों के स्थान

भारतीय प्राचीन संस्कृति के अवलोकन करनें के पश्चात् देखा जाता हैं कि कर्मकांड और ज्योतिष का प्राचीन सम्बन्ध पहले से रहा हैं। ज्योतिषशास्त्र काल शास्त्र के नाम से भी जाना जाता रहा

हैं। काल ही सम्पूर्ण सृष्टि को चलाने मैं अपनी भूमिका का निर्वहन करता हैं,तथा सृष्टि मैं जितनें भी क्रिया कलाप होते हैं उन सभी के पीछे काल ही रहता हैं। जों सांसारिक गतिविधियों को संचालित करता रहता हैं। अब प्रश्न यह हैं कि यह सृष्टि किसने द्वारा निर्मित हैं तो शास्त्रों के अध्ययन करनें के पश्चात् ज्ञात होता हैं कि वह जगकर्ता ब्रह्म ही काल के स्वरूप मैं जगत को संचालित कर रहा है। ज्योतिषशास्त्र और कर्मकांड का क्या संबंध हैं इस विषय पर भी शास्त्रों मैं अनेकानेक ग्रन्थों मैं चलूं प्राप्त होता हैं। ज्योतिषशास्त्र मनुष्य के भविष्य को नेत्र के माध्यम से निश्चित करता हुआ अनेकानेक होने वाली घटनाओं से अवगत कराता हैं। यदि जातक का समय चक्र ठीक नहीं चल रहा हैं तो कर्मकांड के माध्यम से मंत्रों के द्वारा विधि विधान पूर्वक उस ग्रह नक्षत्रों का कर्मकांड के माध्यम से समाधान किया जाता हैं। यहां यह कहा जा सकता हैं कि ये एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। अब बात आती हैं कि नवग्रहों का स्थान कहां होना चाहिए। अध्ययन करनें के पश्चात् ज्ञात होता है कि नवग्रहों का सम्बन्ध किसी न किसी वस्तु या मनुष्य से जुडा रहता हैं। कुंडली के बारह भावों मैं बारह राशियां होती हैं उन बारह भावों मैं नवग्रहों का अपना स्थान भी निश्चित होता है। जैसे कर्क लग्न की कुंडली मैं सूर्य द्वादश मैं बैठा हो तो वह उस भाव तथा राशि मैं उसी प्रकार का फल देगा उस जातक के आंखों मैं दर्द, व्यय का होना अधिक रहता हैं। इसी तरह अन्य ग्रहों सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु, ये नवग्रह जिस भी भाव यानि स्थान मैं बैठे हो तो उस मनुष्य को उसी तरह से शुभाशुभ फल की प्राप्ति होती हैं। यदि अशुभ फल की प्राप्ति हो रही हो तो कर्मकांड के माध्यम से नवग्रहों की शांति अवश्य करनी चाहिए।इन सभी विषयों का विचार नवग्रहों के अपनें स्थानानुसार करना चाहिए।

2.7 सूर्य ग्रह शांति विधि

भगवान् सूर्य नारायण देव का पूजन पंचदेव प्रतिष्ठा के अंतर्गत की जाती हैं । सूर्य देव को सभी ग्रहों क प्रमुख यानि राजा भी कहते हैं। ये आकाशमण्डल में प्रतिदिन नियम से सत्यमार्ग पर स्वयं भ्रमण करते हुए संसार का संचालन करते रहते हैं। वेदों ने सूर्य के माहात्म्य को बतलाते हुए उसे समस्त जगत् की आत्मा भी कहा है- 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ' भगवान श्रीकृष्ण ने सूर्य और चन्द्रमा के भीतर विद्यमान तेज को अपना ही तेज बतलाया है। 'यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम्।' शास्त्रों में सूर्य और चन्द्रमा को भगवान् का नेत्र भी माना गया हैं । प्रत्यक्ष देव की विधिपूर्वक उपासना करने से दीर्घायु, आरोग्यता, मानसिक एवं शारीरिक बल, तेज, धनैश्वर्य, कीर्ति, विद्या, सौन्दर्य तथा अन्य वास्तुओ भी की प्राप्ति होती रहती हैं । एवं ग्रहपीड़ा से मुक्ति मिलती है। श्रीकृष्ण द्वारा अभिशप्त उनके पुत्र साम्ब ने अपने कुष्ट रोग को सूर्यनारायण की कृपा से समाप्त किया था। इनकी

उपासना से कुष्ठ- जैसे रोग का शमन हो जाता हैं। इसका वर्णन साम्बोपाख्यान में मिलता है। भगवान् सूर्य ही दिन-रात के काल का विभाजन करते हैं। पंच देवताओं में सूर्य नारायण की गणना भी होती है गणेश, विष्णु, शिव, दुर्गा, सूर्य जिनकी पूजा सर्वमंगल कार्यों में की जाती है। सूर्य भगवान् अन्य ग्रहों के साथ साथ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को प्रकाश एवं ऊर्जा प्रदान करते हैं। जिससे सम्पूर्ण सृष्टि का संचालन होता है। सभी प्राणियों को जन्म से ही भगवान् सूर्य के प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त करने का अवसर भी मिलता रहता सूर्य भगवान् प्रत्यक्ष देवता एवं ग्रहपति भी हैं, जो हमारे शुभ-अशुभ कर्मों के साक्षी देवता हैं। इसलिये त्रिकाल संध्या में अपने इष्ट देवता के साथ सूर्यनारायण का भी संक्षिप्त पूजन अवश्य करना चाहिये। शतपथब्राह्मण में कहा गया है की जिस दिशा से सूर्य उदित होते हैं और जहां वे अस्त होते हैं उस प्राणात्मा में सम्पूर्ण देवता अर्पित हैं। शुक्लयजुर्वेद में वर्णित है की भगवान सूर्य ही अग्नि हैं, आदित्य हैं, वायु हैं, चन्द्रमा हैं, शुक्र हैं, परम ब्रह्म हैं तथा जलाधिपति वरुण और प्रजापति हैं उन्हें परमात्मा के नाम से भी जाना जाता हैं। सूर्य नारायण जी जिस दिन किसी कारण से नही आ सकते थे तो ऋषि मुनि या जैन मुनि उस दिन भोजन भी नहीं करते थे। महाभारत युद्ध के समय भी संध्याकाल में कौरव-पाण्डव युद्ध का त्याग कर संध्यापूजन किया करते थे। शास्त्रों में त्रिकाल संध्या प्रातःकालीन संध्या तारों के रहते सूर्योदय के समय श्रेष्ठ होती है। उषा की लाली से पूर्व ही स्नान करना उत्तम माना गया है। इससे प्राजापत्य फल प्राप्त होता है। मध्यकालीन संध्या के समय सूर्य भगवान् आकाश के शिखर पर आरूढ़ होते है, तथा सायंकालीन संध्या तारों के दिखाई देने से पूर्व जब सूर्य भगवान् लाल आभायुक्त अस्ताचल को प्रस्थान करते हैं, तो वो समय उत्तम होता है। प्रातःकाल सूर्यनारायण की ओर मुख करके जप करने से मनुष्य महाव्याधि के भय से मुक्त हो जाता है। उसका दारिद्रय नष्ट हो जाता है। मध्याह्न में सूर्य की ओर मुख करके जप करने से मनुष्य सद्यः उत्पन्न पांच महापातकों से मुक्त हो जाता है तथा त्रिकाल संध्या उपासना करने से मनुष्य भाग्यवान हो जाता है। एक वर्ष तक त्रिकालसंध्या उपासना करने वाले मनुष्य को सैकड़ों यज्ञों के फल की प्राप्ति भी होती हैं। याज्ञवल्क्य स्मृति में उल्लेख किया गया है की इस पृथ्वी पर जितने भी स्वकर्मरहित द्विज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य हैं, उनको पवित्र करने के लिये ब्रह्माजी ने संध्या की उत्पत्ति की थी। इसी प्रकार रात्रि या दिन में जो भी अज्ञानवश पापकर्म हो जायें तो वे त्रिकालसंध्या करने से विनष्ट हो जाते हैं।' अत्रि ऋषि वर्णन करते हुये कहते हैं। 'नियमपूर्वक जो लोग प्रतिदिन संध्या करते हैं, वे पापरहित होकर सनातन ब्रह्मलोक को प्राप्त होते हैं।' जो व्यक्ति संध्या नही करते हैं जिसने संध्या की उपासना नहीं की, वह द्विज जीवित रहते शूद्र के समान रहता है और मृत्यु के बाद कुत्ते आदि की योनि को प्राप्त करता है। दक्षस्मृति में भी कहा गया हैं समय पर की गयी संध्या इच्छानुसार फल प्रदान करती है और बिना समय की गयी संध्या

बंध्या स्त्री के समान मिथ्या होती हैं ।मित्रकल्प ग्रन्थ में भी कहा गया है प्रातःकाल में तारों के रहते हुए, मध्याह्नकाल में जब सूर्य आकाश के मध्य में हों, सायंकाल में सूर्यास्त के पूर्व ही इस तरह तीन प्रकार की संध्या करनी चाहिये। देवीभागवत पुराण में भी कहा गया है प्रातःकाल में पूर्व की ओर मुख करके जब तक सूर्य का दर्शन न हो और सायंकाल में पश्चिम की ओर मुख करके जब तक तारों का उदय न हो, तब तक भगवान सूर्य का जप ,पूजन ,उपासना करते रहना चाहिए । याज्ञवल्क्यस्मृति में भी शास्त्र-पुराणों में संध्यापूजन का अत्यन्त विस्तृत पूजन का वर्णन प्राप्त होता हैं । सर्वप्रथम साधक कुल परम्परानुसार गुरुमुख से दीक्षा एवं आज्ञा प्राप्त करके साधक स्नानादि कर्म के पश्चात् पवित्र वस्त्र धारण कर, ग्रहमन्दिर में पूर्वाभिमुख बैठकर, धूप दीपक प्रज्जवलित कर, प्राणायाम एवं आचमनादि कर, गुरु सहित पंचदेवताओं एवं नवग्रहों को पुष्पादि अर्पित कर उनका संक्षिप्त पूजन करें। तत्पश्चात् सूर्य भगवान् का ध्यान करते हुए सूर्य गायत्री मंत्र की एक माला करे। 'ॐ आदित्याय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्।' अथवा सूर्य मंत्र का जप करें। 'ॐ घृणिः सूर्याय नमः'' इसके उपरान्त् रक्तपुष्प, चन्दन एवं केसर आदि युक्त अर्घ्य सूर्य भगवान् को गायत्री मंत्र से प्रदान करना चाहिये। सुबह और दोपहर को एक एड़ी उठाये हुए खड़े होकर अर्घ्य देना चाहिये। सुबह कुछ झुककर खड़ा होवे और दोपहर को सीधे खड़े होकर तथा शाम को बैठकर अर्घ्य प्रदान करना चाहिये। नदी या सरोवर के अतिरिक्त पवित्र स्थान पर अर्घ्य दें, जहां पर वह किसी के पैर न लगें। अच्छा है किसी बर्तन में अर्घ्य देकर उसे वृक्ष के मूल में डाल दिया जाये। अर्घ्य प्रदान करते हुए सूर्यमण्डल में अपने इष्टदेवता के स्वरूप का ध्यान करना चाहिये। जो सूर्योपासक हो वह सूर्योपनिषद, आदित्य हृदय स्तोत्र अथवा ब्रह्म गायत्री का जप भी कर सकते हैं । वैदिक ज्योतिष में सूर्य ग्रह को नवग्रहों का राजा भी कहा जाता है। सूर्य के प्रभाव से मनुष्य को सम्मान और सफलता मिलती का लाभ भी प्राप्त होता है। सूर्य ग्रह शांति के लिए कई प्रकार के उपाय बताये गए हैं। सूर्य मंत्र, सूर्यदेव का लोकिक, वैदिक मंत्रो के द्वारा और सूर्य नमस्कार समेत कई उपायों को करने से मनुष्य को लाभ प्राप्त होता है। प्रतिदिन नियमित रूप से सूर्य मंत्र उच्चारित करने और सूर्य नमस्कार करने से सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है। सरकारी एवं विभिन्न क्षेत्रों में उच्च सेवा का कारक भी सूर्य को माना जाता हैं। वैदिक ज्योतिष के अनुसार जन्म कुंडली में सूर्य की शुभ स्थिति व्यक्ति को जीवन में उन्नति प्रदान करती है । परन्तु यदि सूर्य अशुभ प्रभाव देता है, तो सम्मान की हानि, पिता को कष्ट, उच्च पद प्राप्ति में बाधा, हृदय और नेत्र संबंधी रोग होते हैं। किसी भी समस्या के समाधान के लिए सूर्य ग्रह से जुड़े विभिन्न उपाय करना चाहिए । वे उपाय कोन कोन से हैं उसके बारे में आगे बताया जा रहा हैं । भगवान सूर्य का हस्त नक्षत्र ,में रविवार

से लेकर साथ रविवार तक सूर्य का पूजन शुद्ध आसन में बैठकर पंचांग पूजन कर अपने इस्ट का ध्यान ,सूर्य देव का ध्यान करना चाहिए।

हंसारूढां सिताब्जे त्वरुणमणिलसद्भूषणां साष्टनेत्रां
वेदाख्यामक्षमालां स्रजमयकमलं दण्डमप्यादधानाम् ।
ध्याये दोर्भिश्चतुर्भिस्त्रिभुवन जननीं पूर्वसंध्यादिवन्द्याम् ।
गायत्रीमृक्सवित्रीमभिनव वयसं मण्डले चण्डरश्मेः ।।
विश्वमातः सुराभ्यर्च्य पुण्ये गायत्रि वेधसि।
आवाहयाम्युपास्त्यर्थमेयेनोघ्नि पुनीहि माम् ।।

मध्याह्नकालीन श्रीसूर्य ध्यान :-

वृषेन्द्रवाहना देवी ज्वलत्त्रिशिखधारिणी।
श्वेताम्बरधरा श्वेतनागाभरणभूषिता ।।
श्वेतस्रगक्षमालालंकृता रक्ता च शंकरा।
जटाधराधराधात्री धरेन्द्रांगभवाम्भवा ।
मातर्भवानि विश्वेशि आहूतैहि पुनीहि माम् ।।

सायंकालीन श्रीसूर्य ध्यान :-

संध्या सायन्तनी कृष्णा विष्णुदेवा सरस्वती। खगगा कृष्णवक्त्रा तु शंखचक्रधरापरा ।।
कृष्णस्रगभूषणैर्युक्ता सर्वज्ञानमयर वरा। वीणाक्षमालिका चारुहस्ता स्मितवरानना ।।

ध्यान के बाद भगवान सूर्य का संकल्प इस प्रकार करे ।

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे चवर्तमानान्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्यावर्तेकदेशे अविमुक्तवाराणसीचे महालयशाने आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकण्टकविराजिते भागीरथ्याः पश्चिमे तीरे इति काश्यामेव विशेषतः अन्यत्र तत्तद्देशवैशिष्टचमुच्चार्य अमुकनाम्नि संवत्सरे, अमुकायने अमुकऋतौ, महामाङ्गल्यप्रदमासोत्तमे मासे, अमुकमासे', अमुकपक्षे, अमुकतिथौ, अमुकवासरे, अमुकनक्षत्रे, अमुकयोगे, अमुककरणे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे, अमुकराशिस्थिते सूर्ये, अमुकराशिस्थिते देवगुरौ, शेषेषु ग्रहेषु यथा-यथा राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणगण-विशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः, अमुकशर्माऽहं वर्माऽहं, गुप्तोऽहं मम

सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य पुत्रपौत्रधनधान्यदीर्घायुरारोग्यैश्वर्यादिवृद्धिसमृद्धचर्थं श्रुति-स्मृति-पुराणोक्तफलप्राप्तिपूर्वकं धर्मार्थकाममोक्षचतुर्विधपुरुषार्थसिद्धिद्वारा शाश्वतब्रह्मलोकप्राप्त्यर्थं गणपति-सूर्यदेव प्रतिष्ठामहं करिष्ये । तदङ्गविहितं गणेशपूजनपूर्वकं पुण्यावाचनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारापूजनं आयुष्यमन्त्र जपं

नान्दीश्राद्धमाचार्यादिवर्णानि च अहं करिष्ये ।इस प्रकार सूर्य देव का पंचामृत द्वारा तथा गंगा जल से शुद्धोदक स्नान करना चाहिये। उसके बाद सूर्य देव के वैदिक ,लोकिक, या सूर्य स्त्रोत के द्वारा १०८ बार पाठ करने का विधान हैं

आचार्य सूर्य देवता की मूर्ति को किसी शुद्ध पात्र में रखकर घृत से उनका अंजन कर उस मूर्ति के ऊपर निरन्तर पंचामृत की धारा निम्न मन्त्रों का उच्चारण करके प्रदान करावें -

ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्ने परिव्ययामसि । पावको अस्मभ्यर्ठ० शिवो भव ॥ १ ॥ ॐ हिमस्य त्वा जरायुणाग्ने परि-व्ययामसि । पावको अस्मभ्यर्ट० शिवो भव ॥ २ ॥ ॐ उप ज्मन्नुप वेतसेऽवतर नदीष्वा। अग्ने पित्तमपामसि मण्डूकि ताभिरागहि। सेमं नो यज्ञं पावकवर्णर्ट० शिवं कृधि । ॐ अपामिदं न्ययनठ० समुद्रस्य निवेशनम्। अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावको अस्मभ्यर्ट० शिवो भव ॥

हे अग्निदेव हम जल के शैवाल से आपको परिवेष्टित करते हैं। अब आप हमारे प्रति शोधक एवं शान्त हो जाओ हे अग्निदेव हिम की झिल्ली सी इस शैवाल से हम आपको परिवेष्टित करते हैं, अतः आप हमारे लिए शान्त एवं शोधक बनो हे अग्निदेव आप पृथ्वी में, वेंत की शाखा में तथा नदी के शीतल शैवाल में प्रवेश करो। हे अग्निदेव आप तो जलों का ही तेज हैं, हे मेढुकि आप इन शैवाल वेंत के साथ हम में प्रविष्ट हो जाओ और आप हमारे इस यज्ञ को अग्नि तुल्य तेजस्वी एवं शान्त बनाओ ॥ ३ ॥ हे अग्निदेव आपकी ज्वालाएँ हमसे अतिरिक्त लोगों को तापित करें। आप हमारे लिए सदैव शान्त बने रहो क्योंकि यह प्रयोग जलों का आपूर एवं समुद्र का बड़ा स्थल है।

ॐ अग्ने पावक रोचिषा मन्द्रया देव जिह्वया। आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥ ॐ स नः पावक दीदिवोऽग्ने देवाँ २ ॥ इहावह उप यज्ञ गुं हविश्च नः ॥ॐ पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामनुच उषसौ न भानुना। तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण आ यो घृणे न ततृषाणो अजरः ॥ ॐ नमस्ते

हरसे शोचिषे नमस्ते अस्त्वर्चिषे। अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावको अस्मभ्य गुं ० शिवो भव ॥ ॐ नृषदे वेडप्सुषदे बेड्वर्हिषदे वेड्वनसदे वेट् स्वर्विदेवेद् ॥ ॐ ये देवा देवानां यज्ञिया यज्ञियाना गुं संवत्सरीणमुपभाग मासते। अहुतादो हविषो यज्ञे अस्मिन्त्स्वय पिबन्तु मधुनो घृतस्य ॥

हे शोधक अग्निदेव आप अपनी धीमी गति ज्वाला जिह्वा के साथ हमें प्राप्त होओ। इस यज्ञ में देवों को लाओ और उनका यहाँ पूजन करो ॥ हे शोधक देदीप्यमान अग्निदेव ! आप देवों को यहाँ लाओ और उन्हें हमारी हवि प्रदत्त कराओ ॥ जो अग्नि अपनी शोधक और चेतना प्रदत्त करने वाली दीप्ति के द्वारा इस पृथ्वी पर सदैव प्रकाशित होता है। जिस प्रकार से प्रातःकाल अपनी दीप्ति से स्वयं शोमित होते हैं। अश्वयुद्ध में शत्रु को हिंसित करते हुए जो अग्निदेव अत्यन्त तृषित एवं सदैव अजर बने रहते हैं। उस अग्निदेव को हम मेढुकी, शैवाल एवं वैतस शाखा के द्वारा प्रशमित करते हैं। हे अग्निदेव ! आपके रसहरणशील तेज को प्रणाम है, आपकी अर्चिष् को प्रणाम है, आपकी ज्वालायें हमसे अतिरिक्त लोगों को तपावें। हे अग्निदेव! आप हमारे लिए निरन्तर कल्याणकारी बने रहो ॥ जठराग्नि रूप से मानवों में रहने वाले अग्निदेव के लिए यह परोक्ष रूप से आहुति है। जलों में और्वाग्नि रूप से स्थित अग्नि के लिए यह परोक्ष है। आहवनीयादि भाव से कुशों में स्थित अग्निदेव के लिए यह परोक्षाहुति है। वृक्षों में दावाग्नि भाव से स्थित अग्नि के लिए यह परोक्ष आहुति है। स्वर्गलोक में आदित्य भाव से वर्तमान अग्निदेव के लिए यह परोक्षाहुति है ॥ देवताओं के बीच में जो देवता प्रार्थना के योग्य हैं, जो यजनीय देवताओं से भी वार्षिक कर के रूप में परिपक्व अन्नादि भाग को सदैव प्राप्त करते हैं, वे प्राणादि देवता हमारे इस यज्ञ में प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित होकर घृतादि का स्वयं भक्षण करें ॥ इसी प्रकार से अग्न्यु तारण के बाद सूर्य देव का बीज मंत्रो से प्राण प्रतिष्ठा करनी चाहिए जो आगे दिया गया हैं। आचार्य सूर्य प्रतिमा को बाएँ हाथ में रखकर दायें हाथ से आच्छादन कर निम्न प्राणसंचार मन्त्रों का उच्चारण कर प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिए।

ॐ आं ह्रीं क्रों यँ रै लें वें शॅ बँ सँ हैं क्षै हैं सः सोऽहं अस्याः वास्तुमूर्तेः प्राणा इह प्राणाः। ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लें वें राँ वँ सँ हैं क्षै हैं सः सोऽहं अस्याः सूर्यमूर्तेः जीव इह स्थितः। ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लें व शै षं से हैं हैं हैं सं ः सोऽहं अस्याः सूर्यमूर्तेः वाड्मनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्रजिह्वा-घाणपाणिपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

आचार्य निम्न प्राणप्रतिष्ठा के मंत्र और श्लोक का उच्चारण करके सूर्य देव की प्रतिष्ठा कर षोडशोपचार से सूर्य देव का पूजन कर रक्त वस्त्रो को सूर्य देव को पहनानना चाहिए। उसके बाद भगवान् सूर्य में

वैदिक ,लोकिक तथा बीज मंत्रो के द्वारा कलश के जल से यज्ञ करके वैदिक तथा पोराणिक मंत्रो के द्वारा अभिषेक करने का विधान हैं।

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञठ० समिमं द धातु।
विश्वेदेवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ॥
अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणा क्षरन्तु च।
अस्यै देवत्वमर्चायै मां हेतिति कश्चन ॥

जो प्राणादि देवता इन्द्रादि देवों के शरीर में निवास कर देवत्व को प्राप्त हुए हैं। जो इस जीव के संग अग्रगामी होते हैं तथा जिनके बिना कोई भी शरीर गति को प्राप्त नहीं कर सकता, इस प्रकार के प्राणदेवता न तो स्वर्गलोक में बसते हैं और न ही पृथ्वीलोक में ही रहते हैं। ऐसे देवता तो मात्र नासिका, चक्षुः आदि आयतनों में ही निवास करते हैं। हे अग्निदेव! आपकी प्राणदात्री, अपानदात्री. व्यानदात्री, ब्रह्मवर्चस् दात्री एवं धनदात्री ज्वालाएँ हमारे लिए कल्याणकारी अर्थात् मंगलमय होवें। वे हमारे अतिरिक्त अन्य शत्रुओं को तापित करें। हे शोधक अग्निदेव आप हमारे लिए निरन्तर सदैव शान्त बने रहो ॥ इसी क्रम में आगे बढ़ते हुये सूर्य देव के नाम से आहुति का विधान हैं।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम।
ॐ इन्दाय स्वाहा। इदं इन्द्राय न मम।
ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये न मम।
ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम।

सूर्य के हवनार्थ दधि, खीर, घृताक्तचरु, शाकल्य एवं अर्क समिधा लेकर मंत्रो में द्वारा हवन करना चाहिए ॐ सूर्याय स्वाहा। इदं सूर्याय न मम॥ होम के अनन्तर दिक्पाल, क्षेत्रपालादि को बलिदान देकर आरती करने के बाद पुष्पांजलि कर ,देवताओ का विसर्जन करके दान कर, लोकिक या पोराणिक मंत्रो से कलश के जल से अभिषेक करना चाहिये।

सुरास्त्वामभिसिञ्चन्तु ये च सिद्धाः पुरातनाः
ब्रह्माविष्णुश्च शम्भुश्च साध्याश्च समरुद्गणाः ॥
आदित्यावसवो रुद्रा अश्विनौ च भिषग्वरी।
अदितिदेवमाता च स्वाहा सिद्धिः सरस्वती ॥
कीर्तिर्लक्ष्मी द्युतिर्भीश्च सिनीवाली कुहूस्तथा।
दितिश्च सुरसा चैव विनता कद्रेव च ॥
देवपत्यश्च यः प्रोक्ता देवमातर एव च।

सवस्त्विामभिसिञ्चन्तु शुभाश्चाप्सरसां गणाः॥
नक्षत्राणि मुहूर्ताश्च याश्चाहोरात्रसन्धयः ।
सम्वत्सरा दिनेशाश्च कला काष्ठा क्षणा लवाः॥
सर्वे त्वामभिषिञ्चन्तु कालस्यावयवाः शुभाः।
च एते चान्ये मुनयो वेदव्रतपरायणाः॥
सशिष्यास्तेऽभिसिञ्चन्तु सदानाश्च तपोधनाः ।
वैमानिकाः सुरगणाः सरवैः सागरैः सह ॥
मुनयश्च महाभागा नागा किम्पुरुषा खगाः।
वैखानसा महाभागा द्विजा वैहायसाश्च ये ॥
सप्तर्षयः सदाराश्च ध्रुवस्थानानि यानि च।
मरीचिरत्रि पुलहः पुलस्त्यः क्रतुरङ्गिराः॥
भृगुः सनत्कुमारश्च सनकोऽथ सनन्दनः।
सनातनश्च जैगीषव्यो दक्षश्च भलन्दनः॥
एकतश्च द्वितश्चैव त्रितो जाबालिकश्यपौ।
दुर्वासा दुर्विनीतश्च कण्वः कात्यायनस्तथा ॥
मार्कण्डेयो दीर्घतपाः शुनःशेफो विदूरथः ।
और्वः सम्वर्तक श्चैव च्यवनोऽत्रिपराशरः ॥
द्वैपायनो यवक्रीतो देवराजो सहानुजः ।
पर्वतास्तरवो वल्यः पुण्यान्यायतनानि च ॥
प्रजापतिर्दितिश्चैव गावो विश्वस्य मातरः
वाहनानि च दिव्यानि सर्वलोकाश्चराचराः॥
अग्नयः पितरस्तारा जीमूताः खं दिशो जलम्।
एते चान्ये च बहवो वेदव्रतपरायणाः॥
सेन्द्राः देवगणाः सर्वे पुण्यश्रवणकीर्तनाः।
तोयैस्त्वामभिसिञ्चन्तु सर्वोत्पातनिबर्हणे॥
यथाभिषिक्तो मघवाने तैर्मुदितमानसैः।
तथात्वामभिषिञ्चन्तु पूर्णा सन्तु मनोरथाः॥

इस मंत्र में कहा गया हैं , हे देवगण, प्राचीन सिद्धगण, ब्रह्मा, विष्णु, शम्भु साध्य अदिति, स्वाहा, सिद्धि, सरस्वती, कीर्ति, लक्ष्मी, द्युति, श्रीः, सिनीवाली, कुहु, दिति, गण, मरुद्गण, आदित्यगण, वसु, रुद्रगण, अश्विनीकुमार-जैसे श्रेष्ठभिषग्वर, देवमाता सुरसा, विनता, कद्रु आदि देवपत्नियाँ एवं देवमाताएँ तथा शुभ अप्सरसगण आपका अभिषेक करें सभी नक्षत्र, मुहूर्त, अहोरात्र, सन्धियाँ, सम्वत्सरगण, दिन के स्वामी (सप्तवारेश), कला, काष्ठा, क्षण, लव आदि जो भी काल के अवयव हैं, वे आपका अभिषेक करें। इनके अतिरिक्त जो वेदपरायण मुनि हैं तथा दानशील तपोधन हैं। वैमानिक, सुरगण, गर्जना करते हुए समुद्र तथा अपने शिष्यों अनुचरों-सेवकों सहित आपका अभिषेक करें। महाभाग्यशाली मुनिजन, नागजन, किम्पुरुष, खग, वैखानस, वैहायसद्विव आकाशगामी पक्षी, सपत्नीक सप्तर्षिगण, ध्रुवस्थान, मरीचि, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, अंगिरा, भृगु, सनत्कुमार, सनक, सनन्दन, सनातन, दक्ष, जैगीषव्य, भलन्दन, एकत, द्वित, त्रित, जाबालि, कश्यप, दुर्वासा, दुर्विनीत, कण्व, कात्यायन, मार्कण्डेय, दीर्घतपा, शुनःशेफ, विदूरथ, और्व, च्यवन, अत्रि, पराशर, द्वैपायन, यवक्रीत, अनुजसहित देवराज मुनि आदि आपका अभिषेक करे॥ पर्वत, वृक्ष, वल्ली, पुण्यस्थान, प्रजापति, दिति, विश्व की माताएँ गौवें, दिव्यवाहन, सभी चराचर लोक, अग्नियाँ, पितर, तारागण, मेघगण, आकाश, दिशाएँ, जल-ये सब तथा अन्य सभी वेदव्रतपरायण मनुष्य, इन्द्रसहित देवतागण, सभी पुण्यश्लोक मानव, आपका अभिषेक इस जल के द्वारा सभी उत्पातों की शान्ति के लिये करें। जिस प्रकार देवताओं ने अभिषेककर इन्द्र को प्रसन्न किया, उसी प्रकार वे देवगण आपका भी अभिषेक करें, जिससे आपके मनोरथ पूर्ण हों॥ इसके अलाव सूर्य देव का पाठ पूजन कर सूर्य देव की उपासना करनी चाहिए जिसे आने वाले समस्याओं से मुक्ति प्राप्त हो सके ।

2.8 सारांश

प्रस्तुत ईकाई मैं आप सभी ने नवग्रहों का स्थान कहा कहा होता हैं इस बारे मैं जान लिया होगा। तथा कर्मकांड का इन नवग्रहों से क्या संबंध रहा हैं। इन सभी का विस्तृत अध्ययन करके समझनें का प्रयास भी किया होगा। आपने नवग्रहों कि जन्म कुंडली मैं अशुभ होना उस अशुभत्व को नष्ट करने के लिए कर्मकांड की आवश्यकता होती हैं जिसके माध्यम से अशुभत्व का प्रभाव कम होता रहता हैं। सूर्यादि नवग्रहों मैं ग्रहों के राजा के रुप मैं सूर्य ग्रह की शांति किस प्रकार की जाती हैं इसका भी विस्तार से वर्णन किया गया हैं तथा अन्य ग्रह शुक्र, चन्द्र, गुरु से सम्बंधित वस्तुओं का भी विचार किया गया हैं। बारह भावों मैं नौ ग्रहों का स्थान भी निश्चित किया गया हैं इन सभी विषयों का

उल्लेख इस ईकाई मैं किया गया हैं। आप सभी ने इस ईकाई के अध्ययन करनें से नवग्रह क्या हैं तथा इनका स्थान कहां कहां होता हैं इन सभी का ज्ञान प्राप्त कर लिया होगा।

2.9 पारिभाषिक शब्दावली

1. आकाशगामी	आकाश मार्ग से
2. अहोरात्र	रात और दिन
3. अप्सरा	जो स्वर्ग लोक मैं नृत्य करती हैं
4. सप्तर्षि	सात प्रकार के ऋषि
5. देवतागण।	देवताओं के गण यक्ष गंधर्व आदि
6. मनोरथ	मन की इच्छा या लक्ष्य की प्राप्ति
7. उपासना	तपस्या
8. सोम	चन्द्र
9. प्रतिमा	मूर्ति को कहते हैं।
10. रजत	चांदी
11. अपामार्ग	चिचिड़ी
12. वर्ण	रंग
13. जीव	वृहस्पति
14. स्वर्ण	सोना
15. समस्या	परेशानियां
16. धरती	भूमि
17. भगिनी	बहन
18. ध्वनि	आवाज
19. धनकोश	धन का स्थान
20. देह	शरीर
21. माध्यम	किसी वस्तु या व्यक्ति के द्वारा
22. आवाहन	भगवान को बुलाना

2.10 अभ्यास प्रश्न

1. सूर्य का पर्यायवाची हैं। आदित्य
2. मीन का स्वामी हैं।
3. भाव कितने होते हैं।
4. कुंभ राशि का भाव हैं।
5. शनि ग्रह अपनी दशा मैं कैसा फल देता हैं।
6. पीत वर्ण किस ग्रह का हैं।
7. कुंडली मैं नवग्रहों के स्थान कहलाते हैं।
8. गुरु ग्रह की शांति कैसे करनी चाहिए
9. कर्मकांड को अन्य किस नाम से जाना जाता हैं।
10. कफ, वायु प्रधान कोनसा ग्रह हैं।
11. आवाहन किसे कहते हैं। किसी प्रतिष्ठित देव को मंत्रों के द्वारा स्वागत करना
12. मधु पर्क क्या हैं। दूध और ही का मिश्रण
13. प्रदक्षिणा कहा जाता हैं।
14. पंचदेवों मैं कोन से देव हैं।
15. सूर्य ही अग्नि है , सूर्य ही आदित्य हैं किस वेद मैं वर्णित हैं।
16. सूर्य पूजन मैं किन पुष्पों का प्रयोग किया जाता हैं।
17. हंसारुढ हैं।
18. विश्वमात: कोन हैं।
19. संकल्प किसे कहते हैं।
20. अभिषेक क्या हैं।
21. पिता कारक ग्रह कोन हैं।

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. आदित्य
2. गुरु
3. बारह
4. शनि
5. अशुभ फल
6. वृहस्पति
7. भाव

8. वैदिक,लोकिक मंत्रो से
9. कर्मकांड
10. शुक्र
11. किसी प्रतिष्ठित देव का मंत्रों के द्वारा स्वागत
12. दूध और घी का मिश्रण
13. परिक्रमा को
14. गणेश, दुर्गा देवी, विष्णु, सूर्य देव,
15. शुक्ल यजुर्वेद
16. लाल पुष्पों का
17. हंस के ऊपर आरुढ यानि बैठना
18. गायत्री
19. किसी भी कार्य को करनें की प्रतिज्ञा
20. जिसके द्वारा पूजन किया जाय उस जल के द्वारा शुद्धिकरण,या स्नान करना।
21. सूर्य

2.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

5. कर्मकांड भास्कर
6. पंचदेव पूजन पद्धति
7. नित्यकर्म पूजा प्रकाश
8. कर्मठ गुरु

2. 13 निबंधात्मक प्रश्न

1. लौकिक मंत्रों से नवग्रह पूजन का विधिपूर्वक उल्लेख कीजिए।
2. नवग्रहों के स्थान का विस्तार पूर्वक प्रतिपादन कीजिए
3. कर्मकांड का मानव जीवन से क्या संबंध हैं ? प्रकाश डालिए।
4. सूर्य ग्रह शांति का विस्तृत उल्लेख कीजिए।
5. गुरु, शुक्र, चन्द्र, ग्रहों से विचारणीय वस्तुओं का विवेचन कीजिए।

इकाई -3 नवग्रहों का स्थान भेद

3.1 प्रस्तावना
3.2 उदेश्य
3.3 विषय परिचय
3.3.1 ग्रहों के पूजन का महत्व
3.4 नवग्रहों के स्थान
3.4.1 ग्रह विशेष एवं मन्त्र
3.5 आधिदेवता पूजन व स्थान क्रम
3.5.1 अधिदेवताओं का आवाहन क्रम
3.6 प्रत्यधि देवताओं के स्थान
3.7 बोधात्मक प्रश्न
3.8 सारांश
3.9 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर
3.10 सहायक पाठ्यक्रम सामग्री
3.11 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों इससे पूर्व आपने पूजन के विधान को विस्तार पूर्वक पढ़ा अब इसी क्रम में हम नवग्रहों के पूजन में स्थान भेद का क्या महत्व है इसको विस्तार पूर्वक पड़ेंगे। ग्रह शांति पद्धति में व नवग्रहों का पूजन करते समय, उनके स्थानों का एक विशेष क्रम होता है। यह क्रम वैदिक कर्म पद्धति तथा ज्योतिषशास्त्र के द्वारा निर्धारित होता है। जिसमें सूर्य केंद्र में होता है, और अन्य ग्रह पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण-पश्चिम, पूर्व-पश्चिम और उत्तर-पूर्व दिशाओं में स्थित होते हैं। ग्रहों के स्थान भेद का विशेष वर्णन तो ज्योतिष शास्त्र में मिलता है, क्यूंकि यह विषय ही ज्योतिष शास्त्र का है। ज्योतिष में तो स्थान भेद का विस्तार से वर्णन किया गया है, परन्तु यहाँ हम कर्मकाण्ड की दृष्टि से इसका अध्ययन करेंगे कि ग्रह मंडप वेदी आदि जो कि प्राय: पूजन पद्धति में प्रयोग में आता है।

3.2 उदेश्य

- ❖ इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पूजन क्रम को ठीक से समझ सकेंगे।
- ❖ नव ग्रहों का पूजन में कौन सी दिशा स्थान होता है इसके शास्त्रीय विधान से परिचय हो सकेगा।
- ❖ नवग्रहों के स्थान का क्या भेद है इस सिद्धांत से परिचय हो सकेगा।
- ❖ पूजन में ग्रह मंडल एवं मण्डपों का बोध हो सकेगा।
- ❖ इसके अध्ययन के उपरान्त ग्रह- पूजन का सम्यक रूप से बोध हो सकेगा।

3.3 विषय परिचय

जैसे कि आपलोगों को विदित होगा कि नवग्रहों का महत्व और उनका पूजन हमारे सनातनी वैदिक संस्कृति एवं परम्परा में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इसलिए शास्त्रों में भी कहा गया है **"ग्रहाधीनम जगत सर्वं** । अर्थात समस्त चराचर की सभी शुभाशुभ घटना ग्रहोंके अधीन है। इसलिए ग्रहों की गति , स्थिति आदि का वर्णन ज्योतिष शास्त्र में निहित है। ग्रहों के पूजन में जो वेदी – मण्डप आदि का निर्माण किया जाता है , उसमें ग्रहों के अपने – अपने स्थान होते हैं।उनके स्थानों का एक विशेष क्रम होता है। यह क्रम वैदिक प्राविधि व ज्योतिषीय प्रविधि से निर्धारित किया जाता है । हमारे ऋषि – मनीषीयों ने उस क्रम को इस प्रकार बताया है - जिसमें सूर्य केंद्र में होता है, और अन्य ग्रह पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण-पश्चिम, पूर्व-पश्चिम और उत्तर-पूर्व दिशाओं में स्थित होते हैं। आइये इस क्रम को विस्तार पूर्वक जानते हैं -

1. सूर्य: केंद्र में स्थित होता है, जो कि नवग्रहों का केंद्र बिंदु होता है.
2. शुक्र: पूर्व में स्थित होता है।
3. मंगल: दक्षिण में स्थित होता है।
4. शनि: पश्चिम में स्थित होता है।
5. बृहस्पति: उत्तर में स्थित होता है।
6. चंद्र: दक्षिण-पूर्व में स्थित होता है।
7. राहू: दक्षिण-पश्चिम में स्थित होता है।
8. केतु: पूर्व-पश्चिम में स्थित होता है।
9. बुध: उत्तर-पूर्व में स्थित होता है।

3.3.1 नवग्रहों के पूजन का महत्व

नव ग्रहों का प्रभाव इस अखिल चराचर जगत पर विशेष रूप से पड़ता है, यदि ग्रह शुभ हैं हमारे अनुकूल हैं तो शुभ फल मिलता है , ठीक इसके विपरीत यदि हो तो अशुभ फल प्राप्त होते हैं इसलिए ग्रहों की अनुकूलता एवं प्रसन्नता के लिए ग्रह पूजन व शान्ति कर्म करने का शास्त्रीय मार्ग हमारे आचार्यों ने बताया है , अत: नवग्रहों की पूजा शुभ फल प्राप्त करने, जीवन में सुख-शांति लाने, और मनोकामनाओं की पूर्ति करने के लिए की जाती है. यह पूजा नकारात्मक ऊर्जा को दूर करती है और सकारात्मक ऊर्जा का संचार करती है. यदि किसी व्यक्ति की कुंडली में कोई ग्रह अशुभ स्थिति में है, तो नवग्रह पूजा से उस ग्रह को शांत किया जा सकता है।

नवग्रह वेदी

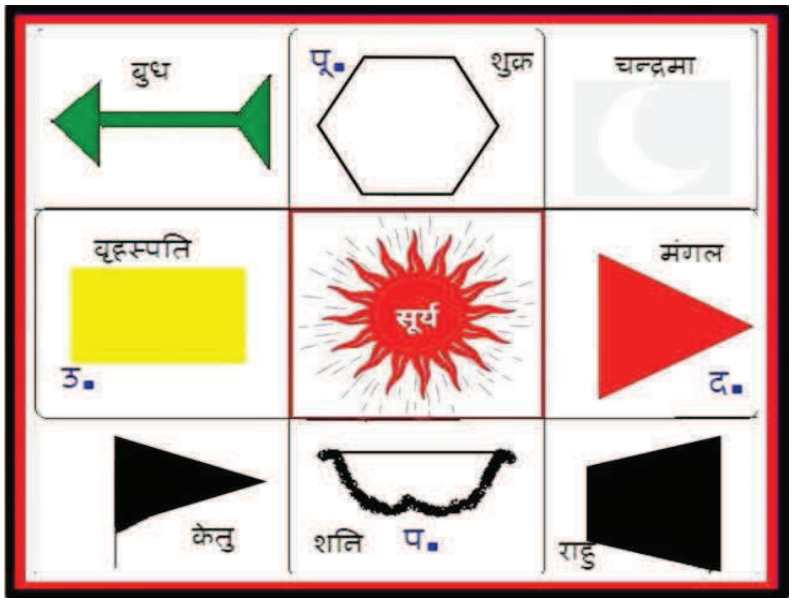

3.4 नवग्रहों के स्थान भेद

उपरोक्त आपने नवग्रहों के स्थान को जाना कि कौन-सा स्थान कौन सा ग्रह का है आदि अब हम स्थान भेद के क्रम में जानेंगे कि ग्रहों की वेदी मण्डप आदि किस स्थान में होनी चाहिए या कहाँ स्थापित कि जाती है क्यूंकि ईशान कोण वास्तु की दृष्टि से देव स्थान माना जाता है। इसलिए नवग्रह वेदी, हवन कुंड या वेदी के ईशानकोण में स्थापित की जाती है। यदि अन्य बहुत सारी वेदी न भी बनाई गयी हो तो भी हवन के समय नवग्रह वेदी बनाई जाती है। नवग्रह मंडल में सूर्यादि नवग्रह, अधि देवता, प्रत्यधि देवता, पंचलोक्पाल और दशदिक्पाल की पूजा की जाती है। नवग्रह मंत्र वैदिक (सम्पूर्ण मंडल) के साथ पूजा विधि नीचे दी गयी है। नवग्रह पूजन में नवग्रहों की पताका का भी प्रयोग किया जाता है। हवन के बाद नवग्रह मंडल के चारों ओर नवग्रह और दशदिक्पाल को सदीप दधि-माष-बलि भी देनी चाहिये।

3.4.1 ग्रह विशेष एवं मन्त्र

ग्रहों के स्थान के पश्चात ग्रहों का आह्वाहन किया जाता है नीचे हम ग्रहों के मन्त्र सहित अहवाह्न विधि भी संक्षिप्त रूप से जान सकते हैं।

सूर्य

(मध्य में गोलाकार, लाल) का आवाहन (लाल अक्षत-पुष्प लेकर) – ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्न मृतं मर्त्यं च। हिरण्येन सविता रथेना देवो याति भूवनानि पश्यन्॥ ॐ जपाकुसुम संकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् । तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूभुर्वः स्वः कलिंग देशोद्भव काश्यपगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य । इहागच्छ इहतिष्ठ ॐ सूर्याय नमः॥

चन्द्र

(अग्निकोण में, अर्धचन्द्र, श्वेत) का आवाहन (श्वेत अक्षत-पुष्पसे) – ॐ इमं देवा असपत्न गुं सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना गुं राजा॥ ॐ दधिशङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्। ज्योत्सनापतिं निशानाथं सोममावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोद्भव आत्रेयगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम । इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ सोमाय नमः ॥

मंगल

(दक्षिण में, त्रिकोण, लाल) का आवाहन (लाल फूल और अक्षत लेकर) – ॐ अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपा गुं रेता गुं सि जिन्वति ॥ ॐ धरणीगर्भ संभूतं विद्युत्कांति समप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अवन्तिदेशोद्भव भारद्वाजगोत्र रक्तवर्ण भो भौम ।इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ भौमाय नमः ॥

बुध

(ईशानकोण में, हरा, धनुष) का आवाहन (पीले, हरे अक्षत-पुष्प लेकर) – ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वभिष्टापूर्ते स गुं सृजेथामयं च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत॥ ॐ प्रियंगुकलिकाभासं रूपेणाप्रतिमं बुधम्। सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम्॥ ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयगोत्र पीतवर्ण भो बुध । इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ बुधाय नमः॥

बृहस्पति

(उत्तर में पीला, चतुरस्र) का आवाहन (पीले अक्षत-पुष्पसे) – ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अहार्द द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यदीदयच्छवसऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥ ॐ देवानां च मुनीनां च गुरुं काञ्चनसन्निभम्। वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम्॥ ॐ भूर्भुवः स्व सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो गुरो। इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ बृहस्पतये नमः ॥

शुक्र

(पूर्व में श्वेत, पञ्चास्र या षडस्र) का आवाहन (श्वेत अक्षत-पुष्प से) – ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ॥ ॐ हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् । सर्वशास्त्र प्रवक्तारं भार्गवमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भुर्भूवः स्वः भोजकटदेशोद्भव भार्गवगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र । इहागच्छ, इहतिष्ठ ॐ शुक्राय नमः॥

शनि

(पश्चिम में, काला मनुष्य) का आवाहन (काले अक्षत-पुष्प से) – ॐ शं नो देवीरभिष्ट्य आपो भवन्तु पीतये । शं योरभि स्रवन्तु नः ॥ ॐ नीलांबुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् । छाया मार्तण्ड सम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर । इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ शनैश्चराय नमः ॥

राहु

(नैऋत्यकोण में, काला मकर) का आवाहन (काले अक्षत-पुष्प से)- ॐ कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः। सखा कया सचिष्ठया वृता॥ ॐ अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् । सिंहिकागर्भ संभूतं राहुमावाहयाम्यहम्। ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनपुरोद्भव पैठीनसगोत्र कृष्णवर्ण भो राहो। इहागच्छ, इह तिष्ठ ॐ राहवे नमः॥

केतु

(वायव्यकोण में, कृष्ण खड्ग) का आवाहन (धूमिल अक्षत-पुष्प लेकर) – ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे । समुषद्भिरजायथाः ॥ ॐ पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् । रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुद्भव जैमिनिगोत्र धूम्रवर्ण भो केतो । इहागच्छ, इहतिष्ठ, ॐ केतवे नमः ॥

3.5 अधिदेवता-आवाहन-पूजन

ग्रहों के स्थान के क्रम में अधिदेवताओं का भी स्थान होता जहाँ नवग्रहों का स्थान होता उसी वेदी या मण्डप में क्रमशः प्रत्येक निर्दिष्ट कोष्ठकों में दायीं ओर अधिदेवताओं का स्थान होता है अधिदेवता कौन – कौन से हैं इनका वर्णन नीचे के क्रम में देख सकते हैं।

3.5.1 अधिदेवताओं का आवाहन क्रम –

शास्त्रीय ग्रन्थों में अधिदेवता एवं उनका स्थान इस प्रकार है - अधिदेवता – शिवः शिवा गुहो विष्णुर्ब्रह्मेन्द्रयमकालकाः । चित्रगुप्तोऽथ भान्वादेर्दक्षिणे चाधिदेवता ॥ इन सबके लिए सिर्फ हरिद्रारंजित चावल का प्रयोग करना चाहिए। आवाहन और प्रतिष्ठा नवग्रहक्रम से ही करना है –

१.शिव (सूर्य के दायें भाग में)- ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ॐ एह्येहि विश्वेश्वरनस्त्रिशूलकपालखट्वाङ्गधरेण सार्धम् । लोकेश यक्षेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजां भगवन् नमस्ते ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ईश्वराय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ॥

२.उमा (चन्द्रमा के दायें भाग में) – ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रो पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाणसर्वलोकम्मऽइषाण॥ ॐ हेमाद्रितनयां देवीं वरदां शंकरप्रियाम् । लम्बोदरस्य जननीमुमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः उमायै नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ॥

३.स्कन्द (मंगल के दायें भाग में) – ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमानः उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात्। श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूऽउपस्तुत्यं महिजातन्ते अर्वन् ॥ ॐ रुद्रतेजः समुत्पन्नं देवसेनाग्रगं विभुम् । षण्मुखं कृत्तिकासूनुं स्कन्दमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः स्कन्दाय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ॥

४.विष्णु (बुध के दायें भाग में)- ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्त्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥ ॐ देवदेवं जगन्नाथं भक्तानुग्रहकारकम्। चतुर्भुजं रमानाथं विष्णुमावाहयाम्यहम्॥ ॐ भूर्भुवःस्वः विष्णवे नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ॥

५.ब्रह्मा (बृहस्पति के दायें भाग में)- ॐ ब्रह्म यज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेनऽआवः। सबुध्न्या उपमाऽअस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसश्च विवः॥ ॐ कृष्णाजिनाम्बरधरं पद्मसंस्थं चतुर्मुखम् । वेदाधारं निरालम्बं विधिमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ब्रह्मणे नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ॥

६. इन्द्र (शुक्र के दायें भाग में) – ॐ सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमम्पिब वृत्रहा शूर विद्वान् जहि शत्रूँ रपमृधोनुदस्वाथाभयङ्कृणुहि विश्वतो नमः ॥ ॐ देवराजं गजारुढं शुनासीरं शतक्रतुम् । वज्रहस्तं महाबाहुमिन्द्रमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः इन्द्राय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ॥

७. यम (शनि के दायें भाग में)- ॐ यमाय त्वांगिरस्वते पितृमते स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मः पित्रे ॥ ॐ धर्मराजं महावीर्यं दक्षिणादिक्पतिं प्रभुम् । रक्तेक्षणं महाबाहुं यममावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः यमाय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ॥

८. काल (राहु के दायें भाग में)- ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्याऽउन्नयामि समापोऽअद्भिरग्मतसमोषधी-भिरोषधीः ॥ ॐ अनाकारमन्ताख्यं वर्तमानं दिने-दिने। कलाकाष्ठादिरुपेण कालमावाहयाम्यहम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः कालाय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ॥

९. चित्रगुप्त (केतु के दायें भाग में)- ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय ॥ ॐ धर्मराजसभासंस्थं कृताकृत विवेकिनम् । आवाहये चित्रगुप्तं लेखनीपत्रहस्तकम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः चित्रगुप्ताय नमः, इहागच्छ, इह तिष्ठ ॥

इस प्रकार अधिदेवताओं के आवाहन के पश्चात् अब, उसी नवग्रहवेदी पर क्रमशः प्रत्येक निर्दिष्ट कोष्ठकों में बांयी ओर प्रत्यधिदेवताओं का आवाहन करेंगे। थोड़ा थोड़ा छोड़ते जायेंगे कथित स्थानों पर।

इस सम्बन्ध में शान्तिमयूष में निर्देश है –**अधिदेवा दक्षिणतो वामे प्रत्यधिदेवताः । स्थापनीया प्रयत्नेन व्याहृतीभिः पृथकपृथक**।

3.6 प्रत्यधिदेवता

उपरोक्त में हमने ग्रहों का स्थान भेद के क्रम में अधिदेवताओं का स्थान विशेष और अवाहन आदि को जाना इसी क्रम में प्रत्यधिदेवताओं का भी स्थान आदि जानेंगे जो कि ग्रह याग का प्रमुख भाग है।

प्रत्यधि देवता - अग्निरापः क्षितिर्विष्णुरिन्द्रश्चैन्द्री प्रजापतिः । सर्पो ब्रह्मा च निर्दिष्टा प्रत्यधिदेवा यथाक्रम् ॥ अन्यत्रश्च – अग्निरापो धरा विष्णुः शक्रेन्द्राणी पितामहाः। पन्नगाः कः क्रमाद् वामे ग्रहप्रत्यधिदेवताः ॥ अर्थात सूर्यादि नवग्रहों के वाम भाग में क्रमशः अग्नि, जल, पृथ्वी, विष्णु, इन्द्र इन्द्राणी, प्रजापति, सर्प और ब्रह्मा की स्थापना करे । ये प्रत्यधिदेवता कहे गये हैं ।

3.7 बोधात्मक प्रश्न

1. ग्रह कितने होते हैं ।

क. 9 ख. 7 ग. 5 घ. 3

2. ग्रह शान्ति किस हेतु की जाती है

क. ग्रह पीड़ा व ग्रह दोष निवारण हेतु ख. नामकरण ग. व्रतबन्धन घ. उपरोक्त कोई नहीं

3. ग्रहमण्डप किस दिशा में होता है ।

क. ईशान कोण ख. पश्चिम दिशा ग. उत्तर दिशा घ. अग्निकोण

4. शनि का स्थान है ।

क. पूर्व दिशा ख. उत्तरदिशा ग. पश्चिम दिशा घ. कोई नहीं

3.8 सारांश

प्रस्तुत इकाई में हमने जाना कि ग्रहों का स्थान कौन सा होता है पूजन क्रम में तथा उनका स्थान भेद आदि जाना ग्रहों के स्थान के सन्दर्भ में जैसे - नवग्रह को आम तौर पर एक एकल वर्ग में रखा जाता है जिसमें सूर्य केंद्र में और अन्य देवता सूर्य के आसपास होते हैं; इनमें से किसी भी देवता का मुख एक दूसरे की तरफ नहीं होता। दक्षिण भारत में उनकी छवियां आम तौर पर सभी महत्वपूर्ण शैव मंदिरों में पाई जाती हैं। उन्हें आवश्यक रूप से एक पृथक हिस्से में एक तीन फीट ऊंचे मंच पर रखा जाता है, आमतौर पर गर्भ गृह के उत्तर-पूर्व में इस तरह से रखने में ग्रहों की 2 प्रकार की अवस्थिति होती है, अगम प्रदीष्ठ और वैदिक प्रदिष्ठ अगम प्रदिष्ट में सूर्य केंद्र में, चंद्र सूर्य के पूर्व, बुध उनके दक्षिण, बृहस्पति उनके पश्चिम, शुक्र उनके उत्तर, मंगल उनके दक्षिण-पूर्व, शनि उनके दक्षिण-पश्चिम, राहू उत्तर-पश्चिम में और केतु उत्तर-पूर्व में स्थित होते हैं। सूर्यनार मंदिर, तिरुवीददाईमरुदुर, तिरुवाईयरू और तिरुचिरापल्ली मंदिर इस प्रणाली का अनुसरण करते हैं। वैदिक प्रदिष्ट में, सूर्य केंद्र में ही होता है, लेकिन शुक्र पूर्व में, मंगल दक्षिण में, शनि पश्चिम में,

बृहस्पति उत्तर में, चंद्र दक्षिण-पूर्व में, राहू दक्षिण-पश्चिम में, केतु पूर्व-पश्चिम में और बुध उत्तर-पूर्व में स्थित होता है।अन्य मंदिर अन्य व्यवस्था में नवग्रह को स्थापित करते हैं।

3.9 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1.क

2.क

3.क

4.ग

1.10 सन्दर्भित पाठ्य सामग्री

कर्मठगुरु

कर्मकाण्ड भाष्कर

विकिपीडिया

ग्रह शान्ति संस्कार

नित्यकर्मप्रकाश

कर्मकाण्ड प्रदीप

मन्त्र संहिता

कुण्डमंडपासिद्धि

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सूर्यादि नव ग्रहों के स्थान स्वरूपादि का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
2. अधि- प्रत्यधि देवताओं के स्थान नाम सहित उल्लेख कीजिए।
3. नवग्रह वेदी सहित मन्त्रों का भी उल्लेख कीजिए।
4. नवग्रह पूजन महत्व एवं ग्रह शान्ति विधान लिखिए।

इकाई - 4 नवग्रह हवन विधान

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 अग्नियों के नाम एवं अग्नि जिह्वाओं के नाम का विचार
4.4 अग्निस्थापन की विधि
4.5 कुश कण्डिका का विधान
4.6 नवग्रह हवन
4.6.1 अधिदेवता स्थापन हवन
4.6.2 प्रत्यधिदेवता स्थापन हवन
4.6.3 पंचलोकपाल स्थापन हवन
4.6.4 दश दिक्पाल स्थापन हवन
बोध प्रश्न
4.7 सारांशः
4.8 बोधप्रश्नों के उत्तर
4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना -

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई BAKA(N) – 221 के खण्ड -2 की चतुर्थ इकाई नवग्रह हवन विधान नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। नवग्रह हवन विधान नमक इस इकाई में आप नवग्रह पूजन हवन आदि के संदर्भ में जानकारी प्राप्त करेंगे। भारतीय पद्धति के अनुसार जब किसी भी कार्य को हम करते हैं, उस कार्य को करने से पूर्व भी कुछ विधान होते हैं, उन्ही विधानों के अंतर्गत हवन से पूर्व अग्नि पूजन, अग्नि जिह्वा पूजन, अग्नि स्थापन का समय एवं कुश कंडिका पर भी विचार किया जाता है। इस दृष्टि से प्रस्तुत इकाई को प्रारंभ करने से पूर्व एवं इकाई की विस्तारता ना हो सके इस उद्देश्य से भी सूक्ष्म रूप में इन सभी तथ्यों का उद्धरण प्रस्तुत इकाई में दिया जा रहा है।

भारतीय संस्कृति में नवग्रहों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। 'नवग्रह' शब्द का अर्थ है—नौ ग्रह, जो हमारे जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रभावित करते हैं। ये ग्रह हैं—सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु। वैदिक ज्योतिष में यह माना जाता है कि इन ग्रहों की स्थिति और गति मनुष्य के जीवन में सुख-दुख, सफलता-विफलता, स्वास्थ्य और मानसिक स्थिति आदि पर सीधा प्रभाव डालती है। इसलिए नवग्रहों की पूजा और उनके शांति हेतु हवन (यज्ञ) करना अत्यंत फलदायक और शांति प्रदायक माना गया है। नवग्रह हवन एक वैदिक प्रक्रिया है, जिसमें विशिष्ट विधि और मंत्रों के माध्यम से नवग्रहों का आवाहन करके उन्हें शांत और संतुष्ट किया जाता है। शास्त्रीय दृष्टि से देखा जाय तो हवन का मतलब है आहुति प्रदान करना। अब यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि हवन कैसे करना चाहिये? उत्तर में आता है कि जिस तरह गृह्य सूत्रों में लिखा गया है उस प्रकार से किया गया हवन फलदायी माना गया है। पारस्कर गृह्य सूत्र में लिखा गया है कि एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः अर्थात् जहां कही भी हवन होता है वहां इस विधि का प्रयोग करना चाहिये। वस्तुतः हवन ही एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत हवनीय पदार्थ को मन्त्र पाठ के द्वारा अग्नि में प्रदान किया जाता है जिसके बाद अग्नि देवता उस हवि पदार्थ को जिस देवता के लिये प्रदान किया है वहां तक पहुचाते हैं। जिसका फल उस यजमान को प्राप्त होता है। यदि हवन शास्त्रोक्त विधि से नही होगा तो हवनीय पदार्थ अग्नि में ही जल कर राख हो जायेगा लेकिन उस देवता तक वह आहुति नही पहुच पायेगी। इसी प्रक्रिया को ठीक ढंग से जानने एवं करने की प्रक्रिया का नाम हवन है। नवग्रह हवन एक वैदिक प्रक्रिया है, जिसमें विशिष्ट विधि और मंत्रों के माध्यम से नवग्रहों का आवाहन करके उन्हें शांत और संतुष्ट किया जाता है। यह हवन न केवल व्यक्ति की कुंडली में उपस्थित ग्रह दोषों को शांत करने के लिए किया जाता है, बल्कि यह मानसिक शांति, पारिवारिक सुख, व्यावसायिक उन्नति और आध्यात्मिक विकास के लिए भी सहायक होता है। विशेषतः विवाह में विलंब, रोग, आर्थिक कष्ट या शनि की ढैया-साढ़ेसाती जैसी समस्याओं के समाधान हेतु यह हवन विशेष रूप से प्रभावशाली माना गया है।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप—

- ❖ वैदिक परंपरा के अनुसार नवग्रह हवन विधान को जान सकेंगे।
- ❖ अधिदेवता के हवन विधान से परिचित हो सकेंगे।
- ❖ प्रत्यधिदेवता के हवन विधान को जान सकेंगे।
- ❖ पंचलोकपाल एवं दश दिक्पालों हवन विधान को जान सकेंगे।
- ❖ वैदिक विधि से मंत्रों का उच्चारण, हवनादि को जानने में समर्थ हो सकेंगे।

4.3 अग्नियों के नाम एवं अग्नि जिह्वाओं के नाम का विचार

अग्नि स्थापन में सर्व प्रथम अग्नि के नामों को जानना अति आवश्यक है। इसके ज्ञान से आपको यह पता चल जायेगा कि किस काम के लिये किस नाम की अग्नि का ध्यान, आवाहन या पूजन किया जायेगा। इसके साथ ही साथ अग्नि जिह्वाओं के बारे में पुष्ट ज्ञान की प्राप्ति हो सकेगी।

पावको लौकिके अग्निः प्रथमः संप्रकीर्तितः। अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने विधीयते।
पुंसवने चन्द्र नामा शुभ कर्मणि शोभनः। सीमन्ते मंगलो नाम प्रगल्भो जात कर्मणि।
नाम्नि वै पार्थिवो ह्यग्निः प्राशाने तु शुचिः स्मृतः।
सभ्यो नाम स चौले तु व्रतादेशे समुद्भवः । गोदानेसूर्यनामाग्निर्विवाहे योजको मतः।
आवसथ्ये द्विजो ज्ञेयो वैश्वदेवे तु रुक्मकः। प्रायश्चित्ते विटश्चैव पाकयज्ञेषु पावकः।
देवानां हव्यवाहश्च पितृणां कव्यवाहनः। शान्तिके वरदः प्रोक्तः पौष्टिके बलबर्धनः ।
पूर्णाहुत्यां मृडो नाम क्रोधाग्निश्चाभिचारिके। वश्यार्थे कामदो नाम वनदाहे तु दूषकः ।
कुक्षौ तु जाठरो ज्ञेयः क्रव्यादौ मृतदाहके। वह्निनामा लक्षहोमे कोटिहोमे हुताशनः।
वृषोत्सर्गे ध्वरो नाम शुचये ब्राह्मणः स्मृतः। समुद्रे वाडवो ह्यग्निः क्षये संवर्तकस्तथा।
ब्रह्मा वै गार्हपत्यश्च ईश्वरो दक्षिणस्तथा। विष्णुरावहनीयः स्यात् अग्निहोत्रे त्रयोग्नयः
ज्ञात्वैवमग्निनामानि गृह्यकर्म समाचरेत्।
ग्रहहोमे विशेषः आदित्ये कपिलो नाम पिंगलः सोम उच्यते। धूमकेतुस्तथा भौमे जाठरोऽग्निर्बुधे स्मृतः।
गुरो चैव शिखी नाम शुक्रे भवति हाटकः। शनैश्चरे भवति महातेजा राहुकेत्वोर्हुताशनः।

कर्म विशेष के अनुसार अग्नियों के नाम इस प्रकार है। लौकिक अग्नियों में पावक नाम की अग्नि को प्रथम माना गया है। गर्भाधान संस्कार में मारुत नाम के अग्नि का आवाहन होता है। पुंसवन में पावमान, सीमन्त में मंगल, जातकर्म में प्रबल, अन्नप्राशन में पार्थिव चौल संस्कार में सभ्य, उपनयन समुद्भव, गोदान में सूर्य, विवाह में योजक, वैश्वदेव में रुक्मक, प्रायश्चित्त में विट, पाकयज्ञों में

पावक, देवों को हव्यवाहन, पितरों को कव्यवाहन, शान्तिक कार्यों में वरद, पौष्टिक कार्यों में बलबर्धन, पूर्णाहुति में मृड, अभिचारि कर्मों में क्रोधाग्नि, वश्यार्थ कामद, वनदाह में दूषक, कुक्षि में जठर, मृतदाह कार्य में क्रव्याद, लक्षहोम या कोटि होम में हुताशन, वृषोत्सर्ग में अध्वर, समुद्र वाडव, क्षय में संवर्तक अग्नियों के नाम है। गार्हपत्याग्नि, दक्षिणाग्नि एवं आहवनीयाग्नि ये तीन अग्निहोत्र की अग्नियों को क्रमशः ब्रह्मा, शिव एवं विष्णु के रूप में जाना जाता है। अग्नियों के नाम जानकर के ही गृह्य कर्म का आचरण करना चाहिये। ग्रहों के हवन में भी अग्नियों के नाम क्रमशः लिखे गये हैं। सूर्य हेतु कपिल, चन्द्रमा हेतु पिंगल, भौम हेतु धूमकेतु, बुध हेतु जाठर, गुरु के लिये शिखी, शुक्र के लिये हाटक, शनि के लिये महातेजा तथा राहु एवं केतु के लिये हुताशन अग्नियों के नाम बतलाये गये है।

इस प्रकार अग्नि के नामों के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है।

अग्नि जिह्वाओं के नाम-

याभिर्हव्यं समश्नाति हुतं सम्यक् द्विजोत्तमैः।
काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता चैव सुधूम्रवर्णा।
स्फुलिंगिनी विश्वरुचिस्तथा च चलायमाना इति सप्तजिह्वाः ।
एताश्चोक्ता विशेषेण ज्ञातव्या ब्राह्मणेन तु। आहूय चैव होतव्यो यो यत्र विहितो विधिः।`
अविदित्वा तु यो ह्यग्निं होमयेदविचक्षणः। न हुतं न च संस्कारो न तु यज्ञफलं भवेत्।
अन्यत्र- जिह्वैककरणं प्रोक्तं सप्तानामेकया ऋचा। समुद्रादुर्मिरनया होतव्यं कर्मसिद्धये।

जिह्वा स्थानानि- कुण्डस्य पूर्वदिग्भागे काली जिह्वा प्रकीर्तिता। आग्नेये तु करालाख्या दक्षिणे तु मनोजवा ।

सुलोहिता नैर्ऋते च धूम्रवर्णा तु वारुणे। स्फुलिंगिनी तु वायव्ये सौम्ये विश्वरुचिस्तथा।
काल्यां करालयां वा कुर्याच्छान्तिकं पौष्टिकं तथा। मनोजवायां जिह्वायामभिचारो भिधीयते।

सुलोहितायां जिह्वायां तस्यामुच्चाटनं विदुः। सर्वार्थसिद्धिकां विश्वरुचिं मन्त्रविदो विदुः।
अपरे वसुधारेति जिह्वां पूर्वोदितां जगुः। उपजिह्वेति सा प्रोक्ता लक्ष्मीस्तत्र प्रतिष्ठिता।
कुण्डस्य मध्यमं पार्श्वमग्नेरास्यं प्रकीर्तितम्। तस्मिन् सर्वाणि कार्याणि साधनीयानि नित्यशः।
संग्रहे विशेषः विवाहे वारुणी जिह्वा मध्यमा यज्ञकर्मसु। उत्तरा चोपनयने दक्षिणा पितृकर्मसु।
प्राचीना सर्वकार्येषु ह्याग्नेयी ऐषानी चोग्रकार्येषु बुद्ध्येतद्धोमलक्षणम्।

अग्नि जिह्वाओं के नाम- द्विजोत्तमों के द्वारा प्रदत्त आहुतियों को जिससे देवताओं तक पहुचाया जाता है उसन अग्नि जिह्वाओं के नाम काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता, सुधूम्रवर्णा, स्फुलिंगिनी, विश्वरुचि और चलायमाना ये सात जिह्वायें हैं। इनका आवाहन करके विधि के अनुसार हवन करना चाहिये। बिना जाने जो अग्नि में हवन करता है उसका हवन न तो हुत होता है न ही संस्कृत होता है तथा न ही यज्ञ के फल को प्राप्त करता है। अन्यत्र स्थलों पर एक ही ऋचा से सातों जिह्वाओ कें एकीकरण की विधान है। समुद्रादुर्मि नामक ऋचा से कर्म के सिद्ध्यर्थ अवश्य हवन करना चाहिये। जिह्वा के स्थान के बारे में वर्णन मिलता है कि कुण्ड के पूर्व भाग में काली, आग्नेय में कराली, दक्षिण में मनोजवा, नैर्ऋत्य में सुलोहिता, पश्चिम में धूम्रवर्णा, वायव्य में स्फुलिंगिनी, उत्तर में विश्वरुचि नामक जिह्वायें मन्त्रज्ञ लोग जानते है। काली अथवा कराली नामक जिह्वा में पौष्टिक कर्म करना चाहिये। मनोजवा में अभिचार करना चाहिये। दूसरे आचार्यगण पूर्व में वसुधा नाम की जिह्वा बताते हैं। इसको उपजिह्वा कहा जाता है यहाँ लक्ष्मी विराजमान रहती है। कुण्ड के मध्य पार्श्व में अग्नि का मुख होता है। उसमें व्यक्ति को अपने सभी कार्यों का साधन करना चाहिये। संग्रह नामक ग्रन्थ में पितृ विशेष करके लिखा गया है कि विवाह में वारुणी जिह्वा, यज्ञकर्म में मध्यमा, उपनयन में उत्तरा, कर्मों में दक्षिणा, सभी कार्यों में प्राचीना तथा उग्र कामों में ऐशानी अग्नि जिह्वाओं को जानना चाहिये। इस प्रकार अग्नि के जिह्वाओं के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी।

4.4 अग्निस्थापन की विधि

अग्निमुपसमाधाय इति सूत्रम्।

कर्मसाधनभूतं लौकिकं स्मार्तं श्रौतं वाग्निम् आत्माभिमुखं स्थापयित्वा इति हरिहरः। पात्रान्तरेणपिहितं ताम्रपात्रादिके शुभे। अग्निप्रणयनं कुर्याच्छरावे तादृशेऽपि वा । शुभ्रं पात्रं तु कांस्यं स्यात्तेनाग्निं प्रणयेद्भुतः। तस्याभावे शरावेण नवेनापि दृढेन च। शरावे भिन्नपात्रे वा कपाले चोल्मुकेऽपि वा। नाग्निप्रणयनं कुर्याद् व्याधिहानिभयावहम्। इत्यत्र शरावनिशेधकं वचनं मुख्यपात्र संभवे वेदितव्यम्। कपालं खर्परम्। उल्मुकं ज्वलदग्नेरेकदेषमित्यर्थः। संपुटेनाग्निमानीय स्थाप्याग्नेर्दिशि कुण्डतः। आमक्रव्यभुजौ तस्मात्यक्त्वा कुण्डे विनिक्षिपेत्। अग्निमानीयपात्रे तु प्रक्षिपेदक्षतोदकम्। यद्येवं नैव कुर्वीत् यजमानभयावहम्। आनीतपात्रयोरेव प्लावनं तत्क्षणे भवेत्। नो चेत्कर्तुमनस्ताप स्यात्संतापस्तयोरपि। अग्निनियमः उत्तमो अरणिजन्यो अग्निर्मध्यमः सूर्यकान्तजः। उत्तमः श्रोत्रियागारान्मध्यमः स्वगृहादिजः । सूर्यकान्तादिसंभूतं यद्वा श्रोत्रियगेहजम्। आनीय चाग्निं पात्रेण क्रव्यादांशां परित्यजेत्। सूर्यकान्तादरणितः श्रोत्रियागारतोपिऽवा। पात्रेण पिहिते पात्रे वह्निमेवानयेत्ततः। अस्त्रेणादाय तत्पात्रं वर्मणोद्धाटयेत्तु तम्। अस्त्र मन्त्रेण नैर्ऋत्ये क्रव्यादांशं ततस्त्यजेत्। मूलेन पुरतो धृत्वा संस्कारांश्च ततश्चरेत्। ` त्याज्याग्निः- चाण्डालाग्निरमेध्याग्निः सूतकाग्निश्च कर्हिचित्। पतिताग्निश्चिताग्निश्च न शिष्टग्रहणोचितः ।

अर्थत् इस विधि से अग्नि स्थापन करना चाहिये- अग्निमुपसमाधाय इस सूत्र से अग्नि के स्थापन के क्रम का निर्देश होता है। कर्म के साधन भूत लौकिक, स्मार्त या श्रौत अग्नियों को आत्माभिमुख यानी अपनी ओर करके स्थापित करना चाहिये। तामादि पात्रों में पात्र से ढँककर अग्नि की स्थापना करनी चाहिये। अथवा शराव यानी मिट्टी के पात्र या शुभ्र कांस्य पात्र से या नवीन दृढ़े पात्र से अग्नि का प्रणयन किया जा सकता है। संस्कारभास्कर में लिखा गया है कि शराव पात्र में, कपाल पात्र में या उल्मुक पात्र में रखी हुयी अग्नि से अग्नि प्रणयन नही करना चाहिये क्योकि उससे व्याधि एवं हानि का भय रहता है। यहाँ शराव निषेधक वचन मिलता है। कपाल का मतलब खप्पर, उल्मुक पात्र यानी पूर्व में प्रज्वलित अग्नि वाला पात्र। संपुटपात्र में अग्नि लाकर अग्नि कोण में स्थापित करके आमक्रव्यभुक् अग्नि का त्याग करके अग्नि प्रणयन करना चाहिये। कुशकण्डिका भाष्य में लिखा गया है कि जिस पात्र में अग्नि लाया जाय उस पात्र में प्रणयन के बाद अक्षत एवं जल डालना चाहिये नही तो यजमान के लिये वह भयावह होता है। जिस पात्र में अग्नि को लाया जाय उस पात्र का प्लावन तुरत करना चाहिये। नही तो कर्ता के मन में एवं कराने वाले दोनों के मन में संताप की प्राप्ति होती है। अग्नि नियम की व्याख्या करते हुये बतलाया गया है कि अरणी जन्य अग्नि उत्तम, सूर्यकान्त जन्य मध्यम एवं श्रोत्रियागार की अग्नि उत्तम तथा अपने घर की अग्नि मध्यम होती है। सूर्यकान्त से या श्रोत्रिय के घर से लायी गयी अग्नि से क्रव्यादांश निकालकर अग्नि का प्रयोग करना चाहिये। मन्त्र महोदधि में कहा गया है कि सूर्यकान्त से या अरणी से निःसृत अग्नि को ढँक कर यत्न पूर्वक लाना चाहिये। उसके बाद मूल मन्त्र से उसका संस्कार करते हुये स्थापित करना चाहिये। त्याज्य अग्नि का वर्णन करते हुये बतलाया गया है कि चाण्डाल की, अमेध्य, सूतकाग्नि, चिताग्नि और पतिताग्नि को शिष्ट ग्रहण नही माना गया है। इस प्रकार अग्नि के स्थापन के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना । आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी।

4.5 कुश कण्डिका का विधान

इसमें कुश कण्डिका की विधि का निरूपण किया जा रहा है। इसके ज्ञान से आप आसानी से कुश

कण्डिका प्रयोग का सम्पादन कर सकते है।

दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य इति सूत्रम्। तस्याग्नेर्दक्षिणस्यां दिशि ब्रह्मणे आसनं वारणादियज्ञीयदारुनिर्मितं पीठमास्तीर्य कुशैः स्तीर्त्वा तत्र वरणाभरणाभ्यां पूर्वसम्पादितं कर्मसु तत्वज्ञं ब्राह्मणं तदभावे पंचाशतकुशनिर्मितमुपवेश्य इति हरिहर भाष्यम्। तथा चोक्तं कारिकायाम् अग्नेर्दक्षिणतो ब्रह्मासनं कृत्वा कुशास्तृतम्। ब्रह्माणं वरयेदग्निमुत्तरेणगुणान्वितम्। आसनं ब्रह्मणः कार्यं वारणं वा विकंकतम्। चतुरस्रं हस्तमात्रं मूलदण्ड समन्वितम्। द्विषडंगुलसंख्यातो मूलदण्डो विकंकतात्। करिष्ये अमुक शर्माऽ हं ब्रह्मा त्वं तत्र मे भव। ब्रह्मा भवामि चेत्युक्त्वा गच्छेदग्नेस्तु पूर्वतः। अपरेणाथवा

कुर्यादासनस्येक्षणं ततः। एकदेशं तृणस्यापि स्वासने चोपवेश्येत्। उत्तरे सर्व पात्राणि प्रणीतादीन्यनुक्रमात्। पूर्वेपौर्व द्विजाः सर्वे ब्रह्माकिमुत दक्षिणे? दक्षिणे दानवाः प्रोक्ताः पिशाचो रगराक्षसाः। तेषां संरक्षणार्थाय ब्रह्मा तिष्ठति दक्षिणे। ब्रह्मलक्षणं- वेदैकनिष्ठं धर्मज्ञं कुलीनं श्रोत्रियं शुचिम् । स्वशाखाठ्यमनालस्यं विप्रं कर्तारमीप्सितम्। ब्रह्मवरणार्थमलंकरणमाह वस्त्रयुग्मं तथाप्पूरं केयूरं कर्णभूषणम्। अंगुलीभूषणं चैव मणिबन्धस्यभूषणम्। कण्ठाभरणयुक्तानि प्रारम्भे सर्वकर्मणि। विप्राभावे दर्भवटुमाह कुशग्रन्थिमयं विप्रं ब्रह्माणमुपवेशयेत्। तल्लक्षणं पंचाशता भवेद् ब्रह्मा तदर्द्धेन तु विष्टरः । उर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः। दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः।

प्रणीय इति सूत्रम् अप इति शेषः। तद्यथा अग्नेरुत्तरतः प्रागग्रं कुशैरासनद्वयं कल्पयित्वा वारणं द्वादशांगुलदीर्घं चतुरंगुलविस्तारं चतुरंगुलखातं चमसं सव्यहस्ते कृत्वा दक्षिणहस्तोद्धृतपात्रस्थोदकेन पूरयित्वा पश्चिमासने निधायालभ्य पूर्वासने स्थापयित्वा इति हरिहरभाष्यम्। कर्मप्रदीपे दशांगुलदीर्घेण चतुरस्रः सगर्तकः प्रस्थमात्रोदकग्राही प्रणीता चमसो भवेत्।

कुशकण्डिका विधि- अग्नि के दक्षिण दिशा में ब्रह्मा के लिये आसन यज्ञीय समिधाओं से निर्मित कर बिछावें उस पर तत्वज्ञ ब्रह्मा बैठें। उसके अभाव में पचास कुशाओं से निर्मित करके ब्रह्मा को बिठाया जाय ऐसा हरिहर जी ने कहा है। कारिका में कहा गया है कि अग्नि के दक्षिण में ब्रह्मा का आसन रखकर उस पर कुश बिछावें । ब्रह्मा का आसन वारण या विकंकत यानी कण्टाई की लकड़ी का होना चाहिये। यह एक हाथ का चतुरस्र हो। छब्बीस अंगुल विकंकत का भी बनाया जा सकता है। ब्रह्मा होऊँ ऐसा कहकर ब्रह्मा अपने आसन पर बैठे। दूसरे आचार्य गण कहते हैं या तो आसन को देखना चाहिये। अब यहाँ प्रश्न उठता है कि सभी पात्र उत्तर में प्रणीता के क्रम से पौर्वापर्य रखे जाते हैं। लेकिन ब्रह्मा का दक्षिण में क्यों रखा जाता है ? इस प्रश्न के उत्तर में यह कहा गया है कि दक्षिण में दानव, पिशाच एवं राक्षस इत्यादि रहते हैं इसलिये ब्रह्मा को दक्षिण में बिठाया जाता है। ब्रह्मा का लक्षण बतलाते हुये बतलाया गया है वेद में एकनिष्ठ धर्मज्ञ कुलीन श्रोत्रिय पवित्र एवं अपने शाखाध्ययन में आलस्य रहित होकर रत रहने वाला विप्र हो। ब्रह्मवरणार्थ अलंकरण का वर्णन करते हुये कहा गया दो वस्त्र, केयूर, कर्णभूषण, अंगुलिभूषण, मणिबन्ध भूषण एवं कण्ठाभरण कहा गया है। विप्र के अभाव में दर्भ वटु बनाने का विधान मिलता है। इसे कुशे को ग्रन्थियुक्त करके बनाया जाता है। इसका लक्षण बताते हुये कहा गया पचास कुशे का ब्रह्मा एवं उसके आधे का विष्टर बनाता है। उर्ध्वकेश ब्रह्मा एवं लम्बकेश विष्टर होता है। दक्षिणावर्त ब्रह्मा एवं वामावर्त विष्टर होता है। अगला सूत्र प्रणीय आता है इसमें अप शब्द शेष है अर्थात् जल। अग्नि के उत्तर प्रागग्र दो कुशों को आसन के लिये रखकर बारह अंगुल लम्बा, चार अंगुल चौड़ा एवं चार अंगुल गहरा चमस को बायें हाथ में करके दाहिने हाथ में स्थित जल पात्र से पूरित कर पश्चिम के आसन पर रखकर पूर्व के आसन पर रखना चाहिये। कर्म प्रदीप में प्रणीता को प्रस्थ मात्र जल ग्रहण करने की छमता वाला बतलाया गया है।

परिस्तीर्य इति सूत्रम्। अग्निं बर्हि मुष्टिमादाय ईशानादिप्रागग्रेर्बाहमरुदक्संस्थमग्नेः परिस्तरणम् इति हरिहरभाष्यम्। परिस्तरणप्रयोजनम् वेदिका दर्भहीना तु विनग्ना प्रोच्यते बुधैः। परिधानं ततः र्याद्दर्भेणैव विशेषतः । स्थाननियमः एकमेखलके कुण्डे मेखलाधः परिस्तरेत्। द्विमेखले द्वितीयायां तृतीयायां त्रिमेखले। दर्भसंख्या अग्निं षोडशभिर्दर्भैः परिस्तीर्य दिशं प्रति। प्रागादीशानपर्यन्तमुदक्संस्था परिस्तृतिः। एकैकस्यां दिशि चत्वारो चत्वारि एवं षोडश । तच्च प्रागुदगग्रैः दक्षिणतः प्रागग्रैः, प्रत्यगुदगग्रैः, उत्तरतः प्रागग्रैरिति संस्कार भास्करे। बर्हिर्लक्षणम् कात्यायनेनोक्तम् कुशा दीर्घाश्च बर्हिषः। उपमूललूनबर्हिषां मुष्टिबर्हिः इति

परिस्तीर्य इस सूत्र की व्याख्या में अग्निकुण्ड के चारों तरफ मुष्टि में कुशों को लेकर प्रागग्र करके बिछाना चाहिये। परिस्तरण का प्रयोजन बतलाते हुये कहा गया है कि दर्भहीन वेदिका को नग्न वेदिका माना जाता है। दर्भ वेदिका का परिधान विशेष माना जाता है। एक मेखला वाले कुण्ड में मेखला के अधो भाग में परिस्तरण करना चाहिये। दो मेखला वाले कुण्ड में दूसरी के तथा त्रिमेखला वाले कुण्ड में तीसरी मेखला के नीचे कुशों का आस्तरण करना चाहिये। सोलह कुशाओं का परिस्तरण यानी एक-एक दिशा में चार-चार कुशाओं को बिछाना चाहिये। पूर्व दिशा में उदगग्र, दक्षिण दिशा में प्रागग्र, पश्चिम दिशा में उदगग्र एवं उत्तर दिशा में प्रागग्र ऐसा संस्कार भास्कर में लिखा है। बर्हि का लक्षण बतलाते हुये कहा गया दीर्घ कुशा बर्हि है। जिसका मूल छिन्न हो उस कुशा को भी बर्हि की उपमा दी गयी है। मुष्टि में जितना कुशा आ जाता है उसे बर्हि कहा जाता है।

अर्थवदासाद्य इति सूत्रम्। यावद्भिः पदार्थैरर्थः प्रयोजनं तावतः पदार्थान् द्वन्द्वं प्राक्संस्थान् उदगग्रानग्नेरुत्तरतः पश्चाद्वा आसाद्य इति हरिहरः । अग्नेरुत्तरतस्तानि आसाद्योदग्विलानि च। प्रागग्राणि यदा पश्चात्सादये प्राग्विलानि च। आसादनं तु पात्राणां प्रादेशान्तरके बुधः । अंगुलद्वयमानेन द्वन्द्वं द्वन्द्वान्तरे न्यसेत्। उत्तरतश्चेदुदकसंस्थम् असंभवे प्राक्संस्थं पश्चिमसंस्थमुदक् संस्थमपीतिदेवयाज्ञिकभाष्ये। पवित्रलक्षणम् अनन्तगर्भिणं साग्रं कौशं द्विदलमेव च। प्रादेशमात्रं विज्ञेयं पवित्रं यत्र कुत्रचित् । पवित्रप्रयोजनम् इन्द्रवज्रं हरेश्चक्रं त्रिशूलं शंकरस्य च। दर्भरूपेण ते त्रीणि पवित्रच्छेदनानि च। पुरा वृत्रवधं प्राप्ते रक्तपूर्णा वसुन्धरा। द्वो दर्भौ देवता त्रीणि पवित्रच्छेदनानि च। प्रोक्षणी विचार: वारणं पाणिपात्रं च द्वादशांगुलविस्तृतम्।

पद्मपत्राकृतिर्वापिप्रोक्षणीपात्रमीरितम्।

आज्यस्थाली कांस्यमयी यद्वा ताम्रमयी तथा। प्रादेशमात्रदीर्घा सा ग्रहीतव्या अव्रणा शुभा।
आज्यस्थाली च कर्त्तव्या तैजसी द्रव्य संभवा। महीमयी वा कर्तव्या सर्वास्वाज्याहुतीषु च।
आज्यस्थाली प्रमाणं तु यथाकामं तु कारयेत्। सुदृढ़ामव्रणां भद्रामाज्यस्थालीं प्रचक्षते।

अर्थवदासाद्य इस सूत्र की व्याख्या करते हुये आचार्य हरिहर कहते हैं जितने पदार्थों की तत्कार्य हेतु आवश्यकता है उतने पदार्थों को अग्नि के उत्तर में प्राक्संस्थ, उदक्संस्थ या पश्चिमसंस्थ रखें। दो-दो अंगुलों के अन्तराल पर प्रत्येक पदार्थों को रखा जायेगा। विद्वान् लोग पात्रों का आसादन प्रादेश मात्र में करने का निर्देश करते है। पवित्र का लक्षण करते हुये कहा गया है कि अनन्तगर्भी कुशाओं के दो दलों के अग्र भाग से प्रादेश मात्र परिमाण से सर्वत्र पवित्र बनाना चाहिये। पवित्र का प्रयोजन इस प्रकार है। इन्द्र के वज्र, हरि के चक्र एवं शंकर के त्रिशूल के रूप में तीन दर्भ होते हैं जिससे पवित्र छेदन किया जाता है। वृत्र वध के समय यह पृथ्वी रक्त पूर्णा हो गयी थी जिसे पवित्र करने के लिये दर्भों की उत्पति हुई। प्रोक्षणी का विचार करते हुये बतलाया गया है कि प्रोक्षणी वारण का बारह अंगुल विस्तृत् होना चाहिये। पद्मपत्र के आकृति वाली भी हो सकती है। आज्यस्थाली कांस्यमयी अथवा ताम्रमयी प्रादेशमात्र दीर्घा एवं छिद्र रहिता होनी चाहिये। किसी धातु की आज्यस्थाली बनाई जा सकती है या मिट्टी की भी सभी प्रकार की आहुतियों में आज्यस्थाली हो सकती है। कामना के अनुसार आज्यस्थाली को बतलाया गया है जो सुदृढ़, अव्रण व देखने में सुन्दर हो।

निरुप्याज्यमिति सूत्रम्। आसादितमाज्यं आज्यस्थाल्यां पश्चादग्नेर्निहितायां प्रक्षिप्य चरुश्चेचरुस्थाल्यां प्रणीतोदकमासिच्य आसादितांस्तण्डुलान्प्रक्षिप्य अधिश्रयणं कुर्यात्। तत्राज्यं ब्रह्माधिश्रयति तदुत्तरतः स्वयं चरुमेवं युगपदग्नावारोप्य ज्वलदुल्मुकं प्रदक्षिणमाज्यचर्वोः समन्ताद्भ्रामयेत् अर्द्धश्रिते चरौ। द्वयोः पर्यग्निकरणं कृत्वा दक्षिणहस्तेन स्रुवमादाय प्रांचमधोमुखमग्नौ तापयित्वा सव्ये पाणौ कृत्वा दक्षिणेन संमार्गाग्रैर्मूलतो अग्रपर्यन्तं मूलैरग्रमारभ्य अधस्तान्मूलपर्यन्तं सम्मार्जयेत्। पुनः प्रतप्य दक्षिणतो निदध्यात्। आज्यमुत्थाप्य चरोः पूर्वेण नीत्वा अग्नेरुत्तरतः स्थापयित्वा चरुमुत्थाप्य आज्यस्य पश्चिमतो नीत्वा आज्यस्योत्तरतः स्थापयित्वा आज्यमग्नेः पश्चादानीय चरुं चानीय आज्यस्योत्तरतो निधाय उत्पूय अवेक्ष्य अपद्रव्यस्य निरसनं कृत्वा उपयमन कुशानादाय समिधोभ्याधाय तिष्ठन्समिधः अग्नौ प्रक्षिपेत्। लाजहोमे समिद्धोमे उर्ध्वहोमे तथैव च। तिष्ठतैव हि कर्तव्याः स्वाहाकारा अपि ध्रुवम्। ततो प्रोक्षण्युदकेन सर्वेण सपवित्रेण दक्षिणचुलुकेन गृहीतेन अग्निमीशानादि उदगपवर्गं परिषिच्य जुहुयात्। आघारादीन् संस्रव धारणार्थं पात्रं प्रणीताग्न्ययोर्मध्ये निदध्यात्।

आज्यस्थाली में आज्य एवं चरुस्थाली में आसादित चरुपदार्थों को डालकर अधिश्रयण करना चाहिये। आज्य के उत्तर में चरु को अग्नि पर चढ़ाकर जलते हुये उल्मुक से प्रदक्षिण क्रम से आज्य एवं चरु का पर्यग्निकरण करके इतरथावृत्ति करनी चाहिये। तदनन्तर दाहिने हाथ से स्रुव लेकर अधो मुख अग्नि में तपा कर बायें हाथ में करके दाहिने हाथ से सम्मार्जन कुशा के अग्र भाग से स्रुव के अग्र भाग का मध्य भाग से स्रुव के मध्य भाग का एवं अन्त्य भाग का अन्त्य भाग से मार्जन करना चाहिये। इसके बाद पुनः सुव का प्रतपन कर दक्षिण स्थान में रखना चाहिये। आज्य को उठाकर चरु के पूर्व से लाकर अग्नि के उत्तर में स्थापित कर चरु लाकर आज्य के उत्तर में रखें। पवित्रक से उत्पवन करके आज्य का सावधानी

पूर्वक निरीक्षण करना चाहिये। यदि उस आज्य में अपद्रव्य हो तो उसे निकाल देना चाहिये। उपयमन कुषाओं को बाये हाथ में लेकर तीन समिधाओं को अग्नि में प्रक्षिप्त करना चाहिये। कारिका में मिलता है कि लाज होम में, समिद्ध होम एवं उर्ध्व होम में खड़े होकर हवन करना चाहिये। तदनन्तर सपवित्रक प्रोक्षणी के जल को चुलू में लेकर अग्नि कोण से प्रदक्षिण क्रम से ईशानादि तक परिषिंचन करना चाहिये। आघारादीन् संस्रव के धारणार्थ पात्र को प्रणीता एवं अग्नि के बीच में रखते है।

पारस्कर गृह्य सूत्र में आता है कि-

अग्निमुपसमाधाय दक्षिणतो ब्रह्मासनमास्तीर्य प्रणीय परिस्तीर्यार्थवदासाद्य पवित्रे कृत्वा प्रोक्षणीः संस्कृत्यार्थवत् प्रोक्ष्य निरूप्याज्यमधिश्रित्य पर्यग्निं कुर्यात्। स्रुवं प्रतप्य समृज्याभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य निदध्यादाज्यमुद्वास्योत्पूयावेक्ष्य प्रोक्षणीश्च पूर्ववदुपयमनकुशानादाय समिधो- भ्यादाय पर्युक्ष्य जुहुयादेष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः ।

लिखा गया है कि प्रणीता के जल को प्रोक्षणी पात्र में तीन बार डालें। फिर प्रणीता के जल से प्रोक्षणी का मार्जन करें। तदनन्तर प्रोक्षणी पात्र को प्रणीता पात्र वाले आसन पर रखकर प्रणीता का जल सभी आसादित वस्तुओं पर छिड़कें। तदनन्तर यज्ञाग्नि और प्रणीता के बीच में प्रोक्षणी पात्र को रख दें। पुनः घी को देखें, यज्ञाग्नि के पीछे रखे घी को आज्य स्थाली में डालकर आग पर घी को पिघलाने के लिये रखे। उसके बाद पर्यग्नि करें। पर्यग्नि का मतलब जलती हुयी समिधा की लकड़ी को चरुपात्र आच्यस्थाली के चारो ओर घुमाकर पिघला दें। अधोमुख सुवा को होमाग्नि में तपाकर मूल भाग से अन्त तक सम्मार्जन कुशा से उसे छाड़कर, प्रणीता के जल से उसे अभिषिंचित कर पहले की ही तरह उसे आग पर फिर से तपाकर वेदी के दाहिनी ओर रख दें। घृतपात्र को आग पर से उतार कर पवित्र कर घी में कोई अपद्रव्य हो तो उसे निकाल दें। फिर उपयमन नामक कुशों को दायें हाथ से उठाकर बायें हाथ में लेकर आग में समिधायें डालकर जल छिड़ककर हवन करें। जहां कहीं भी हवन होगा यही विधि अपनायी जायेगी।

इस प्रकार सामान्य रूप से कुशकण्डिका के विधान के विषय में आपने इस प्रकरण में विस्तार से जाना। आशा है इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रौढ़ हो जायेगा। इसमें प्रश्नों या संबंधित शब्दों को दिया गया है जिसके आगे दिये गये रिक्त स्थान को दिये गये विकल्पों से प्रपूरित करना है।

4.6 नवग्रह हवन

ग्रहों का होम ग्रह समिधा को घी में भिगोकर करें -

(अर्कम्)ॐ आकृष्णेन रजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।। ॐ स्वाहा।।

(पलाशम्) ॐइमन्देवाऽअसपत्नसुवद्ध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इममुष्य पुत्रममुष्यै व्विशऽएष वोऽमीराजा सोमोस्माकं ब्राह्मणाना राजा । ।। ॐ स्वाहा।।

(खदिरम्) ॐ अग्निम्मूर्द्धा दिवः ककुत्पत्तिः पृथिव्याऽअयम् । अपारेता सि जिन्त्वति। ।। ॐ स्वाहा।।

(अपामार्गम्) ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स सृजेथामयं च अस्मिन्त्सधस्थेअध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत । ।। ॐ स्वाहा।।

(अश्वत्थम्) ॐ बृहस्पतेअतियदर्यो अर्हाद्युमद् विभात्ति वक्क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवसऽऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणन्धेहि चित्रम् । ।। स्वाहा।।

(उदुम्बरम्) ॐ अन्नात् परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्व्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं व्विपान शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोमृतम्मधु । ।। ॐ स्वाहा।।

(शमीम्) ॐ शं नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये शंय्योरभिस्रवन्तु नः। ।। ॐ स्वाहा।।

(दूर्वाम्) ॐ कया नश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया व्वृता।। ।।ॐस्वाहा।।

(दूर्भम्) ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथाः।। ।। ॐ स्वाहा।।

4.6.1 अधिदेवता स्थापन हवन

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।। ।। ॐ स्वाहा।।

ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणिरूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुं म इषाण सर्वलोकं मइषाण । ।। ॐ स्वाहा।।

ॐ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् ।श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन् ।। ।। ॐ स्वाहा।।

ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोः श्नप्त्रे स्थो विष्णोः स्यूरसिव्विष्णोर्ध्रुवोऽसि । व्वैष्णवमसि व्विष्णवे त्वा ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ आ ब्ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूरइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिःपुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतांनिकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तांयोगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान् ।जहि शत्रूश्रप मृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः। ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा ।स्वाहाघर्मायस्वाहा धर्मः पित्रे॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्या ऽउन्नयामि ।समापो अद्भिरम्मत समोषधीभिरोषधीः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ चित्रावसो स्वस्ति ते पारमशीय । ॥ ॐ स्वाहा॥

4.6.2 प्रत्यधिदेवता स्थापन हवन

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ २ आ सादयादिह ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म सप्रथाः ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पासुरे स्वाहा ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ इन्द्र आसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः ।देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम् ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ अदित्यै रास्नाऽसीन्द्राण्या उष्णीषः । पूषाऽसि धर्माय दीष्व ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परि ता बभूव ।यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयस्याम पतयो रयीणाम् ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनुाये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेब्भ्यो नमः॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

4.6.3 पंचलोकपाल स्थापन हवन

ॐ गणानां त्वा गणपति - हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति हवामहेनिधीनां त्वा निधिपति हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर - सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् ।वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ घृतं घृतपावानः पिबत वसां वसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविरसिस्वाहा । दिशः प्रदिश आदिशो विदिश उद्दिशो दिग्भ्यः स्वाहा ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ या वां कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षतम्। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वैष ते योनिर्माध्वीभ्यां त्वा ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः ।यत् त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे । ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ नहि स्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुर एतारमग्नेः ।एमेनमवृधन्नमृता अमर्त्य वैश्वानरं क्षैत्रजित्याय देवाः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

4.6.4 दश दिक्पाल स्थापन होम

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र हवे हवे सुहव शूरमिन्द्रम् ।ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँर आ सादयादिह ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा । स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मः पित्रे ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य ।अन्यमस्मदिच्छ सा त इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः ।अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश स मा न आयुः प्रमोषीः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वर सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम्।वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ व्वय सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रत:। प्रजावन्त सचेमहि ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः ॥ ॥ ॐ स्वाहा॥

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्मसप्रथाः । ॥ ॐ स्वाहा॥

बोध प्रश्न

1. पलाश से किस ग्रह का हवन होता है।

(क) सूर्य (ख) चन्द्र (ग) मंगल (घ) बुध

2. शमी से किस ग्रह का हवन होता है।

(क) शनि (ख) चन्द्र (ग) मंगल (घ) बुध

3. छाया ग्रह किसे कहते हैं।

(क) बुध (ख) मंगल (ग) सूर्य (घ) राहू

4. ग्रह कितने हैं।

(क)8 (ख)10 (ग)6 (घ)9

4.7 सारांशः

इस इकाई में नवग्रह हवन संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आपने किया । नवग्रह हवन विधि एक पारंपरिक वैदिक अनुष्ठान है, जिसका उद्देश्य नवग्रहों की शांति एवं अनुकूलता प्राप्त करना होता है। नवग्रह—सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु—मनुष्य के जीवन पर गहन प्रभाव डालते हैं। वैदिक मान्यताओं के अनुसार, यदि ये ग्रह प्रतिकूल स्थिति में हों, तो व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की समस्याओं जैसे रोग, बाधा, आर्थिक संकट, विवाह में विलंब या मानसिक तनाव का सामना करना पड़ सकता है। इन समस्याओं के निवारण हेतु नवग्रह हवन एक प्रभावशाली आध्यात्मिक उपाय माना गया है।

इस इकाई में नवग्रह हवन की सम्पूर्ण विधि को क्रमबद्ध और सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। हवन का मतलब है आहुति प्रदान करना। अब यहाँ प्रश्न उपस्थित होता है कि हवन कैसे करना चाहिये? उत्तर में आता है कि जिस तरह गृह्य सूत्रों में लिखा गया है उस प्रकार से किया गया हवन फलदायी माना गया है। पारस्कर गृह्य सूत्र में लिखा गया है कि एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः अर्थात् जहां कही भी हवन होता है वहां इस विधि का प्रयोग करना चाहिये। वस्तुतः हवन ही एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत हवनीय पदार्थ को मन्त्र पाठ के द्वारा अग्नि में प्रदान किया जाता है जिसके बाद अग्नि देवता उस हवि पदार्थ को जिस देवता के लिये प्रदान किया है वहां तक पहुचाते हैं। जिसका फल उस यजमान को प्राप्त होता है। यदि हवन शास्त्रोक्त विधि से नही होगा तो हवनीय पदार्थ अग्नि में ही जल कर राख हो जायेगा लेकिन उस देवता तक वह आहुति नही पहुच पायेगी। इसी प्रक्रिया को ठीक ढंग से जानने एवं करने की प्रक्रिया का नाम हवन है।

4.8 बोधप्रश्नों के उत्तर

1. (क)
2. (क)
3. (घ)
4. (घ)

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

ग्रहशान्ति प्रद्धति
नित्यकर्म पूजाप्रकाश
मन्त्रमहोदधि
यज्ञ मीमांसा
अनुष्ठान प्रकाश
प्रयोग पारिजात

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नवग्रह हवन विधान का वर्णन करें।
2. नवग्रह हवन केमहत्व को प्रतिपादन करें।
3. कुश कुण्डिका की विधि लिखिये।
4. अग्निओं के नामों को बतते हुए अग्नि स्थापन विधि को लिखें।

खण्ड -3

अन्य विशेष

इकाई -1 नवग्रह हवन हेतु समिधा

इकाई संरचना

1.1प्रस्तावना

1.2उदेश्य

1.3विषय परिचय

1.3.1 नव ग्रह समिधा

1.4 ग्रह शान्ति में प्रयुक्त हवन सामग्री

1.4.1 ग्रहों का तथा हवन के लिए प्रमुख सामग्री

1.4.2 नवग्रह समिधा का महत्व

1.5 नवग्रह हवन के विविध महत्त्व

1.5.1 आहुतियों में प्रयुक्त विशेष द्रव्य

1.5.2 सुगंध देने वाली समिधाएँ व वनस्पतियां।

1.5.3 औषधीय गुण युक्त समिधाएँ व वनस्पतियां

1.5.4 ऋतुओं के अनुसार प्रयुक्त हवन सामग्री :-

1.6 यज्ञ हवन में धाताव्य विन्दु प्रायश्चित

1.7 बोधात्मक प्रश्न

1.8 सारांश

1.9 पारिभाषिक शव्द

1.10 बोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1.11 सन्दर्भित पाठ्य सामग्री

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों इससे पूर्व की इकाइयों में आपने नव – ग्रहों के स्थान भेद आदि के विषय में पडा अब इसी क्रम में हम **"नवग्रह हवन हेतु समिधा"** के विषय में विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे।

ग्रह शांति पद्वति में व नव ग्रहों का पूजन करते समय, उनके लिए विशेष प्रकार की सामग्री हवनीय द्रव्यों के साथ विशेष समिधा (लकड़ी) का भी प्रयोग होता है , जो कि ग्रहों को अति प्रिय है , वो समिधा प्रत्येक ग्रह की अपनी अलग- अलग है, जैसे –कि नाम से ही अर्थ समझे समिधा- समिधा का अर्थ है वह लकड़ी जिसे जलाकर यज्ञ किया जाए अथवा जिसे यज्ञ में डाला जाए उसे समिधा कहते हैं। वह कैसी होनी चाहिए तथा कौन सी होनी चाहिए इस प्रसंग को वेद से लेकर गृह्य सूत्रों व शुल्व सूत्रों में विस्तार पूर्वक वर्णन किया ज्ञा है। इन सभी विषयों का हम इस इकाई के अन्तर्गत विस्तार पूर्वक अध्ययन करेंगे , आशा है कि इस के अध्ययन के उपरांत आप सभी यज्ञ – याग विधि उपकरण सामग्री को सम्यक रूप से जानने में समर्थ हो सकेंगे।

1.2 उदेश्य

- ❖ इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यज्ञ एवं हवन विधि को ठीक से समझ सकेंगे।
- ❖ नव ग्रहों का पूजन में कौन- कौन सी समिधा (लकड़ी) का प्रयोग किया जाता है , अर्थात ग्रहों की अपनी प्रिय समिधा कौन-कौन होती है इसका सम्यक रूप से बोध हो सकेगा।
- ❖ यज्ञ में हवनीय द्रव्य एवं औषधि विशेष कौन कौन सी हैं बोध कर पायेंगे।
- ❖ साथ ही याग की परम्परा व महत्व को समझने में समर्थ हो सकेंगे।
- ❖ इसके अध्ययन के उपरान्त ग्रह – शान्ति , हवन विशेष द्रव्यों (सामग्रीयों) का वोध सम्यक रूप से हो सकेगा।

1.3 विषय परिचय

प्रिय विद्यार्थियों भारतीय वैदिक परम्परा में वेद के तीन विभाग हैं। 1- ज्ञान काण्ड 2- उपासना काण्ड 3- कर्मकाण्ड। जैसे की आप जानते हैं वेद का लक्ष्य है ईष्ट प्राप्ति और अनिष्ट परिहार, अनिष्ट का परिहार विशेषत: वेद के कर्मकाण्ड पद्वति से होता है, जिसके अन्तर्गत शान्ति और संस्कार का विधान यज्ञ-याग से किया जाता है। याज्ञ के लिए हवनकुण्ड की आवश्यकता पड़ती है। यज्ञ का अर्थ होता है जब हम यज्ञ में अग्निदेव के माध्यम से ईश्वर की उपासना करते हैं तो इस प्रक्रिया को यज्ञ कहते

हैं। यज्ञ में प्रयुक्त होने वाले - हवि, हव्य अथवा हविष्य वह पदार्थ हैं जिनकी अग्नि में आहुति दी जाती है (जो अग्नि में डाले जाते हैं).हवन कुंड में अग्नि प्रज्वलित करने के पश्चात इस पवित्र अग्नि में फल, शहद, घी, काष्ठ इत्यादि पदार्थों की आहुति प्रमुख होती है। इसका एक पक्ष आज के परिप्रेक्ष्य में वायु प्रदूषण को कम करने के लिए भी लाभ प्रद रहता है। साथ ही भारत आध्यात्मता का समृद्ध एवं सम्पन्न देश रहा है , प्राचीन काल में रोग शोक अनेक प्रकार की महामारी , अनिष्ट, उपद्रवों का शमन भी यज्ञों के माध्यम से किया जाता था , साथ ही कहीं अगर सूखा या अकाल पद जाता था तो वृष्टि (वर्षा) हेतु भी यज्ञ भी सम्पादन होता था । इसी क्रम में ग्रहों द्वारा जनित अनेक प्रकार के अनिष्ट शमनार्थ हेतु नवग्रह होम का विधान है । नवग्रह हवन के लिए, प्रत्येक ग्रह की शांति के लिए विशिष्ट समिधा का प्रयोग किया जाता है। सूर्य की समिधा मदार, चंद्रमा की पलाश, मंगल की खैर, बुध की चिड़चिड़ा, बृहस्पति की पीपल, शुक्र की गूलर, शनि की शमी, राहु की दूर्वा, और केतु की कुशा होती है।

1.3.1 नवग्रह समिधा

जैसे कि आप जानते हैं कि इस संसार में प्रत्येक प्राणी कि स्वरुचीकर चीजें होती है, ठीक तदनुरूप वैसी ही ग्रहों की प्रसन्नता के लिए हवनीय पदार्थ (हब्य सामग्री) का भी प्रयोग महत्व पूर्ण है। जिसके अन्तर्गत समिधा , एवं सामग्री विशेष होती है साथ ही मन्त्रों का भी प्रयोग विशेष होता है।

1.सूर्य: मदार की समिधा
2. चंद्रमा: पलाश की समिधा
3. मंगल: खैर की समिधा
4. बुध: चिड़चिड़ा की समिधा
5. बृहस्पति: पीपल की समिधा
6. शुक्र: गूलर की समिधा
7. शनि: शमी की समिधा
8. राहु: दूर्वा की समिधा
9. केतु: कुशा की समिधा

1.4 ग्रह शान्ति में प्रयुक्त हवन सामग्री

ग्रह शान्ति- ग्रहों के अशुभ या अनिष्ट प्रभाव से बचने के शास्त्रीय अनुष्ठान को ग्रह शान्ति कहते हैं। इसमें अधिदेव या प्रत्यधिदेव के साथ नवग्रहों तथा गणपछि कल्याणकारी देवताओं के साथ इन्द्र आदि लोकपालों का आवाहन पूजन, हवन एवं बलिदान किया जाता है। इससे ग्रहों का अनिष्टफल काफी बड़ी मात्रा में दूर हो जाक है । ग्रह शान्ति की दो प्रणालियाँ वैदिक कर्मकाण्ड में प्रचलित है १. रुन्त्रोपासना एवं २-प्रतीकोपासना । मन्त्रोपासना की प्रणाली में मुख्य रूप से अरिष्टसूचक ग्रह के मन्त्र का अनुष्ठान किया जाता है; जिसमें मुख्य तत्त्व मन्त्र का जप है । और प्रनकोपासना की प्रणाली में अरिष्टसूचक ग्रह के साथ नवग्रहों का ग्रहमण्डल या नवग्रहयन्त्र पर आवाहन, पूजन, हवन एवं बलिदान सहित अनुष्ठान किया जाता है; जिसमें मूनन एवं हवन मूल-तत्त्व होते हैं । ग्रहों की अधिदेव एवं प्रत्यधिदेव के रूप में प्रतीकोपासना का अचित्य स्थापित होता है। करने वाले आचायों का कहना है कि जो प्रत्युपकार की भावना के बिना हमारा सतत उपकार करते हैं - वे देवता कहलाते हैं; जैसे अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्रमा, वरुण एवं पृथ्वी आदि। अतः देवता का स्वभाव उपकार करना है। उनके इसी स्वभाव से अपना कल्याण करने के लिए ग्रह शान्ति के अनुष्ठान में अधिदेव, प्रत्यधिदेव, गणपति आदि कल्याणकारी देव और इन्द्र आदि लोकपाल देवों की पूजा एवं हवन आदि का विधान किया गया है । आज के समाज में जो अशान्ति, असन्तोष, रोग, शोक, अभाव आदि चारों ओर फैल रहे हैं उनके अन्य कारणों के साथ-साथ देवताओं की उपेक्षा और उनसे मिलने वाली सहायता के प्रति उदासीनता भी एक कारण है। भारतीय चिन्तकों ने मनुष्य एवं देवताओं के बीच "परस्परं भावयन्तः" के भावनात्मक सम्बन्ध को आदर्श माना है । इससे मनुष्य को जीने का सशक्त एवं समर्थ सहारा मिलता है। जब से हमने इस सहारे को छोड़ा है परिणाम हमारे सामने हैं । अन्तर्जगत् की प्रकृति के अनुसार देवताओं को जगत् के पदार्थों के उत्पादन, विनिमय, वितरण एवं नियन्त्रण का अधिकार प्राप्त है। इसलिए मनुष्य एवं देवताओं में "परस्परं भावयन्तः" का ऐसा सम्बन्ध हो, जिसमें मनुष्य देवताओं को सन्तुष्ट करें और देवता मनुष्यों को समृद्धि एवं अभिवृद्धि दें।। यह सम्बन्ध ही उसके कल्याण की कुञ्जर्जा हैं। किन्तु यदि मनुष्य अपनी बुद्धि एवं पुरुषार्थ के मिथ्या आश्रय से अहंकार के वशीभूत होकर आत्मवञ्चना करे, तो उका परिणाम दैहिक, दैविक एवं भौतिक ताप के अलावा और क्या हो सकता है ? इन सभी प्रकार के सन्तापों जिन्हें ज्योतिष शास्त्र की भाषा में ग्रहों का अनिष्ट-फल कहते हैं से बचने के विधि-विधान को ग्रह शान्ति कहते हैं।

1.4.1 ग्रहों का हवन तथा हवन के लिए प्रमुख सामग्री

ग्रहों का हवन तथा ग्रह शान्ति के अनुष्ठान में ग्रहों का निर्धारित संख्या में जप करने के बाद

विधिवत अग्नि स्थापित हवन किया जाता है। अर्क (आक), पलाश (ढाक), खदिर (खैर), अपामार्ग (ओघा), अश्वत्थ (पीपल), उदुम्बर (गूलर), शमी (छोंकर), दूर्वा (दूब) एवं कुशा- ये सूर्य आदि ग्रहों की समिधा होती है। मधु, पी एवं दही मिलाकर इन समिधाओं से हवन करना चाहिए। यदि समिधा अनुपलब्ध हो तो तिल, जौ, चावल, घी एवं बूरा मिलकार शाकल्य से आहुतियों दी जा सकती है।' सूर्य आदि ग्रहों के पान्य यवाक्रमेण गेहूं, चावल, मसूर, मूंग, चने की दाल, चावल, उड़द, तिल एवं कांगुनी होते हैं।

1.4.2 नवग्रह समिधा का महत्व

(लकड़ी) अपने आप में पूजा और आध्यात्मिक अभ्यास के लिए महत्वपूर्ण सामग्री है। इसे नौ ग्रहों की शक्तियों को बाधाओं से बचाने और स्थायी सृष्टि के लिए प्राकृतिक उपाय के रूप में प्रयोग किया जाता है। नवग्रह लकड़ी की विशेषताएं और उपयोग के कुछ महत्वपूर्ण पहलूओं को निम्नलिखित रूप में समझते हैं:

नौ ग्रहों के प्रतीक: नवग्रह लकड़ी में नौ विभिन्न लकड़ियों का प्रतिष्ठान होता है, जो नौ ग्रहों को प्रतीकता करती हैं। इन ग्रहों का संयोग हमारे जीवन पर ब्रह्माण्डिक प्रभाव डालता है और नवग्रह लकड़ी का उपयोग हमें इन प्रभावों को संतुलित करने में मदद करता है।

नवग्रहों की शक्तियों को संतुलित करने के लिए: नौ ग्रहों की शक्तियाँ हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव डाल सकती हैं। नवग्रह लकड़ी का उपयोग हमें इन शक्तियों को संतुलित करने और उनके दोषों को कम करने में मदद करता है। यह ग्रहों के प्रभाव को प्रतिष्ठापित करने के लिए प्रयास करता है और हमें संतुष्टि, समृद्धि और शांति का अनुभव करने में सहायता प्रदान करता है।

उन्नति के लिए: नवग्रह लकड़ी का उपयोग आध्यात्मिक साधना और ध्यान को समर्पित किया जाता है। इसके माध्यम से, नौ ग्रहों की ऊर्जा को संतुष्ट किया जाता है और आध्यात्मिक उन्नति को प्रोत्साहित किया जाता है। इसलिए, नवग्रह लकड़ी का उपयोग ध्यान, मंत्र जाप, पूजा और मेधावी गतिविधियों में किया जाता है।

आपूर्ति और संरक्षण के लिए: नवग्रह लकड़ी का उपयोग पूजा के दौरान संरक्षण और आपूर्ति के लिए भी किया जाता है। इसे विशेष रूप से ग्रहों के प्रतीक के रूप में पूजा स्थल पर रखा जाता है, जिससे प्राण प्रतिष्ठा होती है और ऊर्जा का संचार होता है।

आध्यात्मिक वातावरण के निर्माण के लिए: नवग्रह लकड़ी का उपयोग आध्यात्मिक वातावरण को निर्माण करने में मदद करता है। इसे मंदिर, पूजा कक्ष या आध्यात्मिक स्थान पर रखा जाता है,

जिससे उन्नत और शुद्ध ऊर्जा का संचार होता है। इससे प्रभावित होकर लोगों को आध्यात्मिक अनुभव करने की अनुमति मिलती है और उन्हें शांति, सुख और आनंद का अनुभव होता है।

नवग्रह लकड़ी न केवल पूजा और आध्यात्मिक उद्देश्यों के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि यह नौ ग्रहों के उचित और संतुलित प्रभाव के लिए भी मान्यता प्राप्त है। इसका उपयोग करके हम अपने जीवन में संतुष्टि, समृद्धि और शांति को स्थापित कर सकते हैं और आध्यात्मिक विकास की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

चित्र -नव ग्रह समिधा

1.5 नवग्रह हवन के विविध महत्त्व

प्रत्येक ऋतु में आकाश में भिन्न-भिन्न प्रकार के वायुमण्डल रहते हैं। सर्दी, गर्मी, नमी, वायु का भारीपन, हलकापन, धूल, धुँआ, बर्फ आदि का भरा होना। विभिन्न प्रकार के कीटणुओं की उत्पत्ति, वृद्धि एवं समाप्ति का क्रम चलता रहता है। इसलिए कई बार वायुमण्डल स्वास्थ्यकर होता है। कई बार अस्वास्थ्यकर हो जाता है। इस प्रकार की विकृतियों को दूर करने और अनुकूल

वातावरण-उत्पन्न करने के लिए हवन में ऐसी औषधियाँ प्रयुक्त की जाती हैं, जो इस उद्देश्य को भली प्रकार पूरा कर सकती हैं।

1.5.1 आहुतियों में प्रयुक्त विशेष द्रव्य-

जैसे कि उपरोक्त वर्णित किया गया है कि हवन में प्रयुक्त होने वाली हवनीय पदार्थ उनमें से कुछ विशेष औषधीय गुण वाले समिधा व द्रव्य होते हैं, विशेष मन्त्रों के साथ हवनकुण्ड में हवि के साथ अर्पित किया जाता , जिनको जिनकी विशेषता व उपयोगिता नीचे वर्णित है।

1.5.2 सुगंध देने वाली समिधाएँ व वनस्पतियां

छड़ीला, कपूर,काचरी, बालछड़, हाऊ बेर, सुगंध बरमी, तोमर बीज, पानड़ी,नागर मोथा,बावची,कोकिला।

1.5.3 औषधीय गुण युक्त समिधाएँ व वनस्पतियां

ब्राह्मी, तुलसी, गिलोई, शतावर, अश्वगंधा, मुलेठी, पुनर्नवा, दालचीनी, पिप्पली, हरड़, बहेड़ा, अपामार्ग, भूमि आंवला, भृंगराज ये सभी पदार्थ रोग नाशक एवं आयुवर्धक हैं , रोगोपशमनार्थ हेतु जो हवन होते हैं उनमें ये सब प्रयोग होता है।

1.5.4 ऋतुओं के अनुसार प्रयुक्त हवन सामग्री

ऋतुओं के अनुसार भी कही हवनीय द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है , तथा हवन द्रव्यों कि स्वच्छता और पवित्रता का सदैव ध्यान रखना चाहिए। किसी भी ऋतु में सामान्य हवन सामग्री दैनिक या मासिक होम में सामान्यतः नित्य हवन सामग्री का प्रयोग किया जाता है जिसमें जौ (यव), अक्षत, घी, शहद, तिल, पंचमेवा, एवं ऋतुफलों को काटकर प्रयोग किया जाता है इनकी मात्राएं निर्धारित होती है।

1.6 यज्ञ हवन में धाताव्य विन्दु प्रायश्चित

आज के दौर में जहाँ मानव भाग – दौड़ वाली जीवन शैली का आदि हो चुका है , जिसके कारण स्वभाव में ही एक साथ कही कार्य करने की और प्रवृत्ति बनी हुई है , उस पारी प्रेक्ष्य में आध्यात्मिक

कार्यों की सम्पूर्ति के लिए मनसा- वाचा – कर्मणा से प्रतिबद्ध होना परमावश्यक है। यदि ऐसा भूलवश कुछ होता है तो उसका प्रायश्चित आवश्यक होता है। जैसे -आपन वायु निकल पड़ने, हँस पड़ने, मिथ्या भाषण करने बिल्ली, मूषक आदि के छू जाने, गाली देने और क्रोध के आ जाने पर, हृदय तथा जल का स्पर्श करना ही प्रायश्चित है।

हवन के प्राकृतिक विविध लाभ-

राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान द्वारा किये गये एक शोध में पाया गया है कि पूजा —पाठ और हवन के दौरान उत्पन्न औषधीय धुआं हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट कर वातावरण को शुद्ध करता है जिससे बीमारी फैलने की आशंका काफी हद तक कम हो जाती है। लकड़ी और औषधीय जडी़ बूटियां जिनको आम भाषा में हवन सामग्री कहा जाता है को साथ मिलाकर जलाने से वातावरण में जहां शुद्धता आ जाती है वहीं हानिकारक जीवाणु कही प्रतिशत तक नष्ट हो जाते हैं। उक्त आशय के शोध की पुष्टि के लिए और हवन के धुएं का वातावरण पर पड़ने वाले प्रभाव को वैज्ञानिक कसौटी पर कसने के लिए बंद कमरे में प्रयोग किया गया। इस प्रयोग में पांच दजर्न से ज्यादा जड़ी बूटियों के मिश्रण से तैयार हवन सामग्री का इस्तेमाल किया गया। यह हवन सामग्री गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार संस्थान से मंगाई गयी थी। हवन के पहले और बाद में कमरे के वातावरण का व्यापक विश्लेषण और परीक्षण किया गया, जिसमें पाया गया कि हवन से उत्पन्न औषधीय धुंए से हवा में मौजूद हानिकारक जीवाणु की मात्र कही प्रतिशत तक की कमी आजाती है। धुएं की क्रिया से न सिर्फ आदमी के स्वास्थ्य पर अच्छा असर पड़ता है बल्कि यह प्रयोग खेती में भी खासा असरकारी साबित हुआ है।

वैज्ञानिक का कहना है कि पहले हुए प्रयोगों में यह पाया गया कि औषधीय हवन के धुएं से फसल को नुकसान पहुंचाने वाले हानिकारक जीवाणुओं से भी निजात पाई जा सकती है। मनुष्य को दी जाने वाली तमाम तरह की दवाओं की तुलना में अगर औषधीय जड़ी बूटियां और औषधियुक्त हवन के धुएं से कई रोगों में ज्यादा फायदा होता है और इससे कुछ नुकसान नहीं होता जबकि दवाओं का कुछ न कुछ दुष्प्रभाव जरूर होता है। धुआं मनुष्य के शरीर में सीधे असरकारी होता है और यह पद्वति दवाओं की अपेक्षा सस्ती और टिकाउ भी है।

हवन की अग्नि (यज्ञाग्नि) से प्रेरणा

अग्नि भगवान से ऐसी प्रार्थना यजमान करता है कि-

ॐ अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चस्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम।-आश्वलायन गृह्यसूत्र 1/10/12

यज्ञ को अग्निहोत्र कहते हैं। अग्नि ही यज्ञ का प्रधान देवता हे। हवन-सामग्री को अग्नि के मुख में ही डालते हैं। अग्नि को ईश्वर-रूप मानकर उसकी पूजा करना ही अग्निहोत्र है। अग्नि रूपी परमात्मा की निकटता का अनुभव करने से उसके गुणों को भी अपने में धारण करना चाहिए एवं उसकी विशेषताओं को स्मरण करते हुए अपनी आपको अग्निवत् होने की दिशा में अग्रसर बनाना चाहिए। नीचे अग्नि देव से प्राप्त होने वाली शिक्षा तथा प्रेरणा का कुछ दिग्दर्शन कर रहे हैं अग्नि का स्वभाव उष्णता है। हमारे विचारों और कार्यों में भी तेजस्विता होनी चाहिए। आलस्य, शिथिलता, मलीनता, निराशा, अवसाद यह अन्ध-तामसिकता के गण हैं, अग्नि के गुणों से यह पूर्ण विपरीत हैं। जिस प्रकार अग्नि सदा गरम रहती है, कभी भी ठण्डी नहीं पड़ती, उसी प्रकार हमारी नसों में भी उष्ण रक्त बहना चाहिए, हमारी भुजाएँ, काम करने के लिए फड़कती रहें, हमारा मस्तिष्क प्रगतिशील, बुराई के विरुद्ध एवं अच्छाई के पक्ष में उत्साहपूर्ण कार्य करता रहे। अग्नि में जो भी वस्तु पड़ती है, उसे वह अपने समान बना लेती है। निकटवर्ती लोगों को अपना गुण, ज्ञान एवं सहयोग देकर हम भी उन्हें वैसा ही बनाने का प्रयत्न करें। अग्नि के निकट पहुँचकर लकड़ी, कोयला आदि साधारण वस्तुएँ भी अग्नि बन जाती हैं, हम अपनी विशेषताओ से निकटवर्ती लोगों को भी वैसा ही सद्गुणी बनाने का प्रयत्न करें। अग्नि जब तक जलती है, तब तक उष्णता को नष्ट नहीं होने देती। हम भी अपने आत्मबल से ब्रह्म तेज को मृत्यु काल तक बुझने न दें। हमारी देह, भस्मान्तं शरीरम् है। वह अग्नि का भोजन है। न मालूम किस दिन यह देह अग्नि की भेट हो जाय, इसलिए जीवन की नश्वरता को समझते हुए सत्कर्म के लिये शीघ्रता करें।

अग्नि पहले अपने में ज्वलन शक्ति धारण करती हैं, तब किसी दूसरी वस्तु को जलाने में समर्थ होती है। हम पहले स्वयं उन गुणों को धारण करें जिन्हें दूसरों में देखना चाहते हैं। उपदेश देकर नहीं, वरन् अपना उदाहरण उपस्थिति करके ही हम दूसरों को कोई शिक्षा दे सकते हैं। जो गुण हम में वैसे ही गुण वाले दूसरे लोग भी हमारे समीप आवेंगे और वैसा ही हमारा परिवार बनेगा। इसलिये जैसा वातावरण हम अपने चारों ओर देखना चाहते हों, पहले स्वयं वैसा बनने का प्रयत्न करें।

अग्नि, जैसे मलिन वस्तुओं को स्पर्श करके स्वयं मलिन नहीं बनती, वरन् दूषित वस्तुओं को भी अपने समान पवित्र बनाती है, वैसे ही दूसरों की बुराइयों से हम प्रभावित न हों। स्वयं बुरे न बनने लगें, वरन् अपनी अच्छाइयों से उन्हें प्रभावित करके पवित्र बनावें।

अग्नि जहाँ रहती है वहीं प्रकाश फैलता है। हम भी ब्रह्म-अग्नि के उपासक बनकर ज्ञान का प्रकाश चारों ओर फैलावें, अज्ञान के अन्धकार को दूर करें। तमसो मा ज्योतर्गमय हमारा प्रत्येक कदम अन्धकार से निकल कर प्रकाश की ओर चलने के लिये बढ़े।

अग्नि की ज्वाला सदा ऊपर को उठती रहती है। मोमबत्ती की लौ नीचे की तरफ उलटें तो भी वह ऊपर की ओर ही उठेगी। उसी प्रकार हमारा लक्ष्य, उद्देश्य एवं कार्य सदा ऊपर की ओर हो, अधोगामी न बने।

अग्नि में जो भी वस्तु डाली जाती है, उसे वह अपने पास नहीं रखती, वरन् उसे सूक्ष्म बनाकर वायु को, देवताओं को, बाँट देती है। हमें जो वस्तुएँ ईश्वर की ओर से, संसार की ओर से मिलती हैं, उन्हें केवल उतनी ही मात्रा में ग्रहण करें, जितने से जीवन रूपी अग्नि को ईंधन प्राप्त होता रहे। शेष का परिग्रह, संचय या स्वामित्व का लोभ न करके उसे लोक-हित के लिए ही अर्पित करते रहें।

अग्नि जब जलती है तो उसमें कभी कभी अंगारों की व पटाकों की आवाज भी आती है वैसे यह शांत स्वाभाव से जलती है , ऐसे ही मनुष्य को भी शांत रहना चाहिए पर जब अन्याय हो तो अग्नि के अंगारों के समान उस अन्याय के खिलाफ आवाज उठानी चाहिए।

1.7 वोधात्मक प्रश्न

1.समिधा से क्या तात्पर्य है।

क. समग्री ख. आहुति ग. मन्त्र घ . घृत

2. यज्ञ पात्र के अन्तर्गत आते हैं

क. स्रुवा, ख. सामग्री, ग. प्रोक्षणी, घ. क और ग

3. शनि ग्रह की समीधा है

क. शमी ख. पलाश ग. उदंबर घ. अपामार्ग

4 . राहु की समिधा है

क. पलाश , ख. दूर्वा ग. पीपल घ. खैर

5. केतु की समिधा है।

क. : कुशा ख. शमी ग. वरगद घ. अर्क (आँक)

1.8 सारांश –

वैदिक संहिताओं में ग्रहशान्ति के लिए ग्रहभरव का प्रतिपादन किया गया है। ग्रहभरव की ऋचाओं, परिवर्ती कल्पग्रन्थों एवं कर्मकाण्ड की पद्धतियों में ग्रहों के ध्यान की पर्याप्त सामग्री मिलती है। इनके आधार पर संक्षेप में ग्रहों का ध्यान बतलाया जा रहा है; जिसका ग्रह शान्ति की पूजा-पद्धति में उपयोग किया जाता है। हवन के लिए आवश्यक सामग्री में समिधा, घी, और अन्य सामग्री शामिल हैं। हवन मंत्रों का जाप करते हुए इन सामग्रियों को अग्नि में डाला जाता है। नवग्रह हवन में, विभिन्न मंत्रों का जाप किया जाता है। ॐ ब्रह्मामुरारी त्रिपुरांतकारी भानु: शशि: भूमि सुतो बुधश्च: गुरुश्च शुक्रे शनि राहु केतो सर्वे ग्रहा शांति कर: भवंतु स्वाहा, जैसे मंत्रों का जाप किया जाता है। सूर्य की समिधा मदार की, चन्द्रमा की पलाश की, मंगल की खैर की, बुध की चिड़चिडा की, बृहस्पति की पीपल की, शुक्र की गूलर की, शनि की शमी की, राहु दूर्वा की और केतु की कुशा की समिधा कही गई है। मदार की समिधा रोग को नाश करती है, पलाश की सब कार्य सिद्ध करने वाली, पीपल की प्रजा (सन्तति) काम कराने वाली, गूलर की स्वर्ग देने वाली, शमी की पाप नाश करने वाली, दूर्वा की दीर्घायु देने वाली और कुशा की समिधा सभी मनोरथ को सिद्ध करने वाली होती है। इनके अतिरिक्त देवताओं के लिए पलाश वृक्ष की समिधा जाननी चाहिए।

1.9 पारिभाषिक शब्दावली

1-समिधा –हवन की लकड़ी

2.हवि- हवन सामग्री

3.हवनीय द्रव्य –हवन में प्रयुक्त पदार्थ

4.त्रिताप- 1. आदि दैविक 2. आदि दैहिक 3. आदि भौतिक।

5. मनसा-वाचा – कर्मणा – मनसे – वाणीसे- कर्मसे।

6. यज्ञ पात्र – यज्ञ / हवन में पर्योग में आनेवाले वर्तन जैसे – स्रुवा , प्रोक्षणी , प्राणिति आदि।

1.10 वोधात्मक प्रश्नों के उत्तर

1.क

2.घ

3.क

4. ख

5. क

1.11 संदर्भित पाठ्यग्रन्थ

1. देखिए वृहत्पाराशर होराशास्त्र अ०८५ श्लो.२१-२२।
2. मन्त्रमहार्णव देवता खण्ड तरंग-११।
3. आश्वलायन गृह्यसूत्र 1/10/12
4. कर्मठगुरु
5. कर्मकाण्ड भाष्कर
6. विकिपीडिया
7. ग्रह शान्ति संस्कार
8. नित्यकर्मप्रकाश
9. कर्मकाण्ड प्रदीप
10. मन्त्र संहिता
11. कुण्डमंडपासिद्धि

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.हवन में प्रयुक्त समिधायें एवं नवग्रहों की समिधा का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
2. हवन से होने वाले विविध लाभों का विस्तार पूर्वक उल्लेख कीजिए।
3 ग्रह शांति में पर्युक्त समिधा एवं सामग्रियों का उल्लेख कीजिए।
4. हवन के महत्व पर प्रकश डालिए।

इकाई - 2 पूजन में नवग्रहों का वैशिष्ट्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 नवग्रह का परिचय

2.4 कर्मकांड में नवग्रह का वैशिष्ट्य

2.5 वैदिक मंत्र के द्वारा नवग्रह पूजन विधि

2.6 पूजन में नवग्रह स्त्रोत का वैशिष्ट्य

2.7 षोडश संस्कार पूजन में नवग्रह का वैशिष्ट्य

2.8 सारांश

2.9 पारिभाषिक शब्दावली

2.10 अभ्यास प्रश्न

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

2.13 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रिय अध्येताओ प्रस्तुत इकाई बी.ए.के .एन (221) पाठ्यक्रम से सम्बन्धित **हैं।** जिसमे भारतीय सनातन संस्कृति मैं षोडश संस्कार पूजन मैं सूर्यादि नवग्रहों का विशेष वैशिष्ट्य दिखाई देता हैं। जैसे किसी वस्तु,मैं पाई जाने वाली विशेष तत्व या वस्तु जो अन्य वस्तुओं से अलग दिखाई पड़ती हैं वह वैशिष्ट्य कहलाता हैं। इस ईकाई मैं पूजन के विशेष तत्वों के बारे मैं कहा गया हैं, कि नवग्रहों का कहां कहां तथा किस किस पूजन मैं विशेष प्रभाव या वैशिष्ट्य हैं। पंचाग पूजन से लेकर के नवग्रह पूजन का प्रयोग लगभग सभी मैं किया जाता हैं। परन्तु यहां पर नवग्रह पूजन को विशेष ही माना जाता हैं। जिसमें नवग्रहों का विधिपूर्वक पूजन किया जाता हैं। परन्तु यदि नवग्रहों की शांति करनी हो तो नवग्रहों का पूजन विशेष रुप से की जाती हैं जो इसका वैशिष्ट्य कहलाती हैं।

भारतीय प्राचीन ज्ञान परम्परा मैं कर्मकांड का विशेष उल्लेख मिलता हैं। जिसमें से ज्ञान कांड, उपासना कांड, कर्मकांड, इन तीनों का विस्तार पूर्वक उल्लेख मिलता हैं। जिसके माध्यम से व्यक्ति के इस संसार मैं आनें का उद्देश्य क्या रहा होगा तथा मनुष्य किन किन अवस्थाओं मैं कर्मकांड के माध्यम से अपना कार्य सम्पन्न करता होगा इन सभी का ज्ञान हमें कर्मकांड के माध्यम से होता हैं। इस ईकाई मैं हम कर्मकांड से सम्बंधित विषयों का, नवग्रह पूजन, नवग्रह पूजन का महत्व, वैदिक, लौकिक, मंत्रों के द्वारा पूजन विधान को जानने का प्रयास करेंगे जिससे कर्मकांड से होंने वाली विधियों के द्वारा जनसाधारण का कल्याण हो सकें। वस्तुत: षोडश संस्कार के अन्तर्गत मनुष्यों के सभी कार्य सम्पन्न किया जाता हैं जो कर्मकांड का एक मुख्य भाग जिसे कहा जा सकता हैं। जिसके द्वारा जातक के पाप कर्मों को कर्मकांड के द्वारा दूर किया जा सके। कर्म यानि मे परिश्रम, कांड यानि उसका विस्तार कर्म के द्वारा सही तथा गलत कर्मों को करनें के बाद जिसका प्रायश्चित किया जाय जिसके द्वारा व्यक्ति के कर्मो की शुद्धता हो सके वह कर्मकांड कहलाता हैं। आइए हम सभी इस ईकाई मैं पूजन में नवग्रह का क्या वैशिष्ट्य है,इनका पूजन कैसे किया जाता हैं। इन सभी का विधि विधान से पूजन के बारे मैं जानना था अध्ययन करना प्रस्तुत इकाई का ध्येय हैं।

2.2 उद्देश्य

- ❖ नवग्रहों से अवगत हो सकेंगे।
- ❖ कर्मकांड मैं नवग्रहों के वैशिष्ट्य को समझ सकेंगे।

- ❖ वैदिक नवग्रह मंत्रो के बारे मैं जान सकेगें।
- ❖ षोडश संस्कार मैं नवग्रह की भूमिका से अवगत होंगे।
- ❖ वैशिष्ट्य के महत्व को जान पायेंगे।

2.3 नवग्रह का परिचय

ज्योतिषशास्त्र मैं सूर्यादि नवग्रह के द्वारा सांसारिकता की गतिविधियों का पता चलता हैं कि जातक के ऊपर आनेवाली घटनाओं का ज्ञात नवग्रहों के माध्यम से किया जाता हैं। जिसमें से सूर्य को प्रथम एवं आत्म कारक ग्रह के साथ साथ जो अपनी ऊर्जा से सभी प्राणियों मैं शक्ति का संचरण करता हैं। जो सूर्य देह से सम्बन्धित हैं सप्त घोड़े के समान रक्त वर्ण के सदृश देदीप्यमान दिखाई देता हैं। इसी तरह से चन्द्र का विचार करें तों उनका स्वरूप श्वेत वर्ण का हैं। तथा इनके प्रतिनिधि देवता सौम को कहा जाता हैं। जो मनुष्य के जीवन मैं अपने स्वरूप के अनुसार समय समय पर फल देते रहते हैं इन्हें चन्द्र देव के नाम से भी जाना जाता हैं। इसी तरह से बुध ग्रह का विचार किया जाता हैं जो वाणी के कारक की साथ साथ बुद्धि के भी देवता हैं जिनके देव गणेश जी को माना जाता हैं गणेश जी की आराधना करनें से मनुष्य को विद्या का लाभ मिलता रहता हैं। गुरु ग्रह धनु का स्वामी होता हैं। जो भगवान् विष्णु से सम्बंधित हैं इस ग्रह के देव नारायण कहे जाते हैं। शुक्र ग्रह का स्वभाव व्यक्ति को खुशहाल बनाने के साथ साथ समस्याएं भी उत्पन्न अरत हैं। शनि ग्रह क्रूर ग्रह के नाम से जाने जाते हैं जो बार बार मनुष्य को अपनी दृष्टि से परेशान करते रहता हैं। राहु, केतु भी छाया ग्रह के नाम से प्रसिद्ध हैं जो विपरीत फल की प्राप्ति कराते हैं। चन्द्र ग्रह को देवता के रूप मे तथा सोम के रूप में भी जाना जाता है। तथा उन्हें वैदिक चंद्र देवता सोम के साथ पहचाना जाता है। इनका स्वरुप युवा , सुंदर, गौर, द्विबाहु के रूप में दिखाई पड़ता हैं। जिनके हाथों में एक मुगदर और एक कमल रहता है। वे हर रात्रि को पूरे आकाश में अपने रथ को चलाते हुये दिखाई देते हैं। दश सफेद घोडे या मृग द्वारा चन्द देव के रथ को खींचा जाता है। जो जनन क्षमता के देवताओं में से एक हैं। जो मन का प्रतिनिधित्व करते हैं। मन का प्रतिनिधित्व करता है। चंद्र को सोम के रूप में भी जाना जाता है और उन्हें वैदिक चंद्र देवता सोम के साथ पहचाना जाता है। उन्हें जवान, सुंदर, गौर, द्विबाहु के रूप में वर्णित भी किया गया है और उनके हाथों में एक मुगदर और एक कमल रहता है। वे हर रात पूरे आकाश में अपना रथ (चांद) चलाते हैं, जिसे दस सफेद घोड़े या मृग द्वारा खींचा जाता है। सोम के रूप में वे सोम वार के स्वामी हैं। वे सत्व गुण वाले हैं और मन, माता की रानी का प्रतिनिधित्व करते हैं। जो लाल ग्रह के नाम से जाने जाते हैं उसे मंगल ग्रह या अंगारक भी कहा जाता है। (जो लाल रंग का है) या भौम,भूमि का पुत्र' तथा युद्ध

के देवता तथा ब्रह्मचारी भी हैं। उन्हें पृथ्वी, अर्थात पृथ्वी देवी की संतान माना जाता है। मंगल ग्रह को संस्कृत में अंगारक ('जो लाल रंग का है') या भौम (भूमि का पुत्र) भी कहा जाता है। वह युद्ध के देवता हैं और ब्रह्मचारी हैं। उनकी प्रकृति तमस गुण वाली है और वे ऊर्जावान कार्रवाई, आत्मविश्वास और अहंकार का प्रतिनिधित्व करते हैं। बुध ग्रह चन्द्र (चांद) और तारा (तारक) का पुत्र कहा जाता हैं। वे वाणी के देवता भी हैं। वे रजो गुण वाले तथा संवाद का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्हें शांत, सुवक्ता और हरे रंग में प्रस्तुत किया जाता है। उनके हाथों में एक कृपाण, एक मुगदर और एक ढाल लिए हुये उनका स्वरुप रहता हैं।

बृहस्पति, देवताओं के गुरु हैं, शील और धर्म के अवतार हैं, प्रार्थनाओं और बलिदानों के मुख्य प्रस्तावक हैं, जिन्हें देवताओं के पुरोहित के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। वे सत्व गुणी हैं और ज्ञान और शिक्षण का प्रतिनिधित्व करते हैं। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार, वे देवताओं के गुरु हैं और दानवों के गुरु शुक्राचार्य के कट्टर विरोधी हैं। वे पीले या सुनहरे रंग के हैं और एक छड़ी, एक कमल और अपनी माला धारण करते उनका स्वरुप दिखाई देता हैं। ज्योतिष शास्त्र में शुक्र, ग्रह जो "साफ, शुद्ध" या "चमक, स्पष्टता" के लिए जाना जाता हैं। जो भृगु और उशान के बेटे का नाम है और वे दैत्यों के रक्षक तथा असुरों के गुरु कहे गये हैं। जिन्हें शुक्र ग्रह के साथ पहचाना जाता हैं। जो 'शुक्र वार' के स्वामी हैं। प्रकृत से वे राजसी हैं और धन, खुशी और प्रजनन का प्रतिनधत्व भी करते हैं। जिनका स्वरुप एक घोड़े पर या एक मगरमच्छ पर. वे एक छडी, माला और एक कमल धारण करते हैं और कभी-कभी एक धनुष और तीर के सदृश दिखाई देने वाला उनका स्वरुप हैं। ज्योतषशास्त्र में, एक दशा होती है या ग्रह अवध होती है। जिसे शुक्र दशा के रूप में जाना जाता है। जो किसी भी जातक की कुंडली में 20 वर्षों तक दशा अन्तर्दशा में बना रहता हैं। जो व्यक्ति को सुख प्रदान करता हैं। ज्योतिष में नौ मुख्य खगोलीय ग्रहों में से एक है। शनि, शनिवार का स्वामी भी कहा जाता हैं। इसकी प्रकृति तमस है और कठिन मार्गीय शिक्षण, कॅरियर और दीर्घायु को दर्शाता है। शनि शब्द की व्युत्पत्ति शनये क्रमति सः से हुई अर्थात, वह जो धीरे-धीरे चलता हुआ अपने लक्ष्य को प्राप्त करता हैं। शनि को सूर्य की परिक्रमा करने में 30 वर्ष का समय लगता हैं। शनि ग्रह का स्वरुप नील वर्ण का होते हुये, एक तलवार, तीर, दो खंजर लिए हुए दिखाई पड़ता हैं। और वे एक काले कौए पर सवार होते हैं। ज्योतिष शास्त्र में राहु तथा केतु ग्रह को छाया ग्रह के रूप में माना जाता हैं। जो राक्षसीक,तथा सांप का मुखिया होता हैं। राहु, आरोही /उत्तर चंद्र आसंधि के देवता भी हैं। राहु, राक्षसी सांप का मुखिया भी है जो सूर्य या चंद्रमा को भी अपने पापी प्रभाव से ग्रसते हुए ग्रहण को उत्पन्न करता है। चित्रकला में उन्हें एक ड्रैगन के रूप में दर्शाया गया है जिसका कोई सर नहीं है और जो आठ काले घोड़ों द्वारा खींचे जाने

वाले रथ पर सवार हैं। वह तमस ग्रह के नाम से भी जाना जाता हैं। किसी भी जातक की कुंडली में राहु, केतु द्वारा बनने वाला योग कालसर्प के नाम से भी जाना जाता हैं। केतु को आम तौर पर एक छाया ग्रह के रूप में जाना जाता है। उसे राक्षस सांप की पूंछ के रूप में माना जाता है। कि मानव जीवन पर इसका एक अलग प्रभाव पड़ता है और पूरी सृष्टि पर भी। कुछ विशेष परिस्थितियों में यह किसी को प्रसिद्धि के शिखर पर पहुंचने में मदद करता है। प्रकृति में तमस है और पारलौकिक प्रभावों का प्रतिनिधित्व करने वाला ग्रह कहलाता हैं।

2.4 कर्मकांड में नवग्रह का वैशिष्ट्य

प्राय: देखा जाता हैं कि पौरोहित्य कर्मकांड मैं सभी पूजन का उल्लेख मिलता हैं परन्तु सूर्यादि नवग्रहों का विशेष या वैशिष्ट्य स्थान कर्मकांड मैं प्राप्त होता हैं। वैदिक परंपरा मैं कर्मकांड के द्वारा ही पूजन को सम्पादित किया जाता रहा हैं उनमें से भी नवग्रहों की भूमिका अलग रही हैं षोडश संस्कारों मैं पूजन के महत्व को जानना तथा उसका शास्त्रीय विधि द्वारा कर्मकांड के माध्यम से विधिपूर्वक पूजन करना ही एक अलग प्रकार का वैशिष्ट्य दिखाई पड़ता हैं। जैसे किसी लघु या दीर्घ पूजन मैं पूजन करना हो तो सर्वप्रथम मंडपों का निर्माण किया जाता हैं जो मुख्य प्रकार के देवता हैं उनके मंडपों का पूजन कर प्रतिष्ठा की जाती हैं। गणेश पूजन से प्रारंभ कर पंचांग पूजन , शांति पाठ, चतुर्दश नमस्कार, संकल्प लेकर गणेश पूजन का आरंभ किया जाता हैं। तथा वरुणकलशपूजन, अष्टवसु पूजन, पुण्यावाहन, आचार्य वरण, से लेकर वास्तु पूजन , सर्वतोभद्र पूजन , तथा उसके पश्चात् नवग्रहों का पूजन अवश्य किया जाता हैं। यदि नवग्रह पूजन न किया जाए तो पूजन का फल अधूरा मिलता हैं। इसलिए कर्मकांड मैं नवग्रह का वैशिष्ट्य अलग तरह से दिखाई पड़ता हैं।

2.5 वैदिक मंत्र के द्वारा नवग्रह पूजन विधि

शास्त्रों में मानव के कष्टों को दूर करने के लिए विशेष रूप से नवग्रहो के वैशिष्ट्य के बारे में जानना तथा नवग्रहों के द्वारा पूजन कर उन कष्टों को दूर किया जाता हैं। इन मंत्रो के द्वारा जातक के ऊपर आने वाले समस्याओ का शीघ्र उपाय नवग्रह के मंत्रो के माध्यम से किया जाता हैं। जो आगे दिया जा रहा हैं।

ईशानकोण की ओर पीढ़े पर सफेद वस्त्र बिछाकर नवग्रहमण्डल का निर्माण कर सूर्यादिनवग्रहदेवताओं के निम्न श्लोकों, मन्त्रों एवं वाक्यों के द्वारा उनका आवाहन व स्थापन करना चाहिये।

जपा-कुसुम-सङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।
तमोऽरि सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्॥

ॐ आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मत्यं च। हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन्

ॐ भूर्भुवः स्वः कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपसगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य! इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय नमः, सूर्यमावाहयामि स्थापयामि॥

दधि-शङ्ख-तुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्।
ज्योत्स्नापतिं निशानाथं सोममावहयाम्यहम्॥

ॐ इमं देवा असपत्नर्ठ० सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ य महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इममुष्य पुत्रममुष्ध्यै पुत्रमुस्यै विश एष वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाठ० राजा॥

ॐ भूर्भुवः स्वः यमुनातीरोद्भव आत्रेयसगोत्र शुक्लवर्ण भो सोम! इहागच्छ इह तिष्ठ सोमाय नमः, सोममावाहयामि स्थापयामि॥

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजःसम-प्रभम्।
कुमारं शक्तिहस्तं च भौममावाहयाम्यहम्॥

ॐ अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् अपा० रेताठ० सि जिन्वति॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अवन्तिकापुरोद्भव भरद्वाजसगोत्र रक्तवर्ण भो भौम ! इहागच्छ इह तिष्ठ भौमाय नमः, भौममावाहयामि स्थापयामि॥

प्रियङ्गुकलिकाभासं रूपेणाऽप्रतिमं बुधम्।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं बुधमावाहयाम्यहम्॥

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्तेसर्ट० सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत॥

ॐ भूर्भुवः स्वः मगधदेशोद्भव आत्रेयसगोत्र हरितवर्ण भो बुध ! इहागच्छेह तिष्ठ बुधाय नमः, बुधमावाहयामि स्थापयामि॥

देवानां च मुनीनां च गुरुं काञ्चनसन्निभम्।
वन्द्यभूतं त्रिलोकानां गुरुमावाहयाम्यहम्॥

ॐ बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद्युमद्विभातिकुतुमज्जनेषुयहीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥

बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ बृहस्पतये नमः, बृहस्पतिमावाहयामि ॐ भूर्भुवः स्वः सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो गुरु इहागच्छेह तिष्ठ गुरुमावाहयामि स्थापयामि ॥

हिम-कुन्द-मृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्

सर्वशास्त्रप्रवक्तारं शुक्रमावाहयाम्यहम् ।

ॐ अन्नात्परिस्नुतो रसं ब्रह्मणा ब्यपिबत्क्षत्त्रं पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानठं० शुक्रमन्धसइन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयो मृतं मधु ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भोजकटदेशोद्भव भार्गवसगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र ! इहागच्छ इह तिष्ठ शुक्राय नमः, शुक्रमावाहयामि स्थापयामि॥

नीलाम्बुजसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्।

छायामार्तण्डसम्भूतं शनिमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभि-स्त्रवन्तुः नः ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपसगोत्र कृष्णवर्ण भो शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ शनैश्चराय नमः, शनिश्चरमावाहयामि स्थापयामि॥

अर्द्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्

सिंहिकागर्भसम्भूतं राहुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखाकयाशचिष्ठया वृता ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः राठिनापुरोद्भव पैठिनसगोत्र कृष्णावर्ण भो राहो! इहागच्छ इह तिष्ठ राहवे नमः, राहुमावाहयामि स्थापयामि॥

पालाशधूम्रसङ्काशं तारकाग्रहमस्तकम् ।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं केतुमावाहयाम्यहम् ॥

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे समुषद्भिर जायथाः॥

ॐ भूर्भुवः स्वः अन्तर्वेदिसमुद्भव जैमिनिसगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो! इहागच्छ इह तिष्ठ केतवे नमः, केतुमावाहयामि स्थापयामि ।

गन्धं -

त्वां गन्धर्वा अखनस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ।

पुष्पं -

ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।

अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥

धूपम्

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयन्धूर्वामः ।

देवानामसि वह्नितम सस्नितमं पप्रितम जुष्टतमं देवहूतमम् ॥

दीपं

ॐ अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योंतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥

नैवेद्यम्-

नैवेद्य को प्रोक्षित कर गन्ध पुष्प से आच्छादित करें। तदन्तर जल चतुष्कोण का घेरा लगाकर भगवान के सम्मुख भोग लगाये ।

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गुं शीष्णोद्यौः समवर्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्॥

पाद्यं

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि . ॥

आचमन लेकर नवग्रहों के पेरो में जल अर्पण करे

अर्घ्यं

ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत् पुनः ।

ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि॥

हस्तयोरर्घ्यं समर्पयामि अर्घ्य का जल छोड़े।

आचमनं

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी आचम नके लिये जल समर्पित करे ।

स्नानीय जलं

ॐ तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम्।

पशूंस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥

स्नानीयं जलं समर्पयामि

वस्त्र

ॐ युवा सुवासा परिवीत आगात् स उश्रेयान् भवति जायमानः ।

तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो 3 मनसा देवयन्तः ॥

आभूषण

वज्रमाणिक्यवैदूर्यमुक्ताविद्रुममण्डितम् ।

पुष्परागसमायुक्तं भूषणं प्रतिगृह्यताम् ॥

अलङ्करणार्थ आभूषणानि समर्पयामि

चन्दन-

त्वां गन्धर्वा अखनस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः ।

त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान् यक्ष्मादमुच्यत ॥

पुष्प-

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते ।

ॐ ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।

अश्वा इव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥

पुष्पं पुष्पमालां च समर्पयामि

धूपम्

ॐ धूरसि धूर्व धूर्वन्तं धूर्व तं योऽस्मान् धूर्वति तं धूर्व यं वयन्धूर्वामः ।

देवानामसि वह्नितम : सस्नितमं पप्रितम जुष्टतमं देवहूतमम् ॥

दीपम्

ॐ अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वच ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ ज्योतिःसूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥

नैवेद्यम्-

नैवेद्य को प्रोक्षित कर गन्ध पुष्प से आच्छादित करें। तदन्तर जल चतुष्कोण घेरा लगाकर भगवान को नेवेद्य का भोग लगाये

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष गुं शीष्णोद्यौः समवर्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ2 अकल्पयन्।।

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा। ॐ प्राणाय स्वाहा । ॐ अपानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा।

आचमनं –

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।

स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥

मुखे आचमनीयं जलं समर्पयामी।

ताम्बूल

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।

वसन्तो ऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शब्द्धविः ॥ .

एलालवङ्गपूगीफलयुतं ताम्बूलं समर्पयामि। इलायची, लवंग तथा पूगीफलयुक्त ताम्बूल अर्पित करे।

स्तवपाठ-

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय ।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

तर्पणं – भगवान की स्तुति के बाद जल के द्वारा तर्पण करना चाहिये ।

नमस्कारः –

नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे ।

साष्टाङ्गोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः ॥

नमस्कारान् समर्पयामि ।

2.6 पूजन में नवग्रह स्त्रोत का वैशिष्ट्य

भारतीय परम्परा में नवग्रहों के स्वरुप तथा वैशिष्ट्य के द्वारा **स्त्रोत** के माध्यम से नवग्रह पूजन कर समस्याओं का समाधान किया जाता हैं। इन सभी लोकिक मंत्रो का उचारण पूजन के समय में पोरोहित्य कर्म कर नवग्रह मंडप का पूजन वैशिष्ट्य कहलाता है। जो अलग प्रकार से दिखाई देता हैं । जो आगे दिया जा रहा हैं ।

जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्

के फूल के तरह जिनकी कान्ति है, कश्यप से जो उत्पन्न हुए हैं, अंधकार जिनका शत्रु है, जो सब पापों को नष्ट कर देने वाले हैं, उन सूर्य भगवान को मैं प्रणाम करता हूँ।

दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्।

नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुट भूषणम्

दही, शंख अथवा हिम के समान जिनकी दीप्ति है, जिनकी उत्पत्ति क्षीर-समुद्र से है, जो शिवजी के मुकुट पर अलंकार की तरह विराजमान रहते हैं, मैं उन चन्द्र देव को प्रणाम करता हूँ.

धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्

कुमारं शक्ति हस्तं तं मंगलं प्रणमाम्यहम्।

पृथ्वी के उदर से जिनकी उत्पत्ति हुई है, विद्युत पुंज के समान जिनकी प्रभा है, जो हाथों में शक्तिधारण किये रहते हैं, उन मंगल देव को मैं प्रणाम करता हु।

प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम्।

सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम्

प्रियंगु की कली की तरह जिनका श्याम वर्ण है, जिनके रूप की कोई उपमा नहीं है, उन सौम्य और गुणों से युक्त बुध को मैं प्रणाम करता हूँ।

देवानां च ऋषीणां च गुरुं कांचनसन्निभम्।

बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम्

अर्थ - जो देवताओं और ऋषियों के गुरु हैं, कंचन के समान जिनकी प्रभा है, जो बुद्धि के अखण्ड भण्डार और तीनों लोकों के प्रभु हैं, उन बृहस्पति को मैं प्रणाम करता हूँ.

हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम्

सर्वशास्त्र प्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम्।

अर्थ - तुषार, कुन्द अथवा मृणाल के समान जिनकी आभा है, जो दैत्यों के परम गुरु हैं, उन सब शास्त्रों के अद्वितीय वक्ता शुक्राचार्यजी को मैं प्रणाम करता हूँ.

नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्।

छायामार्तण्डसम्भूतं तं नमामि शनैश्चरम्।

अर्थ - नील अंजन के समान जिनकी दीप्ति है, जो सूर्य भगवान के पुत्र तथा यमराज के बड़े भ्राता हैं,

अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्

सिंहिकागर्भसम्भूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम्।

अर्थ - जिनका केवल आधा शरीर है, जिनमें महान पराक्रम है, जो चन्द्र और सूर्य को भी परास्त कर देते हैं, सिंहिका के गर्भ से जिनकी उत्पत्ति हुई है, उन राहु देवता को मैं प्रणाम करता हूँ.

पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् ।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम्।

अर्थ - पलाश के फूल की तरह जिनकी लाल दीप्ति है, जो समस्त तारकाओं में श्रेष्ठ हैं, जो स्वयं रौद्र रूप और रौद्रात्मक हैं, ऐसे घोर रूपधारी केतु को मैं प्रणाम करता हूँ.

इति व्यासमुखोद्गीतं यः पठेत्सुसमाहितः ।

दिवा वा यदि वा रात्रौ विघ्नशान्तिर्भविष्यति।

व्यास के मुख से निकले हुए इस स्तोत्र का जो सावधानीपूर्वक दिन या रात्रि के समय पाठ करता है, उसकी सारी विघ्न बाधायें शान्त हो जाती हैं.

नवग्रह स्तोत्र ज्योतिष शास्त्र में नौ खगोलीय पिंडों (नवग्रहों) को समर्पित एक विधा है। जिसमें सूर्य, चंद्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु शामिल हैं। माना जाता है कि इस स्तोत्र का जप करने से कई लाभ मिलते हैं । तथा ग्रहों का सामंजस्य भी बना रहता हैं। नवग्रह स्तोत्र नौ ग्रह देवताओं को प्रसन्न करने के साथ साथ ऊर्जा को भी संतुलित करने का कार्य करता है। ग्रह किसी व्यक्ति की कुंडली में अशुभ ग्रहों की स्थिति के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने में मदद करता है। और समग्र ग्रह सद्भाव को बढ़ावा देता है। नकारात्मक प्रभावों से सुरक्षा नवग्रह स्तोत्र का जप पूजा पाठ करके प्रतिकूल ग्रह के कारण होने वाले नकारात्मक प्रभावों, बाधाओं और चुनौतियों से सुरक्षा चाहते हैं। शास्त्रों में वर्णित हैं की अशुभ ग्रहों की दशा होने से व्यक्ति को समस्या, नुकसान और दुर्भाग्य से उस व्यक्ति की सुरक्षा करता हैं। ज्योतिष में कुछ ग्रहों की स्थिति स्वास्थ्य संबंधी विषयों से भी जुड़ी होती है। माना जाता है कि नवग्रह स्तोत्र का पाठ करने से स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का निदान भी किया जाता हैं। स्वास्थ्य पर हानिकारक ग्रहों के प्रभाव को शांत करने से जातक को अपने कैरियर और सफलता में वृद्धि, शिक्षा और वित्त सहित जीवन के विभिन्न पहलुओं में सफलता और समृद्धि की प्राप्ति होती हैं। माना जाता है कि नवग्रह स्तोत्र का जप सफलता और प्रचुरता के लिए अनुकूल सकारात्मक ग्रह ऊर्जा को आकर्षित करता है। भावनात्मक और मानसिक स्थिरता ग्रहों का प्रभाव किसी के भावनात्मक और मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव डाल सकता है। यह भी माना जाता है कि नवग्रह स्तोत्र नौ दिव्य पिंडों की ऊर्जा में सामंजस्य स्थापित करके और तनाव, चिंता और मानसिक अशांति को कम करके भावनात्मक और मानसिक स्थिरता प्रदान करता रहता है।नवग्रहों के प्रभाव को कम करने के लिए आध्यात्मिकता का भी सहारा लिया जाता हैं। विकास और ज्ञान प्राप्त करने के

लिए नवग्रह स्तोत्र का प्रातः तथा सायंकाल पाठ किया जाता हैं। यह नवग्रहों द्वारा प्रतिनिधित्व की गई दिव्य शक्तियों के साथ उनके संबंध को गहरा करने में मदद करता है। और आंतरिक शांति, भक्ति और आध्यात्मिक विकास को बढ़ावा देता है। दोषों का निवारणः वैदिक ज्योतिष में, कुछ ग्रह संयोजन या दोष किसी के जीवन में प्रतिकूल प्रभाव पैदा कर सकते हैं। दोषों और उनके नकारात्मक परिणामों को कम करने के लिए नवग्रह स्तोत्र का जप एक प्रभावी उपाय माना जाता है।

2.7 षोडश संस्कार पूजन में नवग्रह का वैशिष्ट्य

भारतीय परम्परा में गर्भाधान संस्कार को प्रथम संस्कार के रूप में स्वीकार किया गया है। जातक के जन्म से पहले के तीन संस्कार हैं- गर्भाधान, पुंसवन और सीमन्तोन्नयन। इन तीनो संस्कारो को शुभ मुहूर्त में ही किया जाता है। तीनों संस्कारों को सम्पन्न करने का दायित्व पिता का ही होता है। रजोदर्शन के प्रारम्भ की सोलह रात्रियों में गर्भाधान करना चाहिये। (चार रात्रि को गर्भाधान से सम रात्रियों के विषम रात्रियों में गर्भाधान से कन्या का जन्म होता है। चौथी रात्रि में निषेध हो तो दुःखी पुत्र का जन्म होता है। पाँचवीं रात्रि से सामान्य फल की प्राप्ति होती है, पुत्र या पुत्री कुछ भी प्राप्त हो सकती है। सातवीं रात्रि के गर्भाधान से अल्पायु कन्या होती है। आठवी रात्रि में सुन्दर कन्या उत्पन्न होती है। 10 वी रात्री में उत्कृष्ट पुत्र उत्पन्न होता है। नवमी में दीर्घायु पुत्र तथा ग्यारहवीं रात्रि में श्रेष्ठ कन्या की प्राप्ति होती है। बारहवीं रात्रि में धर्म के साथ चलने वाला पुत्र होता है तथा तेरहवीं रात्रि में सती कन्या उत्पन्न होती है। चौदहवीं रात्रि में सात्त्विक तथा शुभ पुत्र उत्पन्न होता है। पन्द्रहीं रात्रि में लक्ष्मी एवं सौभाग्य से कन्या का जन्म होता है। सोलहवीं रात्रि में दीर्घायु तथा राजा के समान पुत्र होता है। जिस संस्कार को करने से पुत्र की प्राप्ति हो उसे पुंसवन संस्कार कहते हैं। इन संस्कारो का पूजन केसे किया जाता है तथा नवग्रहों का क्या वैशिष्ट्य हैं, इनका विचार करना आवश्यक होता हैं। षोडश संस्कार पूजन में पंचांग पूजन से लेकर नवग्रह पूजन करना आवश्यक होता हैं । क्यों की किसी भी जातक के ऊपर ग्रहों के द्वारा ही कोई ना कोई कष्ट आते है। वो सभी नवग्रहों के द्वारा ही होता हैं, इस स्थिति में पूजन में नवग्रहों का स्थान अति आवश्यक होता है । शास्त्रों मैं पुत्र प्राप्ति के लिए अनेक व्रतों के बारे मैं कहां गया हैं श्रीमद्भागवत पुराण मैं पयोव्रत का उल्लेख मिलता है यहां षोडश संस्कारों के अन्तर्गत गत पुंसवन संस्कार को करने का यही मुख्य उद्देश्य था कि जिसके पास पुत्र न हो वह इस संस्कार का विधि विधान द्वारा पूजन कर उसे पुत्र रत्न की प्राप्ति होती थी।पुंसवन शब्द का वर्णन अथर्ववेद मैं प्राप्त होता हैं। अथर्ववेद के 6/11/11/ में पुंसवन शब्द का वर्णन प्राप्त होता है। जिसका अर्थ हैं पुत्र को जन्म देना है। ऋषि वृहस्पति के अनुसार भी इस संस्कार

का पूजन नवग्रहों के द्वारा विशेष रूप से करने से पुत्र की प्राप्ति होती हैं। भारतीय परम्परा में 16 संस्कारो को करना आवश्यक होता है इन संस्कारो में से एक सीमन्तोन्नयन संस्कार भी होता है जिसके करने से पत्नी की समस्यों को निवारण किया जाता है जिससे की यश की वृद्धि होती है। इस संस्कार को करने से गर्भ का अष्टम मांस का अधिपति बली हो तथा पत्ती पत्नी दोनों का चन्द्रमा बली हो तो उस समय सीमन्तोनयन संस्कार किया जाता हैं। षोडश संस्कारों मैं नामकरण संस्कार को बहुत ही महत्वपूर्ण संस्कार माना जाता है जातकर्म संस्कार के बाद ही नामकरण संस्कार किया जाता है इसका विधान क्या हैं शास्त्रों मैं इसका सम्पूर्ण वर्णन प्राप्त होता हैं मुहूर्त चिंतामणिमणि ग्रंथ मैं आचार्य रामदैवज्ञ जी कहते हैं नामकरण संस्कार वर्णों के अनुसार की जाती है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र इन सभी वर्णों के लिए अलग अलग दिनों मैं ही करना चाहिए जन्म से 11दिन मैं नामकरण संस्कार करना शुभ माना जाता हैं इस संस्कार को 10 दिंन के सूत की समाप्ति पर ग्यारह दिन सूतक को दूर करने तथा बालक का नवीन नाम रखकर विधि विधान पूर्वक षोडशोपचार से पूजन कर नामकरण संस्कार पूजन का कर्मकांड के द्वारा नवग्रहों के वैदिक मंत्रो से करना शास्त्र सम्मत कहा गया हैं। जिसे वैशिष्ट्य कहा जाता है। जातक के जन्म के बाद नामकरणादि होने के पश्चात् जब प्रथम बार बालक को घर से बाहर निकाला जाता है उसे निष्क्रमण संस्कार कहते हैं। सही मुहुर्त अनुसार बालक को घर से बाहर ले जाना ही निष्क्रमण संस्कार कहलाता है। जन्म से बारहवें दिन बिना मुहूर्त विचार के बालक का निष्क्रमण कर, सूर्य नक्षत्र का पूजन कर सूर्य नक्षत्र व देवताओं का दर्शन करावें। यदि बारहवें दिन यह न हो पाये तब 3 मास में मंगल शनि वर्जित वारों व रिक्ता, विष्टि, अमावस्य आदि अशुभ योग से भिन्न शुभ दिन में, अश्विनी, रोहिणी, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, स्वाति, मूल श्रवणा, धनिष्ठा नक्षत्रों में प्रथम निष्क्रमण शुभ है। जातक के जन्म लेने पर किया जाने वाला संस्कार जातकर्म संस्कार कहलाता हैं।इसे नाभि वर्धन भी कहते हैं।नाभि को काटने से पूर्व इस संस्कार का विधि विधान के द्वारा पित्रों को साक्षी कर नांन्दी श्राद्ध के द्वारा पित्रों का पूजन करना चाहिए। जब किसी जातक का जन्म होते ही उसी समय उस जातक का नालछेदन से पूर्व इस संस्कार को करना चाहिये उसके बाद जातक का पूर्वक करना चाहिए अर्थात जातकर्म पितृक। जातक के जन्म के 6वें या आठवें महीने मैं अन्नप्राशन संस्कार पूजन किया जाता है। इस संस्कार मैं जातक को अन्न के द्वारा जातक का मुंह जूठा किया जाता है उस दिन से उसका अन्न लेना प्रारंभ हो जाता हैं। इस संस्कार में भी पंचांग पूजन ,नवग्रह पूजन किया जाता हैं। अन्नप्राशन संस्कार कहते हैं। बालक के नामकरण, निष्क्रमण, भूमि उपवेशन के बाद 6,8,10,12वें महीने में पुत्र को और 5,7,9 वें मास में कन्या को अन्नप्राशन कराने का विधान है। विशेष-उक्त मासों में भद्रा व्यतिपात दोष रहित 1,3,5,7,10,13,15 तिथियों में शुभवार अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा,

पुनर्वसु, पुष्य, हस्त चित्रां स्वाति. अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, रेवती नक्षत्रों में 1,3,4,5,7,9 स्थानों में शुभ ग्रह हो जन्म लग्न या जन्मराशि से अष्टम लग्न या नवांश तथा 12,1,8 लग्न को त्यागकर पाप-शुद्ध दशम भाव इन सभी बातों का विचार कर वैदिक लोकिक मंत्रो के माध्यम से नवग्रह पूजन किया जाता हैं । भारतीय परम्परा मैं षोडश संस्कारों मै कर्णभेद संस्कार को भी महत्वपूर्ण माना जाता है। कर्ण -कान, वेध- छेदन,कान का छेदन ही कर्णवेध कहलाता हैं जिससे की इस संस्कार का विधान पूर्ण हो सके। कर्ण वेध के महत्व के सन्दर्भ मे आचार्य सुश्रुत ने कहा है कि कर्णवेध संस्कार करने से पान से अन्त्रवृद्धि, अण्डकोष वृद्धि आदि का निरोध होता है। इस विद्यारंभ संस्कार के द्वारा बालक को विद्वान बनानें के लिए गुरुके द्वारा ज्ञान दिया जाता है इस दिन से शिक्षा प्रारंभ करते हैं लेखनी पुस्तिका इन सब का पूजन कर यह संस्कार कशुभ दिनों मैं प्रारम्भ किया जाता हैं। शब्दों का ज्ञान अक्षरों के ज्ञान को करनें के लिए विद्यारंभ संस्कार किया जाता हैं। अक्षरारम्भ के उपरान्त विशेष ज्ञान को बढाने वाली किसी भी भाषास्थ विद्या (विशेषतः संस्कृत भाषस्थ विद्या) का प्रारम्भ फाल्गुन मास छोड़कर उत्तरायण 23,5,6,10,11,12 तिथियों में, रवि, बुध, गुरु शुक्र वारों में और अश्विनी आश्लेषा, अ मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों पूर्वा, रेवती इन नक्षत्रों में श्रेष्ठ हैं। अंग्रेजी, फारसी, उर्दू के हो विद्यारम्भ के लिये रवि, मंगल, शनिवार, रिक्ता तिथि, ज्येष्ठा. आश्लेषा, मघा, अपूर्वा, भरणी, कृतिका., विशाखा, आर्द्रा, उत्तराषाढ़ा, शतभिषा, इन नक्षत्रों में शुभ है। इन सभी शुभ समय में किया जाने वाले संस्कार का पूजन कर्मकांड तथा वेद मंत्रो, के द्वारा नवग्रहों की विशेष पूजा की जाती हैं । किसी जातक के जन्म के बाद 5,3,7 वर्षों मैं चूडाकर्म संस्कार करना शुभ माना जाता है शुभ दिन मुहूर्त के अनुसार षोडशोपचार पूजन विधि के द्वारा यह संस्कार सम्पन्न किया जाता हैं।चित्रा, स्वाति, ज्येष्ठा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती नक्षत्रों में करना श्रेष्ठ है। अष्टम भाव शुद्ध होना चाहिये। ज्येष्ठ, चैत्र मास मे न करें। बालक की माता को रने पांच मास की गर्भ स्थिति होने पर 5 वर्ष से न्यून अवस्था के शिशु का मुण्डन करना अशुभ माना जाता है। उपनयन संस्कार मैं बालक को यज्ञोपवीत धारण किया जाता है कुलपुरोहित के द्वारा विधिवत वैदिक मंत्रों के द्वारा इस विधान को किया जाता है। इस संस्कार मैं कुलपुरोहित बालक को मंत्र देकर यह संस्कार पूर्ण कराते हैं। जन्म से 5,8,16, वर्षों मैं वर्णानुसार इस संस्कार को कराया जाता है।उपनयन का अर्थ है समीप यानि गुरु के समीप जाकर के यह संस्कार किया जाता है। उपनयन संस्कार बालक के जन्म से या गर्भ से ब्राह्मण का 8 वें, क्षत्रिय का 11 वें, वैश्य का 12 वें वर्ष में करना श्रेयस्करमाना जाता है। इस समय के व्यतीत हो जाने पर ब्राह्मण 16 वें वर्ष, क्षत्रिय 22 वें वर्ष वैश्य 24 वें वर्ष तक उपनयन संस्कार कर सकते हैं। इस संस्कार में भी नवग्रहों का वैशिष्ट्य दिखाई देता हैं

। वेदारभ के अंतर्गत बालक को वेदों का ज्ञान कराया जाता है।जिससे की वह बालक वेदों को समझ सके प्राय देखा जाय तो वेदारंभ संस्कार को विद्यारंभ संस्कार ही कहा जाता है। क्योंकि विद्या प्राप्ति के पश्चात ही व्यक्ति वेदों तथा अन्य धर्मग्रंथों का अध्ययन करने में सक्षम होता था। तब शिक्षा का महत्त्व वेदाध्ययन की दृष्टि से अधिक था। इस कारण इस संस्कार को विद्यारंभ संस्कार अथवा वेदारंभ संस्कार के रूप में जाना जाता है। वेदों तथा अन्य धर्मग्रंथों के अध्ययन से हमें इन सभी शास्त्रीय ज्ञान के बारे में बारे पूर्ण जानकारी प्राप्त होती थी। इस दृष्टि देखा जायतो इसे वेदारंभ संस्कार के नाम से ही जाना गया है। वेदाध्ययन के महत्त्व को इस प्रकार से प्रकट किया गया है। वेदारंभ संस्कार के पूर्ण होने पर केशांत संस्कार किया जाता है, इस संस्कार को करने से बालक को बताया जाता है कि अब उसे सामजिक जिम्मेदारियों का पालन करना है। केशांत संस्कार का पूजन शास्त्र विधि से कर्मकांड के द्वारा किया जाता हैं। षोडश संस्कार मैं समावर्तन संस्कार का महत्व भी अधिक माना जाता हैं। जब शिशु धीरे धीरे बड़ा होकर गुरुकुल मैं जाकर के गुरु के आश्रम मैं रहकर वेद शास्त्रों का अध्ययन करता है तो अध्ययन पूर्ण होने के पश्चात् वह शास्त्री, आचार्य की शिक्षा प्राप्त यानि स्नातक की शिक्षा प्राप्त कर ब्रह्मचर्य का पालन कर वह घशुभ दिन मैं सूर्य उत्तरायण मैं हो ऐसे समय पर वह विद्यार्थी घर लौटता है उसे समावर्तन संस्कार कहते हैं। इस संस्कार के बाद विद्यार्थी स्नातक कहलाता है गुरुकुल से लोटने पर उस बालक का संस्कार स्नान होता हैं इसे धर्म शास्त्रों मैं समावर्तन कहते हैं।(सम्यक रुप से घर लौटना) ही समावर्तन संस्कार कहलाता हैं। षोडश संस्कार मैं विवाह संस्कार 15 वां संस्कार हैं। जब जातक सभी संस्कारों का विधिवत पालन करते करते आगे बढ़ता हैं तो विवाह संस्कार को भी करना पड़ता हैं। क्योंकि चारों आश्रम गृहस्थ पर ही आधारित हैं जिससे की सृष्टि प्रक्रिया भी चलती रहे ओर सभी जीवों का पालन गृहस्थियों के द्वारा होता रहें सभी आश्रमों में यह श्रेष्ठ आश्रम कहां गया हैं। विवाह संस्कार होने पर धर्म का पालन भी होता हैं। हमारे शास्त्रों में इन संस्कारों के विषय मैं कहां गया हैं। शुभ मास, दिन, लग्न मैं कर्मकांड में शास्त्र विधि से गणेश पूजन ,कलश पूजन , नवग्रह पूजन करने का विधान है। इन सभी षोडश संस्कार पूजन में नवग्रह का वैशिष्ट्य दिखाई देता है।

2.8 सारांश

प्रस्तुत ईकाई मैं हम सभी ने पूजन मैं ग्रहो का वैशिष्ट्य नामक ईकाई का अध्ययन किया। इस ईकाई के माध्यम से नवग्रहों के स्वरूप परिचय, नवग्रहों कि कर्मकांड मैं क्या भूमिका हैं, वैदिक मंत्रों के द्वारा नवग्रहों का पूजन विधान नवग्रहों के स्त्रोत का वैशिष्ट्य तथा षोडश संस्कार पूजन मैन वग्रह का वैशिष्ट्य क्या हैं ?इन सभी के बारे मैं वर्णन किया गया हैं, जिसके द्वारा हमें कर्मकांड मैं पूजनके

विधि तथा नवग्रह का क्या विशेष वैशिष्ट्य हैं, सूर्यादि नवग्रहों का मानव जीवन मैं क्या प्रभाव पड़ता हैं इन सभी के बारे मैं कहा गया हैं। खगोल मैं जो भी ग्रह तारे दिखाई देते है उन सभी का ज्योतिष शास्त्र से कुछ न कुछ संबंध रहा हैं। जिसका संबंध पृथ्वी मैं स्थित मनुष्य पर रहता हैं। इन्हीं सूर्यादि नवग्रहों के द्वारा जातक पर आनेवाली समस्याएं उत्पन्न होती हैं। इनका निवारण कर्मकांड के माध्यम से पूजन के द्वारा किया जाता हैं उसमें भी सूर्यादि नवग्रहों का विशेष पूजन किया जाता हैं। जो नवग्रहों का वैशिष्ट्य कहलाता हैं। इसलिए पूजन मैं सूर्यादि नवग्रहों के वैशिष्ट्य पर विशेष विचार किया जाता हैं।

2.9 पारिभाषिक शब्दावली

1. वैशिष्ट्य विशेष
2. संस्कार - संस्कृत करना अर्थात् विशुद्ध होना
3. कर्णवेध - कान पर छिद्र करना
4. सोम चन्द्र
5. अर्धकायं आधा शरीर
6. रोद्र क्रोध
7. काश्यपेयं जो कश्यप से उत्पन्न हैं
8. क्षीर दूध
9. शक्ति हस्तं जो हाथों मैं शक्ति धारण करते हैं
10. गुरु जीव
11. ज्ञ बुध
12. प्राचीन सबसे पुराना
13. षोडशोपचार सोलह प्रकार से ईश्वर को पूजन सामग्री अर्पित करना
14. ज्ञान कांड ज्ञान के द्वारा जन कल्याण
15. उपासना व्रत तप के द्वारा उपासना
16. लौकिक पोराणिक श्लोकों के द्वारा पूजन
17. वैदिक वेद के मंत्रों से पूजन

2.10 अभ्यास प्रश्न

1. शुभ ग्रह कोन कोन होते हैं।
2. सित किस ग्रह का पर्यायवाची हैं

3. षोडश संस्कार पूजन में किसका वैशिष्ट्य हैं
4. पलास के फूल की दीप्ती केसे होती हैं
5. वैशिष्ट्य किसे कहते हैं।
6. नवग्रह मन्त्र किस वेद से लिया गया हैं
7. पोरोहित्य कर्म किसे कहते हैं।
8. संस्कारों की संख्या हैं।
9. भगवान सूर्य का गोत्र हैं।
10. गुरु ग्रह का वर्ण क्या हैं।

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. गुरु,चन्द्र,बुध,शुक्र,
2. शुक्र ग्रह का
3. नवग्रहों का
4. लाल
5. जो वस्तु या कार्य विशेष होती है वह वैशिष्ट्य कहलाती हैं।
6. शुक्लयजुर्वेद से
7. कर्मकांड को ही पौरोहित्य कर्म कहते हैं।
8. 16 संस्कार
9. काश्यप गोत्र
10. पीत वर्ण

2.12 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

6. पंचदेव पूजन पद्धति
7. नित्यकर्म पूजा प्रकाश
8. कर्मठ गुरु
9. पूजा भास्कर
10. कर्मकांड प्रदीप,

2.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. नवग्रहों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये।
2. षोडश संस्कार पूजन में नवग्रह के वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।
3. नवग्रह पूजन विधि का विस्तार पूर्वक प्रतिपादन कीजिये।
4. नवग्रह वैशिष्ट्य क्या हैं? विस्तार पूर्वक स्पष्ट कीजिये

इकाई - 3 नवग्रहों का वैदिक एवं पौराणिक मन्त्र

इकाई की संरचना –

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मन्त्र किसे कहा जाता है
3.4 ज्योतिष की दृष्टि से नवग्रहों का सामान्य परिचय
3.5 नवग्रहों के वैदिक, तान्त्रिक, नाम, एवं पौराणिक मन्त्र-
3.6 सारांश
3.7 सहायक पाठ्य सामग्री
3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई BAKA(N)-221 के तृतीय खण्ड के तृतीय इकाई नवग्रहों का वैदिक एवं पौराणिक मन्त्र नामक शीर्षक से है। मन्त्र क्या है, मननात् त्रायते यस्मात्तस्मान्मन्त्र उदाहृतः अर्थात् जिसके मनन, चिन्तन एवं ध्यान द्वारा संसार के सभी दुःखों से रक्षा, मुक्ति एवं परम आनन्द प्राप्त होता है -वही मन्त्र है। इसी प्रकार से नवग्रहों के वैदिक,तांत्रिक, पौराणिक व नाम मन्त्रो को आप इस इकाई के द्वारा आप समझने में सहायक रहेंगे। साथ ही नवग्रहों के स्तोत्रों का भी अध्ययन भी आप इस इकाई में करेंगे।

3.2 उद्देश्य

- ❖ मन्त्र किसे कहा जाता है, उसे समझने में सहायक हों सकेंगें।
- ❖ नवग्रहों के वैदिक व तंत्रोक्त मंत्रों को जान सकेंगें।
- ❖ नवग्रहों के नाम व पौराणिक मंत्रों को जान सकेंगें।
- ❖ नवग्रहों के स्तोत्रों को सरल रूप में समझ पायेंगें।

3.3 मन्त्र किसे कहा जाता है

मन्त्र की परिभाषा-

मन्त्र-तत्त्व को जानने, पहिचानने एवं हृदयंगम करने के लिए हमारे ऋषियों एवं आचार्यों ने इसको परिभाषित किया है। सभी धर्म, सभी सम्प्रदाय, उनके संस्थापक, ऋषियों, आचायों एवं सद्गुरुओं ने अपने-अपने अनुसार मन्त्र की परिभाषाएँ दी है। यहाँ हम केवल तन्त्रागम एवं मन्त्रशास्त्र में प्रतिपादित मन्त्र की प्रमुख परिभाषाओं की चर्चा करेंगे; जिनसे मन्त्र-तत्त्व को समझने में आसानी रहेगी

(i) "मननात् त्रायते यस्मात्तस्मान्मन्त्र उदाहृतः" अर्थात् जिसके मनन, चिन्तन एवं ध्यान द्वारा संसार के सभी दुःखों से रक्षा, मुक्ति एवं परम आनन्द प्राप्त होता है -वही मन्त्र है ।

(ii) "मन्यते ज्ञायते आत्मादि येन" अर्थात् जिससे आत्मा और परमात्मा का ज्ञान (साक्षात्कार) हो वही मन्त्र है।

(iii) "मन्यते विचार्यते आत्मादेशो येन" अर्थात् जिसके द्वारा आत्मा के आदेश (अन्तरात्मा की आवाज) पर विचार किया जाये वही मन्त्र है।

(iv) "मन्यते सत्क्रियन्ते परमपदे स्थिताः देवताः" अर्थात् जिसके द्वारा परमपद में स्थित देवता का सत्कार (पूजन / हवन आदि) किया जाय वही मन्त्र है।

(v) मननं विश्वविज्ञानं त्राणं संसारबन्धनात् ।

यतः करोति संसिद्धो मन्त्र इत्युच्यते ततः ॥

अर्थात् - यह ज्योतिर्मय एवं सर्वव्यापक आत्मतत्त्व का मनन है और यह सिद्ध होने पर रोग, शोक, दुःख, दैन्य, पाप, ताप एवं भय आदि से रक्षा करता है इसलिए मन्त्र कहलाता है।

(vi) "मननात्तत्त्वरूपस्य देवस्यामित तेजसः। त्रायते सर्वदुः खेभ्यस्तस्मान्मन्त्र इतीरितः ॥" अर्थात् - जिससे दिव्य एवं तेजस्वी देवता के रूप का विन्तन और समस्त दुःखों से रक्षा मिले वही मन्त्र है।

(vii) "मननात् त्रायते इति मन्त्रः" अर्थात् जिसके मनन, चिन्तन एवं ध्यान आदि से पूरी-पूरी सुरक्षा एवं सुविधा मिले वही मन्त्र है।.

(viii) "प्रयोगसमवेतार्थस्मारकाः मन्त्राः" अर्थात् अनुष्ठान एवं पुरश्चरण के पूजन, जप एवं हवन आदि में द्रव्य एवं देवता आदि के स्मारक और अर्थ के प्रकाशक मन्त्र है।

(xi) "साधकसाधनसाध्यविवेकः मन्त्रः" अर्थात् साधना में साधक, साधन एवं साध्य का विवेक ही मन्त्र कहलाता है।

(x) "सर्वे बीजात्मकाः वर्णाः मन्त्राः ज्ञेया शिवात्मिकाः" अर्थात् सभी बाजात्मक वर्ण मन्त्र हैं और वे शिव का स्वरूप हैं।

(ix) "मन्त्रो हि गुप्त विज्ञानः" अर्थात् मन्त्र गुप्त विज्ञान है, उससे गूढ़ से गूढ़ रहस्य प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार मन्त्र तत्त्व को समझने और समझाने के लिए परिभाषा के माध्यम से एक निरन्तर प्रयास किया गया है। यह विषय अपने आप में बड़ा ही गम्भीर है। सागर के समान इसकी थाह पाना कठिन है। फिर भी मेरी राय में मन्त्र की एक व्यापक परिभाषा यह है कि "जो शब्द मन को विषयों से तार दे वही उसका मूल मन्त्र है।

3.4 ज्योतिष की दृष्टि से नवग्रहों का सामान्य परिचय

सूर्य-

प्रथम ग्रह हैं सूर्य जिन्हें ग्रहों का राजा कहा जाता है। ज्योतिष में सूर्य को आत्मा का कारक माना जाता है। इसके साथ ही कुण्डली में सूर्य को पिता का कारक भी माना जाता है। ज्योतिष में सूर्य को सफलता व सम्मान का कारक कहा जाता है। सूर्य प्रभावी हो तो जातक अपने जीवन में यश प्राप्त करता है। इसके साथ ही वह ओजस्वी व प्रतापी होता है।

चंद्र-

चन्द्र एक देवता हैं, इनको सोम के रूप में भी जाना जाता है। नवग्रहों में चंद्रमा को शीतलता और शांति का सूचक माना गया है। ज्योतिष शास्त्र में चन्द्रमा को माता का कारक ग्रह माना गया है। उन्हें जवान, सुंदर, गौर, द्विबाहु के रूप में जाना जाता है।

मंगल-

मंगल ग्रह को संस्कृत में अंगारक भी कहा जाता है, जिसका अर्थ है जो लाल रंग का हो। इन्हें भौम यानि 'भूमि का पुत्र' भी कहते हैं। ये ग्रहों के सेनापति हैं,युद्ध के देवता हैं और ब्रह्मचारी हैं। ज्योतिष में मंगल ग्रह को पराक्रम का कारक माना जाता है, साथ ही भाई का कारक भी होता है।

बुध-

बुध को ग्रहों में राजकुमार की संज्ञा दी जाती है। बुध, चन्द्रमा और बृहस्पति की पत्नी तारा के पुत्र हैं। चंद्रमा के तारा को बलात संबंध बना कर गर्भवती करने से उत्पन्न बुध रजो गुण वाले हैं। उन्हें शांत, सुवक्ता और हरे रंग में प्रस्तुत किया जाता है। उनके हाथों में एक कृपाण, एक मुगदर और एक ढाल होती है।

बृहस्पति-

बृहस्पति, देवताओं के गुरु हैं, शील और धर्म के अवतार हैं, प्रार्थनाओं और बलिदानों के मुख्य प्रस्तावक हैं, जिन्हें देवताओं के पुरोहित के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। वे पीले या सुनहरे रंग के हैं और एक छड़ी, एक कमल और अपनी माला धारण करते हैं। गुरु संतान, विवाह, धन, शिक्षा, धर्म, करियर आदि के कारक ग्रह माने गए हैं।

शुक्र-

शुक्र भृगु और उशान के बेटे का नाम है और वे दैत्यों के शिक्षक और असुरों के गुरु हैं। प्रकृति से वे राजसी हैं और धन, खुशी और प्रजनन का प्रतिनिधित्व करते हैं। शुक्र ग्रह को काम व सुख के कारक ग्रह माने जाते हैं। भौतिक सुख-साधनों का कारक ग्रह शुक्र को माना गया है।

शनि-

शनि ज्योतिष में नौ मुख्य खगोलीय ग्रहों में से एक है। इसकी प्रकृति तमस है और कठिन मार्गीय शिक्षण, करियर और दीर्घायु को दर्शाता है। सूर्य और छाया के पुत्र हैं। उन्हें काले रंग में, काला लिबास पहने, एक तलवार, तीर और दो खंजर लिए हुए, एक काले कौए पर सवार दिखाया जाता है। ज्योतिष में शनि ग्रह को आयु, दुख, तकनीकी का कारक माना जाता है।

राहु-

ये राक्षसी सांप का मुखिया है जो सूर्य व चंद्रमा को निगलते हुए ग्रहण को उत्पन्न करता है। ज्योतिष में राहु ग्रह को कठोर वाणी, जुआ, दुष्ट कर्म, त्वचा के रोग, धार्मिक यात्राएं आदि का कारक

कहा गया है। ज्योतिष में राहु ग्रह को एक क्रुर ग्रह माना जाता है। ये आठ काले घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले रथ पर सवार तमस असुर है।

केतु-

केतु ग्रह को वैदिक ज्योतिष में एक अशुभ ग्रह माना जाता है। केतु को आम तौर पर एक छाया ग्रह के रूप में जाना जाता है। उसे राक्षस सांप की पूंछ के रूप में देखा जाता है। माना जाता है कि मानव जीवन पर इसका एक जबरदस्त प्रभाव पड़ता है और पूरी सृष्टि पर भी। कुछ विशेष परिस्थितियों में यह किसी को भी प्रसिद्धि के शिखर पर पहुंचने में मदद करता है, और प्रकृति में तमस है। ज्योतिष में केतु को आध्यात्म, वैराग्य, मोक्ष तथा तांत्रिक विद्या कारक माना गया है।

3.5 नवग्रहों के वैदिक, तान्त्रिक, नाम, एवं पौराणिक मन्त्र-

सूर्य का वैदिक मन्त्र-

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्न- मृतम्मर्त्यश्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ।

(यजु .33। 43, 34। 31)

तान्त्रिक मन्त्र-

१. ॐ घृष्णिः सूर्यादित्योम ।
२. ॐ घृणिः सूर्य आदित्य श्री ।
३. ॐ हां ही ही सः सूर्याय नमः ।
४. ॐ ही ही सूर्याय नमः ।

नाम मन्त्र-

ॐ घृणि सूर्याय नमः ।

पौराणिक मन्त्र-

ॐ जवाकुसुम संकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।
तमो ऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ।।

चन्द्रमा का वैदिक मन्त्र-

ॐ इमन्देवाऽअसपत्न ँ सुवध्वम्महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।
इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै व्विशऽएष वोऽमीराजा सोमोस्माकम्ब्राह्मणाना राजा।

(यजु .10। 18)

तान्त्रिक मन्त्र -

(i) ॐ ऐं क्लीं सोमाय नमः।
(ii) ॐ श्रीं श्रीं श्री चन्द्रमसे नमः।
(iii) ॐ श्रीं श्रीं चन्द्रमसे नमः।

नाममन्त्र-

ॐ सों सोमाय नमः

पौराणिक मन्त्र-

ॐ दधिशंखतुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम्। नमामि शशिनं सोमं शंभोर्मुकुटभूषणम्॥

मंगल का वैदिक मन्त्र-

ॐ अग्निम्मूर्द्धा दिवः ककुत्पत्तिः पृथिव्याऽअयम्। अपारेता ँ सि जिन्त्वति। (यजु .3।12)

तान्त्रिक मन्त्र-

(i) ॐ हां हंसः खं खः।
(ii) ॐ हूं श्री मंगलाय नमः।
(iii) ॐ कां की की सः भौमाय नमः।

नाम मन्त्र-

ॐ अं अंगारकाय नमः।

पौराणिक मन्त्र-

ॐ घरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्।
कुमारं शक्तिहस्तं तं मंगलं प्रणमाम्यहम्॥

बुध का वैदिक मन्त्र-

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते स ँ सृजेथामयञ्च अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्त्विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥ (यजु .15।54)

तान्त्रिक मन्त्र-

(i) ॐ ऐं स्त्रीं श्रीं बुधाय नमः ।
(ii) ॐ ब्रां व्रीं व्रौं सः बुधाय नमः ।
(iii) ॐ स्त्री स्त्रीं बुधाय नमः।

नाम मन्त्र-
ॐ बुं बुधाय नमः ।

पौराणिक मन्त्र-
ॐ प्रियंगुकलिकाश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् ।
सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥

बृहस्पति का वैदिक मन्त्र-

ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्य्योऽअर्हाद्युमद्विभात्ति क्रतुमज्जनेषु यद्दीदयच्छवसऽऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणन्धेहि चित्रम् । (यजु .26।3)

तान्त्रिक मन्त्र-
ॐ ऐं क्रीं दृहस्पतये नमः ।
ॐ ग्रां ग्रीं ग्रौं सः गुरवे नमः।
ॐ श्रीं श्री गुरवे नमः ।

नाम मन्त्र-
ॐ बृं बृहस्पतये नमः ।

पौराणिक मन्त्र-

ॐ देवानां च ऋषीणां च गुरुं कांचनसन्निभम् ।
बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ॥

शुक्र का वैदिक मन्त्र-

ॐ अन्नात् परिस्रुतो रसम्ब्रह्मणा व्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं व्विपान ँ शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयो मृतम्मधु । (यजु .19।75)

तान्त्रिक मन्त्र-

(i) ॐ ह्रीं श्रीं शुकाय नमः ।
(ii) ॐ द्रां दी दौं सः शुक्राय नमः ।
(iii) के वस्त्रं मे देहि शुक्राय स्वाहा ।

नाम मन्त्र-

ॐ शुं शुक्राय नमः ।

पौराणिकमन्त्र-

ॐ हिमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ।

शनि का वैदिक मन्त्र-

ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये शंय्योरभिस्रवन्तु नः । (यजु .36।12)

तान्त्रिक मन्त्र-

(i) ॐ ऐं ह्रीं श्री शनैश्चराय नमः ।
(ii) ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः शनये नमः ।
(iii) ॐ क्लीं क्लीं शनये नमः ।

नाममन्त्र-

ॐ शं शनैश्चराय नमः ।

पौराणिक मन्त्र-

ॐ नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् ।
छायामार्तण्डसंभूतंतं नमामि शतैश्चरम् ॥

राहु का वैदिक मन्त्र-

ॐ कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृध: सखा। कया शचिष्ठया वृता॥ (यजु. 36।4)

तान्त्रिक मन्त्र-

(i) ॐ ऐं ही राहवे नमः ।
(ii) ॐ भां श्रीं श्रीं सः राहवे नमः ।
(iii) ॐ हीं हीं राहवे नमः ।

नाम मन्त्र-

ॐ रां राहवे नमः ।

पौराणिक मन्त्र -

ॐ अर्धकायं महावीर्य चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।
सिंहकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥

केतु का वैदिक मन्त्र-

ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथा:॥ (यजु. 29।37)

तान्त्रिक मन्त्र-

(i) ॐ ह्रीं केतवे नमः ।
(ii) ॐ खां खीं सी सः केतवे नमः ।
(iii) ॐ की की चेतवे नमः ।

नाम मन्त्र-

ॐ के केतवे नमः ।

पौराणिक मन्त्र-

ॐ पलाशपुष्यसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम्।
रौद्र रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम्॥

ग्रहों के स्तोत्र-

ग्रह शान्ति के अनुष्ठान में ग्रहों के स्तोत्रों का पाठ किया जाता है। ग्रह के अनिष्ट या प्रतिकूलफल की शान्ति के लिए भी उस ग्रह के स्तोत्रपाठ का विधान है।

आदित्य हृदय स्तोत्र-

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम्। रावणं चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम्॥ १॥
दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतोरणम्। उपगम्याब्रवीद् राममगस्त्यो भगवाँस्तदा॥ २॥
राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम्। येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसे॥ ३॥
आदित्यहृदयं पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम्। जयावहं जपेन्नित्यमक्षयं परभं शिवम्॥ ४॥
सर्वमंगलमांगल्यं सर्वपापपणाशनम्। चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम्॥ ५॥
रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम्। पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम्॥ ६॥
सर्वदेवात्मको होष तेजस्वी रश्मिभावनः। एष देवासुरगणाल्लोकान्पाति गभस्तिभिः॥ ७॥
एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापति। महेन्द्रो धनदः कालो यमः सोमो ह्यपांपतिः।
पितरो वसवः साध्या अश्विनी मरुतो मनुः। वायुर्वहिः प्रजाप्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः॥ ९॥
आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्। सुवर्ण सदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः॥ १०॥
हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्त सप्तिर्मरीचिमान्। तिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डको ऽशुमान्॥ ११॥
हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनो ऽहस्करो रविः। अग्निगर्भो ऽदितेः पुत्रः शंखः शिशिरनाशनः॥ १२॥
व्योमनाथस्तमोभेदीऋग्यजुःसामपारगः। घनवृष्टिरपांमित्रो विन्ध्यवीथीप्लवंगमः॥ १३॥
आतपी मण्डली मृत्युः पिंगलः सर्वतापनः। कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः॥ १४॥
नक्षत्रग्रताराणामधिपो विश्वभावनः। तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तुते॥ १५॥
नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नमः। ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः॥ १६॥
जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः। नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः॥ १७॥
नम उग्राय वीराय सारंगाय नमो नमः। नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तुते॥ १८॥
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे। भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः॥ १६॥
तमोघ्नाय हिमघ्नाम शत्रुघ्नायामितात्मने। कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः॥ २०॥
तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे। तमस्तमो ऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे॥ २१॥
नाशयत्येष वै भूतं तमेष सृजति प्रभुः। पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः॥ २२॥
एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः। एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम्॥ २३॥

देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च। यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ॥ २४ ॥
एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च। कीर्तयन् पुरुषः कश्चिन्नावसीदति राघव ॥ २५ ॥
पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम्। एतत्त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यति ॥ २६ ॥

चन्द्र स्तोत्र-

ॐ श्वेताम्बर:श्वेतवपु:। किरीटी श्वेतधुतिर्दण्डधरोद्विबाहु:। चन्द्रोऽम्रतात्मा वरद: शशाऽक: श्रेयांसि महं प्रददातु देव: ॥1॥
दधिशऽकतुषाराभं क्षीरोदार्नवसम्भवम्। नमामि शशिनंसोमंशम्भोर्मुकुटभूषणम् ॥2॥
क्षीरसिन्धुसमुत्पन्नो रोहिणीसहित: प्रभु:। हरस्य मुकटावास बालचन्द्र नमोस्तु ते ॥3॥
सुधामया यत्किरणा: पोषयन्त्योषधीवनम्। सर्वान्नरसहेतुंतं नमामि सिन्धुनन्दनम् ॥4॥
राकेशं तारकेशं च रोहिणी प्रियसुन्दरम्। ध्यायतां सर्वदोषघ्नं नमामीन्दुं मुहुर्मुह: ॥5॥

मंगलस्तोत्र-

रक्ताम्बरो रक्तत्वपुः किरीटर्य, चतुर्मुखो मेघगदो गदाधृक् ।धरासुतः शक्तिपरश्च शूली, सदा मम स्याद् वरद प्रशान्तः॥१ ॥
धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्तेजसमप्रभम्। कुमारं शक्तिहस्तं च मंगलं प्रणमाम्यहम् ॥ २ ॥
ऋणहत्रे नमस्तुभ्यं दुःखदारिद्रनाशिने। नमामि द्योतमानाय सर्वकल्याणकारिणे ॥ ३ ॥
देवदानवगन्धर्वयक्ष राक्षसपन्नगाः। सुखं यान्ति यतस्तस्मै नमो घरणि सूनवे ॥ ४ ॥
यो वक्रगतिमापन्नो नृणां विघ्नं प्रयच्छति। पूजितः सुखसौभाग्यं तस्मै ध्यासूनवे नमः ॥ ५ ॥
प्रसादं कुरु मे नाथ मंगलप्रद मंगल। मेषवाहन रुद्रात्मन् पुत्रान् देहि घनं यशः ॥ ६ ॥

बुध स्तोत्र-

पीताम्बरः पीतवपु किरीटी, चतुर्भुजो देवदुःखापहर्ता। धर्मस्य धृक् सोमसुतः सदा मे, सिंहाधिरूढ़ो वरदो बुधश्च ॥ १ ॥
प्रियंगुकनकश्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम्। सौम्यं सौम्यगुणोपेतं नमामि शशिनन्दनम् ॥ २ ॥
सोमसुनुर्बुधश्चैव सौम्यः सौम्यगुणान्वितः। सदा शान्तः सदा क्षेमो नमामि शशिनन्दनम् ॥ ३ ॥
उत्पातरूपी जगतां चन्द्रपुत्रो महाद्युतिः। सूर्यप्रियकरोविद्वान् पीडां हरतु मे बुधः ॥ ४ ॥
शिरीषपुष्पसंकाशः कपिलीशो युवा पुनः। सोमपुत्रो बुपश्चैव सदा शान्तिं प्रयच्छतु ॥ ५ ॥
श्यामः शिरालश्चकलाविधिज्ञः,कौतूहली कोमलवाग्विलासी।
रजोधिको मध्यमरूपधृक् स्या-दाताम्रनेत्रो द्विजराजपुत्रः ॥ ६ ॥
अहो चन्द्रासुत श्रीमन् मागधर्मासमुद्भवः। अत्रिगोत्रश्चतुर्बाहुः खड्गखेटकधारकः ॥ ७ ॥
गदाघरो नृसिंहस्थः स्वर्णनाभसमन्वितः। केतकीद्रुमपत्राभः इन्द्रविष्णुप्रपूजितः ॥ ८ ॥
ज्ञेयो बुधः पण्डितश्च रोहिणेयश्च सोमजः। कुमारो राजपुत्रश्च शैशवे शशिनन्दनः ॥ ९ ॥
गुरुपुत्रश्च तारेयो विबुधो वोधनस्तथा। सौम्यः सौम्यगुणोपेतो रत्नदानफलप्रदः १० ।

एतानि बुधनामानि प्रातः काले पठेन्नरः बुद्धिर्विवृद्धितां याति बुधपीडा न जायते ॥ ११ ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नुयाच्छिवसन्निधिः ॥ १४ ॥

बृहस्पति स्तोत्र-

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी, चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः ।
दधाति दण्डं च कमण्डलुं च, तथाक्षसूत्रं वरदो ऽस्तु मह्यम् ॥ १ ॥
नमः सुरेन्द्रवन्द्याय देवाचार्याय ते नमः । नमस्त्वनन्तसामर्थ्य वेदसिद्धान्तपारग ॥ २ ॥
सदानन्द नमस्तेस्तु नमः पांडाहराय च । नमो वाचस्पते तुभ्यं नमस्ते पीतवाससे ॥ ३ ॥
नमोऽहितीयरूपाय लम्बकूर्वाय ते नमः । नमः प्रष्टनेत्राय विप्राणां पतये नमः ॥ ४ ॥
नमो भार्गवशिष्याय विपन्नहितकारकः । नमस्ते सुरसैन्याय विपन्नत्राणहेतवे ॥ ५ ॥
विषमस्थस्तथा नृणां सर्वकष्टप्रणाशनम् । प्रत्यहं तु पठेद्यो वै तस्य कामफलप्रदम् ॥ ६ ॥

शुक्र स्तोत्र-

नमस्ते भार्गवश्रेष्ठ देव दानव पूजित । वृष्टिरोधप्रकर्ते च वृष्टिकत्रे नमो नमः ॥ १ ॥
विद्यया जीवयच्छुक्रो नमस्ते भृगुनन्दन । परेण तपसा शुद्ध शंकरो लोकशंकरः ॥ २ ॥
प्राप्तो विद्यां जीवनाख्यां तस्मै शुक्रात्मने नमः । नमस्तस्मै भगवते भृगुपुत्राय वेधसे ॥ ३ ॥
देवयानीपितस्तुभ्यं वेदवेदाङ्गपारगः । यस्योदये जगत्सर्वं मंगलार्ह भवेदिह ॥ ४ ॥
तारामण्डलमध्यस्थ रवभासा भसिताम्बरः । त्रिपुरावासिनो दैत्यान् शिवबाणप्रपीडितान् ॥ ५ ॥
अस्तं याते ह्यरिष्टं स्यात्तस्मै मंगलरूपिणे । ययातिगुरवे तुभ्यं नमस्ते कविनन्दन ॥ ६ ॥
बलिराज्यप्रदो जीवस्तस्मै जीवात्मने नमः । भार्गवाय नमस्तुभ्यं पूर्व गीर्वाणवन्दितम् ॥ ७ ॥
जीवपुत्राय यो विद्यां प्रादात्तस्मै नमोनमः । नमः शुक्राय काव्याय भृगुपुत्राय धीमहि ॥ ८ ॥
नमः कारणरूपाय नमस्ते कारणात्मने । स्तवराजमिदं पुण्यं भार्गवस्य महात्मनः ॥ ९ ॥
यः पठेच्छुणुयाद् वापि लगते वांछितं फलम् । पुत्रकामो लभेत्पुत्रान् श्रीकामो लभते श्रियम् ॥ १० ॥
राज्यकामो लभेद्राज्यं स्त्रीकामः स्त्रियमुत्तमाम् । भृगुवारे प्रयत्नेन पठितव्यं समाहितैः ॥ ११ ॥
अन्यवारे तु होरायां पूजयेद् भृगुनन्दनम् ।रोगातों मुच्यते रोगाद् भयार्तो मुच्यते भयात् ॥ १२ ॥
यद्यठ्यर्थयते वस्तु तत्तत्प्राप्नोति सर्वदा । प्रातः काले प्रकर्तव्या भृगुपूजा प्रयत्नतः ॥ १३ ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नुयाच्छिवसन्निधिः ॥ १४ ॥

शनि स्तोत्र-

नम: कृष्णाय नीलाय शितिकण्ठनिभाय च । नम: कालाग्निरूपाय कृतान्ताय च वै नम: ॥1॥
नमो निर्मासदेहाय दिर्घश्मश्रुजटाय च । नमो विशालनेत्रायशुष्काय भयाक्रते ॥2॥
नम: पुष्कलगात्राय स्थूलरोम्ने च वै पुन: । नमो दीर्घाय शुष्काय कालदंष्ट्राय ते नम: ॥3॥
नमस्ते कोटराक्षाय दुर्निरीक्षाय वैनम: । नमो घोराय रौद्राय भीषणाय करालिने ॥4॥

नमस्ते सर्वभक्षाय बलीमुखाय ते नम: । सूर्यपुत्र नमस्तेऽस्तु भास्कराऽभयदाय च ।।5।।
अधोद्रष्टे नमस्तेऽस्तु संवर्तकाय ते नम: । नमो मन्दगते तुभ्यं निस्त्रिंशाय नमोऽस्तुते ।।6।।
तपसा दग्ध देहाय नित्यं योगरताय च । नमो नित्यं क्षुधार्ताय अतृप्ताय च वै नम: ।।7।।
ज्ञानचक्षुष्मते तुभ्यं काश्यपात्मजसूनवे । तुष्टो ददासि वै राज्यं रुष्टो हरसि तत्क्षणात् ।।8।।
देवासुरमनुष्याश्य सिद्धविद्याधरोरगा: । त्वया विलोकिता: सर्वे नाशं यान्ति च मूलतः ।।9।।
प्रसादं कुरु मे देव वरार्होऽस्मात्युपात्रत: । मया स्तुत: प्रसन्नास्य: सर्व सौभाग्य दायक: ।।10।

राहु स्तोत्र-

राहुर्दानवमंत्री च सिंहिकाचित्तनन्दनः। अर्धकायः सदा क्रोधी चन्द्रादित्य विमर्दनः ।।1।।
रौद्रो रुद्रप्रियो दैत्यः स्वर्भानु र्भानुभीतिदः। बहराज सुधापायी राकातिथ्यभिलाषुकः ।।2।।
कालदृष्टिः कालरूपः श्री कण्ठहृदयाश्रयः। विधुतुदः सैहिकेयो घोररूपो महाबलः ।।3।।
ग्रहपीड़ाकरो दंष्टो रक्तनेत्रो महोदरः। पंचविंशति नामानि स्मत्वा राहूं सदानरः ।।411
यः पठेन्महती पीड़ा तस्य नश्यति केवलम् । आरोग्यं पुत्रमतुलां श्रियं धान्यं पशूस्तथा ।।5।।
ददाति राहुस्तस्मै यः पठेत स्तोत्र मुत्तमम्। सततं पठेत यस्तु जीवेद्वर्षशतं नरः ।।6।।

केतु स्तोत्र-

केतुः कालः कलयिता धूमकेतुर्विवर्णकः। लोककेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुर्भयप्रदः ।।1।।
रौद्रो रुद्रप्रियो रुद्रः क्रूरकर्मा सुगन्धक्। फलाशधूमसंकाशश्चित्रयज्ञोपवीतधृक् ।।2।।
तारागणविमर्दो च जैमिनेयो बहाधिपः। पंचविंशति नामानि केतुर्यः सततं पठेत् ।।3।।
तस्य नश्यंति बाधाश्चसर्वाः केतुप्रसादतः। धनधान्यपशूनां च भवेद् वद्विर्नसंशयः ।।4।।

3.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन द्वारा आप यह जानने में सफल हों सके होंगे कि मन्त्र शब्द का अर्थ क्या है, मन्त्र शब्द का अर्थ होता है, "मननात्तत्त्वरूपस्य देवस्यामित तेजसः । त्रायते सर्वदुः खेभ्यस्तस्मान्मन्त्र इतीरितः,अर्थात् - जिससे दिव्य एवं तेजस्वी देवता के रूप का विन्तन और समस्त दुःखों से रक्षा मिले वही मन्त्र है। "मननात् त्रायते इति मन्त्रः" अर्थात् जिसके मनन, चिन्तन एवं ध्यान आदि से पूरी-पूरी सुरक्षा एवं सुविधा मिले वही मन्त्र है। साथ ही ज्योतिष के आधार पर नवग्रह किन-किन के कारक होते है। तथा उनका ज्योतिषीय दृष्टि से क्या महत्व है। इस इकाई में आपने नवग्रहों के वैदिक मन्त्रों को , उनके पौराणिक मन्त्रों को, नाम मन्त्रों को, तथा ग्रहों के तन्त्रोक्त मन्त्रों का अध्ययन किया होगा। इस इकाई में प्रत्येक ग्रहों के स्तोत्रों को अलग-अलग रूप में लिखने का प्रयास किया

गया है, जिससे छात्रों को किसी भी ग्रह के स्तोत्र पाठ में कोई परेशानी न हों व उसे आसानी से समझ सकें।

बोध प्रश्न-

1. ज्योतिष में सूर्य को कारक माना जाता है।

क. मन का ख. आत्मा का ग. पराक्रम का घ. मृत्यु का

2. बुध का नाम मन्त्र है।

क. ॐ ऐं स्त्रीं श्रीं बुधाय नमः। ख. ॐ ब्रां व्रीं व्रौं सः बुधाय नमः।

ग. ॐ स्त्री स्त्रीं बुधाय नमः। घ. ॐ बुं बुधाय नमः।

3. शनि का पौराणिक मन्त्र है।

क. ॐ ऐं ह्रीं श्री शनैश्चराय नमः। ख. ॐ शं शनैश्चराय नमः।

ग. ॐ नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्।
छायामार्तण्डसंभूतंतं नमामि शतैश्चरम्॥

घ. ॐ क्लीं क्लीं शनये नमः।

5. शुक्र का तंत्रोक्त मन्त्र है।

क. ॐ द्रां दी दौं सः शुक्राय नमः। ख. ॐ शुं शुक्राय नमः।

ग. ॐ शुक्राय नमः घ. ॐ भृगुवे नमः

6. चन्द्रमा कारक है।

क. पत्नी का ख. आत्मा का ग. चाची का घ. माता का

3.7 सहायक पाठ्य सामग्री

अनुष्ठान प्रकाश
मन्त्र जप विधि
कर्मठ गुरु
मन्त्र सागर
मन्त्र पूजा विधान

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 कर्मठ गुरु मुकुन्द बल्लभ मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी
2 मन्त्र रहस्य डा० नारायण दत्त हिन्द पुस्तक भण्डार दिल्ली
3 मन्त्र सागर सावित्री शर्मा चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी

4 वैदिक मन्त्र विद्द्या डा० चमन लाल गौतम संस्कृति सस्थान ख्वाजा क़ुतुब वेदनगर बरेली
5 सर्व देव पूजा पद्यती शिव दत्त मिश्र चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख, 2. घ, 3 ग, 4 क, 5. घ,

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. ज्योतिष कि दृष्टि से ग्रहों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।
2. नवग्रहों के वैदिक, तांत्रिक, पौराणिक मन्त्रों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
3. चन्द्र व मंगल के स्तोत्रों को लिखिये।

इकाई – 4 नवग्रह जप विधि

इकाई की संरचना –

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 जप किसे कहा जाता है
4.4 नवग्रह जप कि विधि
4.4.1 वैदिक जप विधि
4.4.2 तंत्रोक्त जप विधि
4.4.3 पौराणिक जप मन्त्र
4.5 सारांश
4.6 सहायक पाठ्य सामग्री
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई BAKA(N)-221 के तृतीय खण्ड के चतुर्थ इकाई नवग्रह जप विधि नामक शीर्षक से है। इस इकाई में जप क्या है, तथा नवग्रहों का जप किस प्रकार से किया जाता है, व नवग्रहों का वैदिक, तंत्रोक्त, तथा पौराणिक मन्त्रों का जप किस विधि के द्वारा किया जाता है। इसका सम्पुर्ण विवरण इस इकाई में दिया गया है।

4.2 उद्देश्य

- ❖ जप क्या है, इसे समझ सकेंगे।
- ❖ नवग्रहों की वैदिक जप विधि को सरल रूप में समझ सकेंगे।
- ❖ नवग्रहों की तंत्रोक्त जप विधि को सरल रूप में समझ सकेंगे।
- ❖ नवग्रहों की पौराणिक जप विधि को सरल रूप में समझ सकेंगे।

4.3 जप किसे कहा जाता है

किसी मन्त्र कि पुनरावृति की जाय या किसी भी वाक्य या मन्त्र को या देवता के नाम को बार-बार उच्चारित किया जाता है उसे जप कहा जाता है ।अग्नि पुराण में जप का वर्णन इस प्रकार दिया गया है:-

"ज" का अर्थ है जन्म चक्र को रोकना।

"प" का अर्थ है समस्त पापों का नाश करना।

अर्थात, 'जप' का अर्थ उस प्रक्रिया से है जिसमें समस्त पापों को हटाकर, पुनर्जन्म को समाप्त कर दिया जाता है। वस्तुतः जप ध्यान की एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है। ध्यान के समय ईश्वर के विचार को देर तक बनाए रखने के लिए जप नामक क्रिया की जाती है। जप में किसी शब्द का उच्चारण किया जाता है, जिससे कि ईश्वर का स्मरण किया जा सके। क्योंकि 'ओम' ईश्वर का निज वा व्यक्तिवाचक नाम है, इसलिए ईश्वर का स्मरण करने के लिए 'ओम' शब्द का जप सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। जप करने का लाभ उठाने के लिए एक बात का ध्यान रखना अति आवश्यक है। वह है-जप किए जाने वाले शब्द के अर्थ का चिन्तन। अर्थ के चिन्तन के बगैर किया गया जप व्यर्थ है। प्रत्येक प्राणी क्लेशों आदि से छूटना चाहते हैं, इसलिए परमात्मा नाम की सत्ता ऐसी होनी चाहिए, जसको क्लेश, दुख आदि छू भी न पाएं। हमारे सभी कर्म किसी न किसी कामना की पूर्ति के लिए ही होते हैं। इसलिए ईश्वर नाम की सत्ता ऐसी होनी चाहिए, जिसमें कोई भी कामना न हो, परन्तु वह हमारी कामनाओं की पूर्ति करने में समर्थ हो। परमात्मा कर्म निस्वार्थ भाव से करता है, इसलिए उसके कर्म संस्कारों को पैदा करने वाले नहीं होते। उसका ज्ञान, बल और सामर्थ्य अनन्त है। वह परमात्मा ही हमारे हित को पूर्णता से जानता है, इसलिए केवल वह ही हमें सत्य प्रेरणा दे सकता है। वह हमारा वास्तविक मित्र है और कालातीत होने के

कारण, वह गुरुओं का भी गुरु है। इस बात पर सभी एकमत हैं कि परमात्मा का हम आत्माओं के साथ पिता पुत्र जैसा सम्बन्ध है। जैसे पिता अपने पुत्र की सभी कालों में व सभी स्थितियों में रक्षा व पालन करता है, उसी तरह ईश्वर भी सतत हमारी रक्षा व पालन कर रहा है। हमारे जीवन के आधार कहे जाने वाले प्राणों को देने वाला भी वह ईश्वर ही है। उसकी रक्षा और पालना के बिना हम जीवित नहीं रह सकते। ध्यान की प्रारम्भिक अवस्था में जप के माध्यम से परमात्मा के इन्हीं गुणों का चिन्तन किया जाना चाहियें। जब भी जप में उच्चारित शब्द के अर्थ का लोप हो जाए, तो हमें फिर से उस शब्द का उच्चारण करना होता है। धीरे-धीरे उच्चारित शब्द के अर्थ को स्मरण रख पाने की अवधि में वृद्धि होती जाती है। उच्चतर अवस्था में बार बार जप करने की आवश्यकता नहीं रहती। उच्चतम अवस्था में जप करने की ही आवश्यकता नहीं रहती। बिना किसी शारीरिक प्रयास के मन में जप चलता ही रहता है। इसी को 'मानसिक जप' वा 'अजपा जप' कह दिया जाता है। 'मानसिक जप' की अवस्था को प्राप्त करने से पहले एक अवस्था ऐसी भी आती है, जब शब्द के उच्चारण में ध्वनि की आवश्यकता नहीं रहती, बल्कि केवल मात्र होंठ हिलाने से हम उस शब्द के अर्थ का चिंतन कर पाते हैं। इसे 'उपांशु जप' कहा जाता है। कुछ समय के अभ्यास के पश्चात शाब्दिक जप सरलता से उपांशु जप और मानसिक जप में परिवर्तित हो जाता है।परिपक्व अवस्था में जैसे ही जिस मन्त्र का उच्चारण किया जाएगा, वैसे ही सम्बन्धित अर्थ व भाव आने लग जाएंगे। यही स्थिति सच्चे ईश्वर-प्रणिधान वा भक्ति की अवस्था है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि 'जप' ईश्वर-प्रणिधान अथवा भक्ति की अवस्था को प्राप्त करने का **आवश्यक साधन** है।

मन्त्र जाप करते समय किन नियमों का पालन करना आवश्यक है वो निम्न प्रकार से है –

मंत्र जाप करने से पहले शुद्धि बेहद आवश्यक है।

इसलिए दैनिक क्रिया से निवृत्त होने और स्नानादि करने के बाद ही जाप करना चाहिए।

जाप करने वाले स्थान को भी पूरी तरह से साफ करना चाहिए।

एक साफ सुथरे आसन पर बैठकर ही जाप करना चाहिए।

जाप के बाद आसन को इधर-उधर न छोड़े। आपको आसन को एक जगह संभाल कर रख देना चाहिए।

मंत्र जाप करने के लिए कुश का आसन अच्छा रहता है। क्योंकि कुश ऊष्मा का सुचालक हैं और मंत्र जाप करते समय ऊर्जा हमारे शरीर में भी समाहित होती है।

आपको जाप किसी शांत स्थान पर ही करना चाहिए। ताकि जाप में किसी प्रकार की कोई बाधा न पड़े और ध्यान न भटके।

आपको जाप प्रातः काल पर करना चाहिए, क्योंकि इस समय का वातावरण शांत, शुद्ध और सकारात्मक रहता है।

यदि आप हमेशा जाप करते हैं, तो प्रतिदिन एक ही स्थान और एक निश्चित समय पर भी मंत्र जाप करें।

आपको जाप करते समय माला को खुला नहीं रखना चाहिए। माला सदैव गौमुखी के अंदर ढक कर ही रखें।

जाप की माला खरीदते समय उसे भलिभांति देख लें, कि उसमें 108 मनके है या नहीं। और हर मनके के बीच में एक गांठ अवश्य लगी होनी चाहिए। ताकि जाप करने के दौरान संख्या में कोई त्रुटि न हो। आप जिस देवी-देवता का जाप कर रहे हैं, उनकी छवि को मन में रखकर ही जाप करें।

4.4 नवग्रह जप कि विधि

4.4.1 वैदिक जप विधि

किसी भी पूजा या जप को शुरू करने से पहले शारीरिक शुद्धि का होना परम आवश्यक है।
शरीर शुद्धि :-
ओम् अपवित्रः पवित्रो वा सपर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत पुण्डरीकाक्षं स वाध्याभ्यन्तरः सुचिः ॥
ॐ पुण्डटीकाक्षः पुनातु - 3 इत्यात्मानं पूजन सामग्रीं च सम्प्रोक्ष्म

उसके बाद आंतरिक शुद्धि के लिये शास्त्रों में आचमन का विधान बताया गया है।
आचमनम् -
ॐ केशवाय नमः,
ॐ नारायणाय नमः,
ॐ माधवाय नमः।
तीन बार आचमन कर आगे दिये मंत्र पढ़कर हाथ धो लें।
ॐ हृषीकेशाय नमः॥

फिर बिना आसन शुद्धि के किसी भी कार्य में आपका मन नहीं लग सकता इसके लिये भी आचार्यों ने शास्त्रों में विधिवत बताया है किस प्रकार से हम अपने आसन को किन मन्त्रों के द्वारा शुद्ध कर सकते है।जो निम्न प्रकार से हैं-
आसन शुद्धिः -
पृथ्वीति मन्त्रस्य मेरुपृष्ठ रुद्र ऋषिः सुतलं छन्दः कुर्मो देवता आासनोपवेशने विनियोगः ।
ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका देवि ! त्वं विष्णुना धृता॥
त्वं च मां देवि नित्यं पवित्र कुरु चासनम् ॥
इति आसनं सम्प्रोषय निम्नलिखित मंत्रः गन्यपुस्पाक्षतैः पूजयेत्
ॐ ही आधारशक्तये नमः।
ॐ विं. विमलासनाय नमः।
ॐ पं परमा सुरवासनाय नमः ।
ॐ कुर्मभि नमः।

ॐ अनंताय नमः।

उसके बाद शास्त्रों में शिखा बन्धन नियम को बताया गया है।

शिखा बन्धनम् –

ॐ चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजः समन्विते।
तिष्ठ देवि शिखाबद्धे तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे।।

नवग्रहों की जप संख्या एवं हवन हेतु दशांश संख्या

ग्रह	जप संख्या	हवन हेतु दशांश संख्या
सूर्य	70000	700
चन्द्रमा	11000	1100
मंगल	10000	1000
बुध	9000	900
बृहस्पति	19000	1900
शुक्र	16000	1600
शनि	23000	2300
राहु	18000	1800
केतु	18000	1800

फिर हम किसी भी देवता की पूजा या जप को शुरू कर सकते है। यहाँ सर्व प्रथम नवग्रहों के वैदिक मंत्रों की जप विधि के बारे में बताया जा रहा है-

अथ वेदोक्तसबीजनवग्रहमन्त्रजप विधि-

सूर्य –

हाथ में जल को लेकर विनियोग निम्न मन्त्र के द्वारा किया जाता है

ॐ आकृष्णेति मन्त्रस्य हिरण्यस्तूपाङ्गिरस ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्यप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।।

उसके बाद शरीर के अंगों का न्यास करने का विधान है

अथ देहाङ्गन्यास -

शिर पर हाथ लगायें- आकृष्णेन शिरसि ।

फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें- रजसा ललाटे।

उसके बाद मुख पर हाथ लगायें- वर्तमानो मुखे।

फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें- निवेशयन् हृदये।

उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें	अमृतं नाभी।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें	मर्त्य च कट्याम् ।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें	हिरण्ययेन सविता ऊर्व्वोः ।
फिर जंघा व उरु के मध्य भाग पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	रथेना जान्वोः।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें	देवो याति जंघयोः ।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें	भुवनानि पश्यन् पादयोः ।

अंग न्यास के बाद कर न्यास करने का विधान है,जिसमे हाथों की अंगुलियों के द्वारा इस न्यास को किया जाता है जो निम्नलिखित प्रकार से है।

अथ करन्यासः ॥

आकृष्णेन रजसा अंगुष्ठाभ्यां नमः । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।

वर्तमानो निवेशयन् तर्जनीभ्यां नमः । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

अमृतं मयै च मध्यमाभ्यां नमः । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

हिरण्ययेन अनामिकाभ्यां नमः । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

सविता रथेना कनिष्ठिकाभ्यां नमः । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से सबसे छोटी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

देवो याति भुवनानि पश्यन् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

एवं हृदयादिन्यासः ॥

आकृष्णेन रजसा हृदयाय नमः । सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।

वर्तमानो निवेशयन् शिरसे स्वाहा। इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।

अमृतं मयं च शिखायै वषट् । इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।

हिरण्येन कवचाय हूँ। इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।

सविता रथेना नेत्रत्रयाय वौषट् । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।

देवो याति भुवनानि पश्यन् अस्त्राय फट् । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-

फिर सूर्य का अपने मन ध्यान करते है।

पद्मासनः पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिः सप्ततुरङ्गवाहनः ।
दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः॥

सूर्यगायत्री-

आदित्याय विद्महे दिवाकराय धीमहि तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्॥

जपमन्त्र

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः- ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मर्त्यश्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रीं ह्रीं ह्राँ ॐ सूर्याय नमः ॥

अथ चन्द्रमन्त्रः-

इमन्देवेतिमन्त्रस्य गौतम ऋषिः, सोमो देवता, विराट् छन्दः, सोमप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः । ॥

अथ देहाङ्गन्यासः ॥

शिर पर हाथ लगायें-	इमं देवा शिसि ।
फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	असपत्न १७ ललाटे ।
इस मन्त्र से नासिका पर हाथ लगायें-	सुवध्वं नासिकायाम् ।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-	महते क्षत्राय मुखे ।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	महते ज्येष्टट्याय हृदये ।
इस मन्त्र से पेट पर हाथ लगायें-	महते जानराज्याय उदरे।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें	इन्द्रस्येन्द्रियाय नाभौ ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें	इममुष्य कटघाम् ।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें	पुत्रममुष्यै मेढू । पुत्रमस्यै ऊर्वोः।
फिर जंघा व उरु के मध्य भाग पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	विशऽएष वो जान्वोः।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें	मीराजा जंघयोः ।
फिर इस मन्त्र से पिंडलियों का स्पर्श करें	सोमोऽस्माकं गुल्फयोः।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें	ब्राह्मणाना १७ राजा पादयोः ॥

अथ कर- न्यासः ॥

इमन्देवाऽअसपत्न ँ सुवध्वं अंगुष्ठाभ्यां नमः ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
महते क्षत्राय महते ज्येष्ठधाय तर्जनी० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय मध्यमा० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै अनामिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

विशऽएष वो मीराजा कनिष्ठिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से सबसे छोटी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

सोमोऽ- स्माकं ब्राह्मणाना राजा करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

एवं हृदयादिन्यासः ।

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

इमन्देवाऽअसपत्न ँ सुवध्वं हृदयाय० । सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।

महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय शिरसे० । इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।

महते जान- राज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय शिखायै० । इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।

इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै कवचा० । इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।

विशऽएष वो मी राजा नेत्रत्रयाय० । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।

सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ँ राजा अस्त्राय फट् । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-

श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डधरो द्विबाहुः ।
चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः ॥ १ ॥

चन्द्रगायत्री

ॐ अत्रिपुत्राय विद्महे सागरोद्भवाय धीमहि तन्नश्चन्द्रः प्रचोदयात् ॥ १ ॥

जपमन्त्रः ॐ श्रर्थां श्रीं श्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ इमन्देवाऽअ- सपत्न ँ सुवध्वम्महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय महते जानराज्ज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै व्विशऽएष वोऽमीराजा सोमोस्माकम्ब्राह्मणाना राजा । ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः श्रीं श्रीं श्राँॐ सोमाय नमः।

अथ भौममन्त्रः-

अग्निर्मद्धेति मन्त्रस्य विरूपाङ्गिरस ऋषिः, अग्निर्देवता, गायत्री छन्दः, भौमप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥

अथ देहांगन्यासः ॥

शिर पर हाथ लगायें- अग्निः शिरसि ।

फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें- मूर्द्धा ललाटे।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें- दिवः मुखे ।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें- ककुत् हृदये।
इस मन्त्र से पेट पर हाथ लगायें- पतिः उदरे।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें पृथिव्या नाभौ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें अयं कटथाम् ।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें अपा जान्वोः।
फिर इस मन्त्र से पिंडलियों का स्पर्श करें रेता १७ सि गुल्फयोः।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें जिन्वति पादयोः ॥।

अथ करन्यासः ॥

इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।

अग्निर्मूर्द्धा अंगुष्ठा०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।

दिवः ककुत् तर्जनी० इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

पतिः मध्यमा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

पृथिव्या अयम् अनामिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

अपा ँ रेतासि कनिष्ठिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से सबसे छोटी अंगुली का स्पर्श किया जाता है। जिन्वति करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

एवं हृदयादिन्यासः ।

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

अग्निमूर्द्धा हृदयाय० । सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।

दिवः ककुत् शिरसे० । इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।

पतिः शिखाये० । इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।

पृथिव्या अयं कवचा० । इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।

अपाॅरेता सि नेत्रत्र० । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।

जिन्वति अस्त्राय० ॥ उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-

रक्ताम्बरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगतो गदाभृत् । धरासुतः शक्तिधरश्च शूली सदायमस्मद्वरदः प्रसन्नः ॥ १ ॥ भौमगायत्री-ॐ क्षितिपुत्राय विद्महे लोहितांगाय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात् । जपमन्त्रः ॐ काँ क्रीं क्रों सः भूर्भुवः स्वः ॐ अग्निर्म्मूर्द्धा दिवः ककुत्पत्तिः पृथिव्याऽअयम् । अपारेता ँ सि जिन्त्वति । ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः क्रों क्रीं क्राँ ॐ भौमाय नमः ॥

सौम्यमन्त्र –

उद्बुध्यस्वेति मन्त्रस्य परमेष्ठी प्रजापति ऋषिःत्रिष्टुप्छन्दः, बुधो देवता, बुधप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥

अथ देहाङ्गन्यासः ॥

शिर पर हाथ लगायें-	उद्बुध्यस्वेति शिरसि ।
फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	अग्ने प्रति ललाटे।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-	जागृहि त्वं मुखे ।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	इष्टापूर्ते हृदये ।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें	ससृजेथामयञ्च नाभौ ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें	अस्मिन्त्सधस्थे कट्याम् ।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें	अद्ध्युत्तरस्मिन् ऊर्वोः ।
फिर जंघा व उरु के मध्य भाग पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	व्विर्खे देवा जान्वोः ।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें	व्विर्खे देवा जान्वोः ।
फिर इस मन्त्र से पिंडलियों का स्पर्श करें	यजमानश्च गुल्फयोः ।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें	सीदत पादयोः ॥

अथ कर- न्यासः ।॥

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वम् अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
इष्टापूर्ते तर्जनी० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ससृजेथामयं च मध्यमा० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
अस्मिन्त्सघस्थेऽद्ध्युत्तरस्मिन् अनामिका० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
विश्वेदेवा यजमानश्च कनिष्ठिका० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

सीदत करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

एवं हृदयादिन्यासः ।

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वं हृदयाय० । सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।

इष्टापूर्ते शिरसे० । इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।

स ँ सृजेथामयञ्च शिखायै० । इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।

अस्मिन्त्सघस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् कवचा० । इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।

विश्वेदेवा यजमानश्च नेत्रत्र० । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।

उ सीदत अस्त्रा० । सके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्च हारी ।
चर्मासिधृक् सोमसुतो गदाभृत् सिहाधिरूढो वरदो बुधश्च ॥ १ ॥
बुधगायत्री ॐ चन्द्रपुत्राय विद्महे रोहिणीप्रियाय धीमहि तन्नो बुधः प्रचो- दयात् ॥ १ ॥
जप मन्त्रः- ॐ ब्राँ ब्रीं ब्रौं सः भूर्भुवः स्वः ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते स ँ सृजेथामयञ्च अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्न्विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥
ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ब्रों ब्रीं ब्राँॐ सौम्याय नमः ।

अथ बृहस्पतिमन्त्र-

बृहस्पतेति मन्त्रस्य गृत्समद ऋषिः, अनुष्टुप्- छन्दः, ब्रह्मा देवता, बृहस्पतिप्रीत्यर्थे जपे विनियोगाः ॥
अथ देहांगन्यासः ॥

शिर पर हाथ लगायें- बृहस्पते शिरसि ।
फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें- अतियदर्यो ललाटे ।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें- अर्हाद्युमत् मुखे ।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें- विभाति क्रतुमत् हृदये ।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें जनेषु नाभौ ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें यद्दीदयत् कटयाम् ।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें शवसऋतप्रजात ऊर्वोः ।

फिर जंघा व उरु के मध्य भाग पर इस मन्त्र से हाथ लगायें- तदस्मासु द्रविणं जान्वोः ।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें तदस्मासु द्रविणं जान्वोः ।
फिर इस मन्त्र से पिंडलियों का स्पर्श करें घेहि गुल्फयोः ।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें चित्रं पादयोः ॥॥

अथ करन्यासः ॥

बृहस्पतेऽअतियदों अंगुष्ठा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
अर्हाद्युमत् तर्जनी० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
विभाति क्रतुमत् मध्यमा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
जनेषु अनामिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
यद्दीदयच्छवसऋतप्रजाततदस्मासु कनिष्ठिका०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
द्रविणं घेहि चित्रम् करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

एवं हृदयादिन्यासः ।
कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।
बृहस्पतेऽअतियदयों हृदयाय० । सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।
अर्हाद्युमत् शिरसे० । इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।
विभाति क्रतुमत् शिखायै० । इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।
जनेषु कवचा० । इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।
यद्दीद- यच्छवसऋतप्रजात्तत्तदस्मासु नेत्रत्र० । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।
द्रविणं घेहि चित्रम् अस्त्राय फट् ॥ उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-

पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः । तथाऽक्ष- सूत्रं च कमण्डलुञ्च दण्डञ्च विभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम् ॥ गुरुगायत्री- अंगिरोजाताय विद्महे वाचस्पतये धीमहि तन्नो गुरुः प्रचोदयात् ॥

जप- मन्त्रःॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः भूर्भुवः स्वः ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्य्योऽअर्हाद्युमद्विभात्ति क्रतुमज्जनेषु यद्दीदयच्छवसऽऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणन्धेहि चित्रम्। ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रौं ह्रीं ह्राँ ॐ बृहस्पतये नमः।

शुक्रमन्त्र-

अन्नात्परिस्रुतेति मन्त्रस्य प्रजापतिऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, शुक्रो देवता, शुक्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः॥

अथ देहांगन्यासः॥

शिर पर हाथ लगायें-	अन्नात्परिस्रुतः शिरसि।
फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	रसं ब्रह्मणा ललाटे।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-	व्यपिबत्क्षत्रं मुखे।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	पयः सोमं हृदये।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें	प्रजापतिः नाभौ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें	ऋतेन सत्यं कटथाम्।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें	इन्द्रियं विपान गुदे।
फिर जंघा व उरु के मध्य भाग पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	शुक्रं वृषणे।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें	अन्धस ऊर्वोः इन्द्रस्येन्द्रियं जानुनोः।
फिर इस मन्त्र से पिंडलियों का स्पर्श करें	इदं पयः गुल्फयोः।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें	अमृतं मधु पादयोः॥

अथ करन्यासः॥

अन्नात्परिस्रुतो रसं अंगुष्ठा०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ब्रह्मणा व्यपिवत्क्षत्रं तर्जनी०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
पयः सोमम्प्रजापतिः मध्यमा०	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं अनामिका०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
विपानठ० शुक्रमन्धस कनिष्टिका ०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतं मधु करतल०।	उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

एवं हृदयादिन्यासः।

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

अन्नात्परिस्रुतो रसं हृदया० । सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।

ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं शिरसे० । इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।

पयः सोमं प्रजापति. शिखाये० इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।

ऋतेन सत्यमिन्द्रियं कवचा० । इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।

विपानठं शुक्रमन्धस नेत्रत्र० । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।

इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु अस्त्राय० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-

श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तः ।
तथाऽक्षसूत्रञ्च कमण्डलुञ्च दण्डञ्च विभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम् ॥
भृगुगायत्री - ॐ भृगुवंशजाताय विद्महे श्वेतवाहनाय धीमहि तन्नः कविः प्रचोदयात् ॥
जपमन्त्रः ॐ द्रौं द्रीं द्रौं सः भूर्भुवः स्वः ॐ अन्नात् परिस्रुतो रसम्ब्रह्मणा व्यपिवत्क्षत्रम्पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं व्विपानठं शुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयो मृतम्मधु । ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः द्रों द्रीं दां
ॐ शुक्राय नमः ।

शनिमन्त्र- शन्नो देवीति मन्त्रस्य सिन्धुद्वीप ऋषिः, गायत्रीछन्दःआपो देवता, शनिप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥

न्यास-

शिर पर हाथ लगायें-	शन्नो शिरसि ।
फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	देवीः ललाटे ।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-	अभिष्टय मुखे ।
इस मन्त्र से कंठ भाग को स्पर्श करें	आपो कण्ठे।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	भवन्तु हृदये।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें	पीतये नाभौ ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें	शं कट्याम् ।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें	योः ऊर्वोः ।

इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें अभि जान्वोः ।
फिर इस मन्त्र से पिंडलियों का स्पर्श करें स्रवन्तु गुल्फयीः ।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें नः पादयोः ॥

करन्यास-

शन्नो देवीः अंगुष्ठा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
अभिष्टये तर्जनी० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
आपो भवन्तु मध्यमा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
पीतये अनामि० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
शंय्योरभि कनिष्ठि० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
स्रवन्तु नः करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

एवं हृदयादिन्यास-

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

शन्नो देवीः हृदयाय० । सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।
अभिष्टये शिरसे० । इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।
आपो भवन्तु शिखाये ० । इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।
पीतये कवचा० । इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।
शंय्योरभि नेत्रत्र० । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।
स्रवन्तु नः अस्त्राय० ।। उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-

नीलाम्बरः शूलधरः किरीटी गृध्रस्थितस्त्रासकरो धनु- ष्मान् ।
चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रशान्तः सदाऽस्तु मह्यं वरदोऽल्पगामी॥

शनिगायत्री- कृण्णांगाय विद्महे रविपुत्राय धीमहि तन्नः सौरिः प्रचोदयात् ॥

जपमन्त्रः खाँ खीं खौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये शंय्योरभिस्रवन्तु नः । ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः खौं खीं खाँॐ शनैश्चराय नमः ॥

अथ राहुमन्त्र-

कया नश्चित्रेति मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः, गायत्री छन्दः, राहुर्देवताः, राहुप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥

अथ देहांगन्यासः ॥

शिर पर हाथ लगायें-	कया शिरसि ।
फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	न ललाटे ।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-	चित्र मुखे ।
इस मन्त्र से कंठ भाग में स्पर्श करें	आ कंठे ।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	भुव हृदये ।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें	दूती नाभौ ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें	सदा कट्याम् ।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें	वृधः मेढे ।
फिर जंघा व उरु के मध्य भाग पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	सखा ऊब्वोंः ।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें	कया जान्वोः ।
फिर इस मन्त्र से पिंडलियों का स्पर्श करें	शचिष्ठया गुल्फयोः ।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें	वृता पादयोः ॥

अथ करन्यासः ॥

कया नः अंगुष्ठा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।

चित्र आ तर्जनी० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

भुवदूती मध्यमा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

सदावृधः सखा अनामिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

कया कनिष्ठिका० ॥ इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

शचिष्टया वृता करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

हृदयादि० ।

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

कयानः हृदयाय० ।	सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।
चित्र आ शीर्षे० ॥	इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।
भुवदूती शिखायै० ।	इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।
सदावृधः सखा कवचा० ।	इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।
कया नेत्रत्र० ।	इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।
शुचिष्ठया वृता अस्त्राय० ॥	उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम्-नीलाम्बरो नीलवपुः किरीटी करालवक्त्रः करवालशूली।
चतुर्भुजश्चक्रधरश्च राहः सिंहाधिस्यो' बरदोऽस्तु मह्यम्॥ १ ॥
राहु गायत्री- नीलवर्णाय विद्महे सैहिकेयाय धीमहि तन्नो राहुः प्रचोदयात्॥
जपमन्त्रः ॐ भ्राँ श्रीं श्रीं सः ॐ भूर्भुवः स्वः कया नश्चित्रःआभुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया व्वृता ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः श्रीं श्रीं श्री राहवे नमः ।

केतुमन्त्र-

केतुं कृण्वन्निति मन्त्रस्य मधुच्छन्द ऋषिः, गायत्री- च्छन्दः, केतुर्देवता, केतुप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥
अथ देहांगन्यासः ॥

शिर पर हाथ लगायें- केतुं शिरसि ।

फिर माथे पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	कृण्वन् ललाटे।
उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-	अकेतवे मुखे।
फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-	पेशो हृदये।
उसके बाद इस मन्त्र से नाभि में हाथ लगायें	मर्या नाभौ।
इस मन्त्र से कटी भाग में स्पर्श करें	अपेशसे कटथाम् ।
इस मन्त्र से उरु भाग को स्पर्श करें	सं ऊर्वोः ।
इस मन्त्र से जंघाओं को स्पर्श करें	उषद्भिः जान्वोः ।
उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें	अजायथाः पादयोः ॥

करन्यास-

केतुं कृण्वन् अंगुष्ठा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
अकेतवे तर्जनी० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
पेशोमर्या मध्यमा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
अपेशसे अनामिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
समुद्भिः कनिष्ठिका० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
अजायथाः करतल० । सके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

हृदयादिन्यास-

कर न्यास हो जाने के उपरांत फिर हृदय आदि पांच अंगों का न्यास करने का विधान है, जो निम्न प्रकार से है।

केतुकृण्वन् हृदयाय नमः। सर्वप्रथम इस मन्त्र से हृदय को स्पर्श किया जाता है।
अकेतवे शिरसे० । इस मन्त्र से सिर को स्पर्श किया जाता है।
पेशोमर्या शिखायै व०। इस मन्त्र से शिखा स्थान को स्पर्श किया जाता है।
अपेशसे कवचाय हुँ। इस मन्त्र से दोनौ हाथों से दोनौ बहुओं को स्पर्श किया जाता है।
समुन्द्भिः नेत्रत्र० । इस मन्त्र से आँखों को स्पर्श किया जाता है।
अजायथाः अस्त्राय फट् ॥ उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दाहिने हाथ को सिर के ऊपरसे घुमा कर ताली मारी जाती है।

अथ ध्यानम् –

धूम्रो द्विबाहुर्वरदो गदाधरो गृध्रासनस्थो विकृताननश्च ।
किरीट- केयूरविभूषितो यः सदाऽस्तु मे केतुगणः प्रशान्तः ॥ १ ॥
केतुगायत्री-अत्रवाय (धूम्राय) विद्महे कपोतवाहनाय धीमहि तन्नः केतुः प्रचोदयात् ।
अथ जप- मन्त्रः- ॐ प्राँ प्रीं प्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः, ॐ केतुङ् कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्य्याऽ- अपेशसे ।
समुषन्द्भिरजायथा। ॐ स्वः, भुवः, भूः, ॐ सः प्रौं प्रीं प्राँ ॐ केतवे नमः ॥

4.4.2 तंत्रोक्त जप विधि-

वेदोक्त जप विधि के बाद यहाँ ग्रहों का तंत्रोक्त विधि के द्वारा जप का विधान का वर्णन किया जा रहा है।

सर्व प्रथम किसी भी जप को प्रारम्भ करने के लिये उस ग्रह के लिये विनियोग लिया जाता है। विनियोग उसे कहा जाता है,जिसमे हम जल को हाथ में ले करके उस ग्रह के ऋषि,उस मन्त्र में जो छन्द है, जो

उसका देवता है उसके निमित्त जल को छोड़ा जाता है।

अथ श्रीसूर्यमन्त्रः ॐ ह्रां ह्रीं सः इति त्र्यक्षरं मन्त्रः ॥ ॐ अस्य श्रीसूर्य- मन्त्रस्य अज ऋषिः, गायत्री छन्दः, सूर्यो देवता, ह्रां बीजम्, ह्रीं शक्तिः, सः कीलकम्, श्रीसूर्यप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

अंगन्यास-

ॐ अज ऋषये नमः शिरसि ।	शिर पर हाथ लगायें
ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे ।	उसके बाद मुख पर हाथ लगायें
ॐ सूर्यदेवतायै नमः हृदि ।	फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें
ॐ ह्रां बीजाय नमः गुह्ये ।	इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः ।	उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें
ॐ सः कीलकाय नमः सर्वाङ्ग ।	इस मन्त्र से सारे शरीर को स्पर्श किया जाता है।

करन्यास-

ॐ आं ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ईहीं तर्ज० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ॐ ह्रीं मध्य० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ऐं ह्रीं अना० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ओं ह्रीं कनि० ।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ अः ह्रीं करतलकरपृ० ।	उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

कर न्यास व हृदयादि न्यास करने के उपरांत सूर्य ग्रह का ध्यान करना चाहिये।

ॐ रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धु, भानुं समस्त- जगतामधिपं भजामि ।
पद्मद्वयाभयवरान्दधतं कराब्जैर्माणिक्य मौलिमरुणाङ्ग- रुचि त्रिनेत्रम् ॥ १ ॥

जप मन्त्र-

ॐ ह्रां ह्रीं सःसूर्याय नमः

चन्द्रमन्त्र-

ॐ स्वों सोमाय नमः (मतान्तरे सौं सोमाय नमः) इति षडक्षरो मन्त्रः ॥।

ॐ, अस्य श्रीसोममन्त्रस्य भृगुऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, सोमो देवता. स्वौं बीजम्, नमः शक्तिः, सोमप्रीतये जपे विनियोगः ।

अंगन्यास-

ॐ भृगुऋषये नमः शिरसि ।	शिर पर हाथ लगायें
ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे ।	उसके बाद मुख पर हाथ लगायें

ॐ सोमदेवतायै नमो हृदि। फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें
ॐ स्वों बीजाय नमः गुह्ये। इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः। उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

करन्यास-
ॐ सां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ॐ सीं तर्जनी०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ सूं मध्य०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ से अनामिका०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ सौं कनि०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ सः करतलकरपृ०। उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यायेत् - ॐ कर्पूरस्फटिकावदातमनिशं पूर्णेन्दु- बिम्बाननं,
मुक्तादामविभूषितेन वपुषा निर्मूलयन्तं तमः।
हस्ताभ्यां कुमुदं वरञ्च दधतं नीलालकोद्भासितं,
स्वीयांकस्थमृगोदिताश्रयगुणं सोमं सुधाब्धि भजे॥ १॥
जप मन्त्र-
ॐ श्रा श्रीं श्रौं चन्द्राय नमः

अथ भौममन्त्रः-
ॐ अं अंगारकाय नमः।
ॐ अस्य श्रीभौममन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, अंगारको देवता, अं बीजं, आपः शक्तिः, अङ्गारकप्रीत्तये जपे विनियोगः।
ॐ ब्रह्माऋषये नमः शिरसि। शिर पर हाथ लगायें
ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-
ॐ अंगारकदेवतायै नमः हृदये। फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-
ॐ अं बीजाय नमः गुह्ये। इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ आपः शक्तये नमः पादयोः। उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

करन्यास-

ॐ आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।

ॐ ईं तर्ज० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ ॐ मध्य० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ ऐं अना० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ ओं कनि० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ अः करतलकरपृ० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यायेत् ॐ नमाम्यंगारकं देवं रक्ताभाम्बरभूषणम् ।
जानुस्थवामहस्ताढ्यं साभयेतरपाणिकम् ।

जप मन्त्र-

ॐ कां की कौं स भौमाय नमः

अथ बुधमन्त्रः-

ॐ वं बुधाय नमः ।

ॐ अस्य श्रीबुधमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, बुधो देवता, बुं बीजं, आपः शक्तिः, बुधप्रीतये जपे विनियोगः ।

ॐ ब्रह्माऋषये नमः शिरसि । शिर पर हाथ लगायें

ॐ पंक्तिरछन्दसे नमः मुखे । उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-

ॐ बुधदेवतायै नमः हृदये। फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें

ॐ बुं बोजाय नमः गुह्ये । इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।

ॐ आपः शक्तये नमः पादयोः । उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

करन्यास-

ॐ बुं अङ्गुष्ठाभ्यां० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।

ॐ बुं तर्ज० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ बुं मध्य० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ बुं अना० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ बुं कनि० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ बुं करतलकरपृ० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यायेत्- ॐ बन्दे बुधं सदा देवं पीताम्बरसुभूषणम् ।
जानुस्थवामहस्ताढधं साभयेतरपाणि- कम् ॥
जप मन्त्र-
ॐ ब्रां ब्रीं ब्रौं सः बुधाय नमः

अथ बृहस्पतिमन्त्रः-

ॐ बृं बृहस्पतये नमः इत्यष्टाक्षरो मन्त्रः । ॐ अस्य श्रीबृहस्पतिमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, बृहस्पतिर्देवता, वृं बीजम्, नमः शक्तिः, श्रीबृहस्पतिप्रीतये जपे विनियोगः ।

ॐ ब्रह्माऋषये नमः शिरसि । शिर पर हाथ लगायें
ॐ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-
ॐ बृहस्पतिदेवतायै नमः हृदये । फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-
ॐ बृं बीजाय नमः गुह्ये । इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ नमः शक्तये नमः पादयोः । उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

कर न्यास-

ॐ ब्राँ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ब्रीं तर्ज० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ब्रू मध्यमा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ब्रें अना० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ब्रों कनि० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ ब्रः करतलकरपृ० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यानम् - तेजोमयं शक्तित्रिशूलहस्तं सुरेन्द्रसंघस्तुतपादपङ्कजम् ।
मेधानिधि मत्स्यगतं द्विवाहु गुरुं भजे मानसपङ्कजेऽहम् ॥ १ ॥
जप मन्त्र-
ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः गुरवे नमः

अथ शुक्रमन्त्रः-

ॐ शं शुक्राय नमः ॐ अस्य श्रीशुक्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, शुक्रो देवता, बीजम्, स्वाहा शक्तिः, श्रीशुक्र- प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास-

ॐ ब्रह्मऋषये नमः शिरसि।	शिर पर हाथ लगायें
ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे।	उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-
ॐ शुक्रदेवतायै नमः हृदये।	फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-
ॐ शं बोजाय नमः गुह्ये।	इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ स्वाहा शक्तये नमः पादयोः।	उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

कर न्यास-

ॐ शुं अङ्गु०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शुं तर्ज०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शुं मध्यमा ०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शुं अना०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शं कनि०।	इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शुं करतलकरपृ०।	उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यान- ॐ सन्तप्तकाञ्चननिभं द्विभुजं दयालु पीताम्बरं घृतसरोरुहकेशयुग्मम्।
क्रौञ्चासनं असुरसेवितपादपद्म शुक्रं भजे द्विनयनं हृदि पङ्कजेऽहम्॥

जप मन्त्र-

ॐ द्रां द्रीं द्रौं स शुक्राय नमः

शनिमन्त्र- ॐ शं शनैश्चराय नमः। ॐ अस्य श्रीशनैश्चरमन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः, गायत्री छन्दः, शनैश्चरो देवता, शं बीजम्, आपः शक्तिः, श्री- शनैश्चरप्रीतये जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास-

ॐ ब्रह्मऋषये नमः शि०।	शिर पर हाथ लगायें
ॐ गायत्रीछन्दसे नमः मुखे।	उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-
ॐ शनैश्चरदेवतायै नमः हृ०।	फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें-
ॐ शं बीजाय नमः गुह्ये।	इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ आपः शक्तये नमः पादयोः।	उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

करन्यास-

ॐ शं अङ्गु० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शं तर्ज० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शं म० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शं अना० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शं कनि० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ शं करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यान-
ॐ नीलांजनाभं मिहिरस्य १ महेश्वरं पाशभुजङ्गपाणिम् ।
सुरासुराणां भयदं द्विबाहु भजे शनि मानसप हस् ॥ १ ॥
जप मन्त्र-
ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः शनये नमः

राहुमन्त्रः-
ॐ रां राहवे नमः । ॐ अस्य श्रीराहुमन्त्रस्य ब्रह्मा- ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, राहुर्देवता, रां बीजम्, वेशः शक्तिः, श्रोराहुप्रीतये जपे विनि० ।
ऋष्यादिन्यास-
ॐ ब्रह्मऋषये नमः शि० । शिर पर हाथ लगायें
ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे । उसके बाद मुख पर हाथ लगायें-
ॐ राहु- देवताये नमः हु० । फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें
ॐ रां बीजाय नमः गुह्ये। इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ वेशः शक्तये नमः पादयोः । उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

करन्यास-
ॐ रां अंगु० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ॐ रां तर्ज० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ रां मध्य० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ रां अना० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ रां कनि० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।

ॐ रां करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यान- वन्दे राहु धूम्रवर्णं अर्धकायं कृताञ्जलम् ।
विकृतास्यं रक्तनेत्रं धूम्रालङ्कारमन्वहम् ॥
जप मन्त्र-
ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः राहवे नमः

केतुमन्त्रः-
ॐ कें केतवे नमः । ॐ अस्य श्रीकेतुमन्त्रस्य श्रोब्रह्मा- ऋषिः, पंक्तिश्छन्दः, केतुर्देवता, कें बीजं, वेशः शक्तिः, श्रीकेतुप्रीतये जपे विनियोगः ।
ऋष्यादिन्यास-
ॐ ब्रह्मऋषये नमः शि० । शिर पर हाथ लगायें
ॐ पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे । उसके बाद मुख पर हाथ लगायें
ॐ केतुर्देवतायै नमः हृ० । फिर हृदय पर इस मन्त्र से हाथ लगायें
ॐ के बीजाय नमः गुह्ये। इस मन्त्र से गुह्य स्थान को स्पर्श किया जाता है।
ॐ वेशः शक्तये नमः पादयोः । उसके बाद इस मन्त्र से पैरों में हाथ लगायें

करन्यास-
ॐ के अङ्गुष्ठा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे का स्पर्श किया जाता है।
ॐ के तर्ज० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से तर्जनी अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ के मध्यमा० । इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से मध्यमा अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ के अना०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से अनामिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ के कर्कान०। इस मन्त्र के द्वारा अंगूठे से कनिष्ठिका अंगुली का स्पर्श किया जाता है।
ॐ के करतल० । उसके बाद इस मन्त्र के द्वारा दोनौ हाथों का एक दूसरे से स्पर्श किया जाता है।

ध्यान-
ॐ वन्दे केतुं कृष्णवर्णं कृष्णवस्त्रविभूषणम् ।
वामोरुन्यस्ततद्धस्तं साभयेतरपाणिकम् ॥२॥
जप मन्त्र-

ॐ स्त्रां स्त्रीं स्त्रौं सः केतवे नमः

4.4.3 पौराणिक जप मन्त्र-

पुराणो के आधार पर नवग्रह जप मन्त्र-

सूर्यः - ओं ग्रहाणामादिरादित्यो लोकरक्षणकारकः ।
विपमस्थानसम्भूतां पीडां हरतु ते रविः ॥ १॥

चन्द्रः- ओं रोहिणीशः सुधामूर्तिः सुधागात्रः सुधाशनः । विषमस्थानसम्भूतां पीडां हरतु ते विधुः ॥ २॥
भौमः -ओं भूमिपुत्रो महातेजा जगतां भयकृत्सदा । वृष्टिकृद् वृष्टिहर्ता च पीडां हरतु ते कुजः ॥ ३॥
बुधः - ओं उत्पातरूपो जगतां चन्द्रपुत्रो महाद्युतिः । सूर्यप्रियकरो विद्वान् पीडां हरतु ते बुधः ॥॥ ४ ॥
बृहस्पतिः-ओं देवमन्त्री विशालाक्षः सदा लोकहिते रतः। अनेकशिष्य- सम्पूर्णः पीडां हरतु ते गुरुः॥ ५॥
भृगुः - ओं दैत्यमन्त्री गुरुस्तेषां प्राणदश्च महामतिः । प्रभुस्ताराग्रहाणाञ्च पीडां हरतु ते भृगुः ॥ ६ ॥
शनिः -ओं सूर्यपुत्रो दीर्घदेहो विशालाक्षः शिवप्रियः । मन्दचारः प्रसन्नात्मा पीडां हरतु ते शनिः ॥ ७ ॥
राहुः- ओं महाशिरा महावक्त्रो दीर्घदंष्ट्रो महाबलः । अतनुश्चोर्ध्वकेशश्च पीडां हरतु ते तमः ॥ ८ ॥
केतुः - ओं अनेकरूपवर्णैश्च शतशोऽथ सहस्रशः । उत्पातरूपो जगतां पीडां हरतु ते' शिखी ॥ ९ ॥
मुथा-मुन्थेश्वरस्य मन्त्र एव मुन्थाया मन्त्रः ॥ १० ॥

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान पाए होंगे किजप की विधा क्या है। वस्तुतः जप ध्यान की एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है। ध्यान के समय ईश्वर के विचार को देर तक बनाए रखने के लिए जप नामक क्रिया की जाती है। जप में किसी शब्द का उच्चारण किया जाता है, जिससे कि ईश्वर का स्मरण किया जा सके। क्योंकि 'ओम' ईश्वर का निज वा व्यक्तिवाचक नाम है, इसलिए ईश्वर का स्मरण करने के लिए 'ओम' शब्द का जप सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। जप करने के क्या नियम होने चाहिये। मंत्र जाप करने के लिए कुश का आसन अच्छा रहता है। क्योंकि कुश ऊष्मा का सुचालक हैं और मंत्र जाप करते समय ऊर्जा हमारे शरीर में भी समाहित होती है। इसी क्रम में आपने यह भी जाना होगा कि ग्रहों की जप संख्या कितनी हो है। तथा ग्रहों के जप किस प्रकार से किया जाता है, यह सब आप इस इकाई में सरल रूप से समझने में सक्षम हो सके होंगे।

बोध प्रश्न

1. सूर्य की जप संख्या है।

क. 10000, ख. 7000, ग. 9000, घ. 6000,

2. मंगल की जप संख्या है।

क. 9000, ख. 19000 ग. 6000, घ. 10000,

3. शनि की जप संख्या है।

क. 23000 ख. 19000 ग. 18000 घ. 25000

4. राहु की दशांश हवन संख्या है

क. 600, ख. 1500 ग. 1800 घ. 900

5. गुरु की दशांश हवन संख्या है

क. 1000, ख. 1600, ग. 1900 घ. 1100

6. बुध की दशांश हवन संख्या है

क. 1600, ख. 1900 ग. 1000, घ. 900

4.6 सहायक पाठ्य सामग्री

अनुष्ठान प्रकाश

मन्त्र जप विधि

कर्मठ गुरु

मन्त्र सागर

मन्त्र पूजा विधान

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 कर्मठ गुरु मुकुन्द बल्लभ मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी

2 मन्त्र रहस्य डा० नारायण दत्त हिन्द पुस्तक भण्डार दिल्ली

3 मन्त्र सागर सावित्री शर्मा चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी

4 वैदिक मन्त्र विद्या डा० चमन लाल गौतम संस्कृति सस्थान ख्वाजा क़ुतुब वेदनगर बरेली

5 सर्व देव पूजा पद्यती शिव दत्त मिश्र चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ख, 2. घ, 3. क, 4. ग, 5. ग, 6. घ,

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. जप किसे कहते है, व जप के क्या नियम हैं, इसका विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

2. सूर्य व मंगल के वैदिक जप विधि का सम्पूर्ण वर्णन कीजिए।

3. बुध, गुरु, व शनि के तंत्रोक्त जप विधि का विस्तारपूर्वक वर्णन करें